# झारखण्ड

## भाषा-अस्मिता संघर्ष

डॉ. शशिभूषण महतो काड़वार
रतन कुमार महतो "सत्यार्थी"



# Jharkhand : Bhasa Asmita Sangharsh

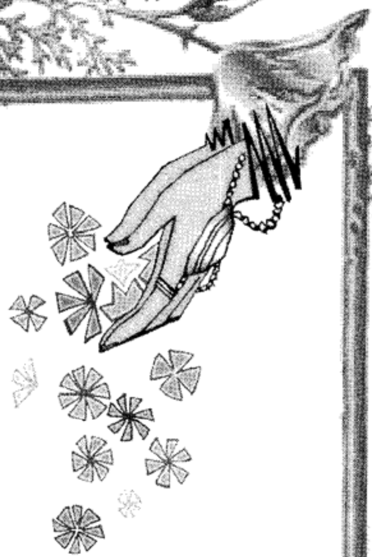
## झारखण्ड : भाषा अस्मिता संघर्ष

By
Dr. S. B. Mahto (Karwar) डॉ शशि भूषण महतो, काड़वार
R. K. Mahato "Satyarthi" रतन कुमार महतो "सत्यार्थी"

**First Edition : 5th April 2015**

**Price : Rs. 150/-**

प्रकाशक:
झारखण्ड आदिवासी कुड़मी समाज
शही निर्मल महतो कॉलोनी
न्यू सामलौंग, नामकोम
राँची–10



# उत्सर्ग

झारखण्ड के सभी पुरखा
साहित्यकारों एवं मातृभाषा
प्रेमियों को समर्पित

लेखकद्वय

प्रकाशकः

झारखण्ड आदिवासी कुड़मी समाज

न्यू सामलौंग, नामकोम, राँची–10

प्राप्ति स्थान :

1. सामलौंग : डॉ शशिभूषण महतो, 9931126829
2. पुस्तक केन्द्र, सिल्ली
3. झारखण्ड झरोखा, रातू रोड, बस स्टैण्ड, राँची
4. झारखण्ड कुड़माली भाषा परिषद्, चक्रधरपुर (प. सिंहभूम), 9934373421

मुद्रक :

गुड न्यूज प्रिंटर्स, कांटाटोली, राँची

# विषय–सूची

# प्राक्कथन

आज पूरे विश्व में मातृभाषा के प्रति संवेदना जगी है। भाषा व सांस्कृतिक चेतना ने लोगों को आलोड़ित किया है। अपनी भाषा व संस्कृति के संरक्षण हेतु लोग प्रयत्नशील हैं। झारखण्ड के निर्माण में भाषिक व सांस्कृतिक तत्वों की निर्णायक भूमिका रही है। झारखण्ड का बनना तो एक ऐतिहासिक घटना तो है लेकिन यहाँ की भाषाओं को अपेक्षित मर्यादा व प्रतिष्ठा नहीं मिल पाना चिंताजनक है। यहाँ की स्थानीय भाषाओं (कबीलाई क्षेत्रीय) को द्वितीय राजभाषा के दर्जे के लिए संगठित होकर लड़ाई लड़नी पड़ी। यहां के भाषा–प्रेमी, रंगकर्मी युवा व आमजन अपनी भाषायी व सांस्कृतिक अस्मिता के संरक्षण में मुखर हुए। द्वितीय राजभाषा की लड़ाई में यहां की भाषाओं को तो दर्जा मिला लेकिन कुछ गैर–झारखण्डी भाषाओं– बंगला, ओड़िया आदि को भी राजनीतिक तुष्टिकरण की नीति अपनाते हुए द्वितीय राजभाषा का दर्जा दे दिया गया यह झारखंडियों के प्रति घोर अन्याय है।

मातृभाषा की महत्ता के मद्देनजर हमने निश्चय किया कि यथासंभव इसकी विशेषता व प्रयोजनीयता पर लिखा जाय। अतः हमने भाषा, मातृभाषा व द्वितीय राजभाषा पर कलम चलाने की कोशिश की। अपनी भाषा हरेक के लिए प्रिय है। अतः हमने किसी के प्रति घृणा की दृष्टिकोण नहीं अपनाया है लेकिन हकमारी के प्रश्न पर हमने प्रश्न खड़ा किया है। राजनीतिक तुष्टिकरण से झारखण्ड में झारखण्डी भाषाओं का हकमारी हो यह कैसे बर्दास्त किया जा सकता है?

*कल तक कबीलाई व क्षेत्रीय भाषाओं को वह दर्जा प्राप्त नहीं था जो* आज है। यह बदले सामाजिक धारा या यों कहें बदले समय का नतीज़ा है। कबीलाई व क्षेत्रीय भाषाओं ने अपनी पहचान आज बनाई है लेकिन संरक्षण–संवर्द्धन में सरकारी तंत्र असहयोग करे यह अनअपेक्षित है। आशा है आने वाले समय में इस मुद्दे पर हमारे प्रति इस तंत्र का रवैया बदलेगा।

भाषा की उत्पत्ति से लेकर भाषा बनने की प्रक्रिया पर भी हमने विचार प्रकट किये हैं। भाषा के काल पर भी कुछ कहना हमने प्रयोजनीय समझा है। *भाषा विकास धारा में हमने कबीलाई धारा को स्वतंत्र माना है। अंतर्भाषायी* लेन–देन स्वभाविक प्रक्रिया है लेकिन इसमें क्यों किस कदर एक प्राचीन भाषा का परिवार बदलता है, यह गहन शोध का विषय है।

अपनी मातृभाषा कुड़माली होने के कारण इसकी विशेष चर्चा करने की कोशिश की है। कबीलाई भाषाओं में समानता को भी दिखाने की कोशिश हुई है। इसके मद्देनजर हम कहना चाहेंगे कि जो भाषा परिवार का निर्माण हुआ है क्या वह अंतिम है? विश्व भाषा परिवार के गठन में क्या सभी विद्वान एक मत हैं? गहन चिंतन मनन विश्लेषण का दौर जारी रहना चाहिए और अभीष्ट नतीजे की तलाश होनी चाहिए। संभव है विद्वानों के डिलिबेरेशन से नए भाषा परिवार का गठन हो। कुड़माली प्राचीन भाषा तो है ही इसकी कबीलाई पहचान भी बरकरार है। इसके भाषा परिवार पर विद्वानों के और विचार सामने आयें यही हमारा आग्रह है।

शिष्ट भाषाओं के मूल में कबीलाई व क्षेत्रीय (जनपदीय) भाषाएं हैं इसको नकारा नहीं जा सकता है लेकिन शिष्टता के महिमामंडन में मूल भाषाओं की अवहेलना यथेष्ट हुई है। आज बदलते दौर में विद्वान महसूस करते हैं कि सम्पूर्ण भाषायी वाङमय में कबीलाई भाषाओं का अध्ययन अनिवार्य है। प्रस्तुत है विद्वान साहित्यकार भगवान सिंह के विचार –

"एक समय तो यह माना जाता था कि भारत की और कुछ लोगों के ख्याल से दुनिया की सारी भाषाएं संस्कृत से निकली हैं, परन्तु अब हम उलट कर कह सकते हैं कि संस्कृत का और किसी भारतीय बोली की या भाषा का अच्छा ज्ञान बिना मुंडारी और द्रविड़ समुदायों की भाषाओं को जाने बिना नहीं हो सकता।" (आखड़ा अंक 4 वर्ष 2005 से साभार)

माननीय सिंह जी के उद्‌गार को सही मानना समय की मांग है। झारखण्ड के परिप्रेक्ष्य में यहाँ की मौलिक भाषाओं का अध्ययन आज हर गैर–झारखण्डी का कर्त्तव्य है। प्रशासन क्षेत्र विशेष में कार्यरत कर्मचारियों व अधिकारियों के लिए यहां की भाषा जानना आवश्यक होना ही चाहिए।

## कुड़माली साहित्य काल विभाजनः

प्रत्येक साहित्य की तरह कुड़माली साहित्य का भी काल विभाजन प्राचीन, मध्यकालीन व आधुनिक काल में किया गया है। पारंपरिक तौर पर विद्वानों ने 1800 ई. तक के पहले के काल को प्राचीनकाल कहना चाहा है। 1800 ई. से 1950 ई. को मध्यकाल व 1950 ई. से आज तक को आधुनिक काल कहना चाहा है। हम इसमें थोड़ा संशोधन करना चाहते हैं। मध्यकाल

मुख्यतः भक्तिकाल का युग रहा है। हमारे यहां इसका ज्यादा प्रभाव चैतन्य महाप्रभु के झारखण्ड में प्रवेश काल 1485 के लगभग से देखा जाता है। हमारे मतानुसारः

प्राचीनकाल : उद्भव काल (शिव काल) से – 1400 ई. तक

मध्यकाल (भक्ति काल) 1400 ई.–1900 ई. तक

आधुनिक काल – 1900 ई. से आज तक

आधुनिक काल को पूर्व आधुनिक काल 1900 ई. से 1950 ई. तक तथा उत्तर आधुनिक काल 1950 से अब तक माना जा सकता है।

प्राचीन काल : यह काल कुड़माली का सबसे लम्बा काल है। कुड़माली व्यवस्थित सामाजिक जीवन में जिन कवियों ने प्राचीन गीतों की रचना की वे सभी अज्ञात हैं लेकिन उनके गीत युग–युग से उसी छन्द में गाये जा रहे हैं जो शुरूआती दौर में गाये जा रहे थे।

पारंपरिक तौर पर ईश्वर अभिमुखी विचारधारा, अवधारणा कुड़मी समाज में सभ्यता के उषाकाल से जीवंत रही है। प्रागैतिहासिक काल में सूरज देवता, मरांग बुरू (बड़ा पहाड़) करम देवता आदि के प्रति इनकी श्रद्धा भक्ति थी। सुपर नेचुरल पावर से ही प्रकृति की घटनाएं हो रही हैं। यही इनकी मान्यता व अवधारणा थी। सभ्यता शुरूआत के साथ इनमें मूल देवता "बूढ़ा बाबा" के प्रति प्रबल अपनापन महसूस हुआ व जीवन के सर्वोच्च देवता के रूप में इन्होंने इसे स्वीकार किया। मजे की बात है कि आज के जमाने में भी शिव बाबा (बुढ़ा बाबा) इनके अन्यतम एकम अद्वितीयतम देवता है।

इनके गुणगान व पूजन में इनकी भक्ति चैत पर्व (चड़क पूजा) में आज भी देखी जा सकती है। भक्ति की भावना तो दृष्टगत है ही लेकिन कुछ गीत भी मिल सकते हैं लेकिन इसे भक्ति काल नहीं बल्कि प्राचीन काल ही माना जायेगा।

प्राचीन कुड़माली साहित्य तो गेय व कथानक के रूप में लोक साहित्य ही है। लेकिन 10वीं सदी की रचना "चर्यापद" ने एक नयी दृष्टि दी है। अध्ययन व विश्लेषण में यह देखा गया कि इसकी भाषा व तथ्य कुड़माली से ताल्लुक रखते हैं। इनके कुछ रचनाकार भी कुड़मी समाज के सदस्य प्रतीत होते हैं। कुड़माली भाषाविद् व पुरोधाओं ने चर्यापद की भाषा को कुड़माली

भाषा ही माना है। चर्यापद को कुड़माली का आदि ग्रंथ मानना चाहिए।

1. भुसुकपाद 2. लुईपाद आदि कवियों को प्राचीन कुड़माली कवियों में गिना जा सकता है। इस पर गहन शोध की आवश्यकता है।

अंतिम बात, भाषा प्रेमियों को अपनी मातृभाषा को समृद्ध करने में अपना योगदान/अंशदान करना ही पड़ेगा। दूसरा कोई हमारी भाषा को खड़ा करेगा ऐसा भ्रम में नहीं रहना चाहिए। वोट बैंक नीति सरकार की कमजोरी है अतः भाषिक व सांस्कृति मामलों में हमारी हकमारी हो रही है। इससे उसको क्या लेना–देना है? कौन हमारी रस--सुधा पान कर रहा है कौन हमारी भाषायी सांस्कृतिक पहचान को मिटा रहा है। इसके प्रति हमें सजग रहना है।

## कुड़माली मध्यकाल (भक्तिकाल)

आधुनिक शिष्ट साहित्यों में भक्तिकाल का प्रारंभ 14वीं शताब्दी के लगभग माना गया है। जहां नामपंथी गौरवपंथी तुलसीदास, सुरदास, कबीरदास, मीराबाई आदि की भक्ति/रचनाएं सामने आईं। कुड़माली साहित्य में इस काल का अपना प्रभाव है। और यहां भी कृष्ण भक्ति का वर्णन विभिन्न रूपों में आया। लेकिन झूमर के रूप में यह ज्यादा लोकप्रिय हुआ और आया भी है। यहां वैष्णव धर्म प्रभाव का वर्णन चैतन्य चीतामृत में मिलता है। जैसे

1. मथुरा जाबार काले आसि झाड़िखण्ड
   भिल्ल प्रायलोक ताहे परम पाखण्ड।
2. झाड़िखण्डे स्थावर जंगम आछे जतअ
   कृष्णनाम दिया कैलज प्रेमेते उन्मत्त।।

भक्तिकाल कुड़माली मध्यकाल का एक अंग है क्योंकि कुड़माली रसिकता का आवेग किसी काल में थमता नहीं है। अतः मध्यकाल में भक्ति के अलावा अन्य विषयों पर भी रचना हुई है।

प्रसंगक्रम में कहना है कृष्ण भक्ति का प्रभाव यहां ज्यादा हुआ और रामभक्ति का प्रभाव कम।

हम कुड़माली मध्यकाल को 1400 ई0 से 1900 ई. तक मानना चाहेंगे। इस काल में हमारे यहां कृष्णभक्ति की चर्चा ज्यादा हुई और प्रभाव स्पष्टतः रचनाओं के साथ व्यक्ति व गांवों के नाम पर पड़ा। यथाः गउर, निताई, रासबिहारी, मदनमोहन, निमाई, गोलनगर, गोसाईंडीह, ब्रजपुर, श्यामनगर आदि।

# अभिमत (क)

डॉ एस. बी. महतो एवं रतन कुमार महतो "सत्यार्थी" के "झारखण्डः भाषा अस्मिता संघर्ष" नामक किताब मन की एक बैचेनी, मन के 'हूल' की भावना और एक गहिरे सोच को अभिव्यक्त करने का अथक प्रयास है। डॉ महतो कुड़मालि भाषा के कर्मठ लेखक और उसके विकास के समर्थक भी आरम्भ ही से रहे हैं। मैंने खुद उनके साथ कुड़मालि साहित्यकारों से भेंट मुलाकात करके सभों को मातृभाषा साहित्य के निर्माण और विकास में सहयोग भूतकाल में देने का प्रयास किया।

कुड़मालि भाषा किस भाषा परिवार की मातृभाषा है इसे वे खुद कहते और लिखते हैं। कुड़मालि, कुडुख और मालतो मातृभाषाओं के शब्द सूची उनके द्वारा प्रस्तुत इस किताब से स्पष्ट हो जाता है कि ये तीनों एक वृहत भाषा परिवार के अंग हैं।

उनका प्रथम अध्याय एक भाषा विज्ञान पर गहन अध्ययन का प्रमाण दिखलाता है जो अन्य भाषा विज्ञान से भिन्न पर रोचक है। इस पर अन्य भाषा के लेखकों का ध्यान भी जाना उचित होगा। विशेष कर भाषा की उत्पति/उद्भव का वर्णन बहुत ही रोचक है। पर पुस्तक का विषय "भाषा अस्मिता संघर्ष" है। इसी मूल बिन्दु पर उन्होंनं अधिक पन्नो में व्याख्या की है। संघर्ष झारखण्ड में झारखंडी मातृभाषाओं की मान्यता, तथा उनके विकास में सरकार की भागीदारी पर केन्द्रित है। झारखण्ड सरकार ने आज तक झारखण्ड के आदिवासी मूलवासी की अपनी मातृ–भाषाओं को शिक्षा पद्धति में शामिल नहीं किया है। सरकारी दस्तावेजों में मातृभाषा से शिक्षा का जिक्र जरूर है। पर कार्यान्वयन शुन्य के बराबर है। फिर इन भाषाओं को झारखण्ड की द्वितीय भाषा क्यों? इन्हें जोड़ जाड़ के इस प्रदेश की पृथक भाषा का निर्माण ही सर्वोत्तम होगा। इस दिशा में सोच ही नहीं सकती यह सरकार तो द्वितीय भाषा भी बनाने की चिन्ता क्यों करे? इस सरकार को झारखण्डी बच्चों से क्या लेना देना है? जब यहां की अपनी सरकार बनेगी तब स्वतः ये मूल बातें मन में उठेंगी और काम होगा। उस समय को लाने के लिए एक बार पुनः सामाजिक, सांस्कृतिक आन्दोलन लाना पड़ेगा। इसके लिए झारखण्डी एक जुट हो जायें, तो समय से हो जायेगा काम। इस पुस्तक को पाठक जरूर पढ़ें। ऐसी किताबें झारखण्ड के नवों मातृभाषाओं में लिखि जानी चाहिये। खोरठा और नागपुरी में ऐसी किताबें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुडुख, मुंडारी, हो, संथाल, खड़िया में भी लिखी जानी चाहिये। लेखकद्वय की सफलता की कामना करते हुए दो शब्द लिखना अन्त करता हूँ।

बिशप एन. मिंज

# अभिमत (ख)

डॉ फा० अलेक्स एक्का, ये. स.
निदेशक
जेवियर समाज सेवा संस्थान, राँची

मातृभाषा व्यक्ति की अस्मिता की नींव है। इस तरह यह उस भाषा समुदाय के लोगों की विशेष पहचान बन जाती है। किसी की अस्मिता से न केवल उसकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं का पता चलता है, वरन् उसकी आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक विशेषताओं का भी पता चलता है। मैं अलेक्स एक्का हूँ, तो मेरी अस्मिता इस प्रकार है : मेरी मातृभाषा कुडुख है। मैं उराँव समुदाय के एक्का कुल का सदस्य हूँ। मेरी सांस्कृतिक धरोहर उराँव समुदाय की है, जो नाते–रिश्तों, सम्बोधन के तरीकों, मेहमानों के आदर–सत्कार, व्यक्ति के जन्म–मरण, विवाह तथा समाज में पर्व त्योहारों की रीति–रश्मों, खान–पान, नाच–गान एवं साज–श्रृंगार आदि से परिलक्षित होती है। मेरा धार्मिक विश्वास उराँव समाज के अनुसार एक मात्र ईश्वर 'ध र्मेस' पर है, जिसने दुनिया की सृष्टि की और हमें प्रकृति तथा सब जीव जन्तुओं के परवरिश की जिम्मेवारी दी है। मेरी आर्थिक अस्मिता धरती से जुड़ी है, क्योंकि मेरे माँ–बाप कृषक रहे हैं, और प्राकृतिक संसाधनों से जुड़े हैं। मैं अपने गोत्र 'एक्का' के कारण धरती से जुड़ा हूँ, क्योंकि आदिवासी परिभाषा में भूमि का अर्थ मात्र जमीन की ऊपरी परत मात्र नहीं है, जिसमें पौध े, फसल, और घास–फूस उगते हैं, वरन् धरती की नीचे तथा धरती के ऊपर के जलाशय, खनिज, जंगल–झाड़ तथा इनमें विचरने वाले सभी जीव जंतु है। इस तरह आदिवासियों के जीवन दर्शन में एक्का (कछुवा) भी व्यापक रूप में भूमि का ही अंग है। मेरी राजनैतिक अस्मिता समाजवादी एवं प्रजातांत्रिक मूल्यों पर आधारित है। लेकिन चूँकि मैं एक ईसाई हूँ, इसलिए मेरी धार्मिक अस्मिता ईसाई–विश्वास के अनुसार और अधिक गहरी हो जाती है। इस तरह मैं आदिवासी–ईसाई की दोहरी अस्मिता का हकदार हूँ।

किसी व्यक्ति की अस्मिता उसकी शिक्षा–दीक्षा, व्यवसाय आदि की परतों से परिष्कृत हो जाती है। इस तरह आदिवासियत के मूल में लोग किसी

न किसी व्यवसाय, संस्था, संगठन तथा क्षेत्र के हो सकते हैं, जैसे शिक्षक, डॉक्टर, इंजीनियर, प्रशासक, राजनेता इत्यादि। उनकी आदिवासियत की पहचान इन व्यवसायों तथा पदों के रूप में और निखर जाती है।

आदिवासी की ऐसी पहचान के साथ–साथ उसके समुदाय की पहचान भी हो जाती है। इसमें आदिवासी समुदायों को अपने–अपने सामाजिक एवं सांस्कृतिक आदि मान्यताओं और मूल्यों के अनुसार पहचान बनानी चाहिये। आदिवासी, शिक्षक, इंजीनियर, वकील तथा प्रशासक इत्यादि अलग–अलग शैक्षणिक योग्यता रखते हैं। वे अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं में भी पारंगत हो सकते हैं। जैसे हिन्दी, अंग्रेजी, बंगाली। इसके साथ–साथ दूसरी संस्कृतियों के मूल्यों एवं संस्कारों को ग्रहण कर सकते हैं। इनसे वे अपनी आदिवासी अस्मिता और संस्कृति में निखार ला सकते हैं।

डॉ शशिभूषण महतो (काड़वार) एवं रतन कुमार महतो 'सत्यार्थी' ने अपनी पुस्तक 'झारखण्ड : भाषा अस्मिता संघर्ष'' में इसी बात पर बल दिया है कि किस तरह झारखण्ड के आदिवासी अपनी–अपनी मातृभाषा को मजबूत करते हुए झारखण्डी आदिवासी अस्मिता का निर्माण करें। यद्यपि झारखण्ड में कई आदिवासी भाषाएं हैं, झारखंडी अस्मिता के लिए एक सर्वमान्य भाषा अपनाएं तथा झारखण्डी आदिवासीयों की सामुहिक विशेषताओं– समता, निष्कपटता, कर्मठता, प्रकृति से लगाव, इत्यादि को निखारें। इस तरह विविध ता में एकता हमारी ताकत होगी।

डॉ. शशिभूषण महतो (काड़वार) एवं रतन कुमार महतो ''सत्यर्थी'' ने कुड़माली भाषा की विशेषता को उसके उद्‌गम एवं विकास की बारीकी से विवचना की है। इसके जरिये उन्होंने आध्यात्मवाद व भाषा की चर्चा कुड़माली भाषा में की है, जो लोकोक्तियों, किवदन्तियों एवं गीतों में झलकती है। इसके बाद मध्य काल में कुड़माली की विशेषता उन्होंने लयात्मक रूप में व निर्गुण तत्व अभियंजना के रूप में दर्शायी है। इसी तरह कुड़माली आधुनिक भाषा की चर्चा डॉ शशिभूषण महतो (काड़वार) ने झूमर गीतों की प्रसिद्धि से की है। इस सिलसिले में उन्होंने राँची विश्वविद्यालय में जन जाति व क्षेत्रीय भाषा विभाग की 19 नवंबर 1981 में स्थापना से कबिलाई भाषाओं के पठन–पाठन पर जोर दिया है, जिसमें कुड़माली भाषा के विशिष्ट स्थान की बात कही है। इसी समय उन्होंने गोस्सरर कॉलेज में व्याख्याता का अतिरिक्त

पद संभाला।

इस पुस्तक के तीसरे अध्याय में राजभाषा के बारे उन्होंने बताया है कि किस तरह यह राष्ट्र की काम–काज की भाषा है, जिसका प्रयोग शासन में, कानून बनाने में, आदेश निकालने में, लेखा–जोखा तैयार करने आदि में किया जाता है। हमारी राजभाषा हिन्दी है, जो झारखण्ड में भी प्रचलित है, लेकिन यहाँ राजभाषा के मसले पर विवाद खड़ा हो गया है।

अध्याय चार में लेखकों ने झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा संबंधी महाजुटान की चर्चा की है। उन्होंने बताया है कि कैसे 28–29 अगस्त 2011 को झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा संबंधी बिरसा चौक में महाजुटान हुआ था। तब से झारखण्ड में नौ झारखण्ड भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा दिलाने के पक्ष में तथा बंगाली को द्वितीय राजभाषा देने के विरोध में आन्दोलन चला है।

इस संदर्भ में उन्होंने कहा है कि कुड़माली कुड़मियों की मातृभाषा है इसलिए उसे भी राज्य की द्वितीय राजभाषा का दर्जा मिलना चाहिए। द्वितीय राजभाषा की मांग को लेकर त्रिभाषा (अंग्रेजी, हिन्दी, स्थानीय) फार्मुले पर शिक्षण की व्यवथा की माँग भी जायज है।

इस पुस्तक में लेखकों ने कई भाषाविदों के विचारों को भी रखा है, जिनमें डॉ बी.पी. केसरी, डॉ. गिरिधारी राम गौंझू एवं लेखिका वंदना टेटे आदि के नाम वर्णित है। यह पुस्तक सभी भाषा प्रेमी झारखण्डियों की पढ़नी चाहिए और अपनी व्यक्तिगत एवं सामुहिक अस्मिता को मजबूत करते हुए अपनी सभी जन्म जात अधिकारों के लिए निरंतर संघर्ष करते रहना चाहिए। डॉ शशिभूषण महतो (काड़वार) एवं रतन कुमार महतो ''सथ्यार्थी'' को उनकी इस मार्गदर्शी कृति के लिए बधाई एवं भाषी सपनों को साकार करने के लिए शुभकामनाएँ।

जोहार! जय झारखण्ड! जय आदिवासी!

# अध्याय - 1 : भाषा

भाषा भाव अभिव्यक्ति व विचार विनिमय का माध्यम है। 'भाषा' शब्द भाष धातु से बना है। इसका अर्थ वाणी को व्यक्त करना है। इसके द्वारा मनुष्य भावों, विचारों और भावनाओं को व्यक्त करता है। भाषा लिखित भी हो सकती है और मौखिक भी। जिस तरह साहित्य के लिखित रूप व मौखिक रूप दोनों स्वीकृत हैं।

कुड़माली में भाषा को भाखि कहा जाता है अर्थात् प्रयोजनानुसार मुंह से वाणी की निर्गत होती धारा। कुड़माली भाख से ही भाखि का निर्माण हुआ है। जिसका अर्थ हुआ मुंह की बोली (वचन)। भाख+इ (प्रत्यय) भाखि अर्थात भाषा।

अब प्रश्न उठता है भाषा/भाखि की उत्पति कैसे हुई, क्यों हुई। मनुष्य को ईश्वर ने स्वतंत्र मन दिया है अतः मनन शक्ति चिंतन शक्ति उसमें है। प्रकृति के नियमानुसार जब मनुष्य को किसी चीज का प्रयोजन हुआ वह चिंतन मनन में निमग्न हुआ फिर उसका समाधान या सम्यक उत्तर आया उसी के अनुसार व प्रयोजन या आवश्यकता की वस्तु को प्राप्त करने के लिए ध्वनि किया जो क्रमशः भाषा में विकसित हुई।

भाषा विज्ञानी ब्लूम फील्ड का मत है कि पशु–पक्षी किसी परिस्थिति की प्रतिक्रिया रूप में ध्वनि करते हैं और इसी से भाषा की उत्पति हुई। उल्लेखनीय है कि प्रत्यक्षतः मनुष्य ने पशु–पक्षियों से विभिन्न प्रकार की ध्वनियों को सीखा जैसे–कोई शत्रु आक्रमण करने आया तो बचाव के लिए एक विशेष ध्वनि मुंह से निकलती है। ठीक इसी प्रकार कोई समान विचारधारावाला या सुखद वातावरण होता है तो एक अलग ध्वनि निर्गत होती है। ऐसे ही अन्य कार्यकलाप यथा मैथुन की इच्छा होने पर पशुओं में भी अपने साथियों के लिए (नर द्वारा मादा तथा मदा द्वारा नर के लिए) विशेष ध्वनि का प्रयोग किया जाता हैं, आदि। इससे हटकर यदि देखा जाय तो मनुष्य अकेले की स्थिति में भी दुःख सुख की अभिव्यक्ति करता है। जिससे स्वतः भाषा सरिता बह चलती है। निचोड़ में कहा जाय तो भाषा की उत्पति का कारणः

1. प्रयोजन की प्राप्ति
2. दुःख–सुख की अभिव्यक्ति है।

अप्रत्यक्षतः भाषा की सृष्टि ईश्वर निर्मित ही है क्योंकि मनुष्य का

चिंतन तो उसी के इच्छानुसार होता है। "प्रपत्तिवाद" के अनुसार इस संसार का कोई भी कार्य--कलाप उनकी इच्छा के बिना नहीं होता। भाषा की उत्पति मानव समाज की उत्पति जैसी है। चूँकि भाषा नियम की संरचना में बंधी है, तथा सार्थक शब्दों के प्रयोग को ही भाषा में स्थान प्राप्त है। अतः विवेकशील मननशील मनुष्य की भाव अभिव्यक्ति को ही भाषा कहा गया है और पशु--पक्षियों की वाणी या भाषा को भाषा नहीं कहा गया है।

भाखि/भाषा की उत्पति क्यों और कैसे के संबंध में इतना ही कहना यथेष्ट है कि प्रयोजन एवं संवेदनाओं को वाचनिक रूप देने के लिए ही भाषा की उत्पति हुई। सृष्टि के नियम से प्रकृति चलती है और प्रकृति के नियम से सृष्ट जगत के कार्य--कलाप। अतः समय बढ़ता गया और विकास की गति भी बढ़ चली। इसी क्रम में भाषा सरिता भी प्रवाहमान हुई। कुड़माली भाषा की उत्पति भी इसी क्रमानुसार हुई। यह उल्लेखनीय है कि जिस तरह अध यात्मवादी चेष्टा करते हैं तो समस्या समाधान में परमपुरूष के निर्देश उन्हें प्राप्त होते हैं ठीक उसी प्रकार परम पुरूष जब चाहते हैं तो एक जरूरतमंद को ऐन मौके पर वह संकेत दे ही देते हैं। क्योंकि सृष्टि धारा को बढ़ाना, संवर्धन करना तथा उत्कर्ष पर पहुंचाना उनका ही काम है। अतः हर काम उनके निर्देश में हो रहा है यह कल्पना तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। आध्यात्म या ईश्वर केन्द्रिक दर्शन से हर जागतिक कार्य को जोड़ना अतार्किक या असंगत नहीं है। भाषा या ध्वनि उत्पति की आध्यात्मिक व्याख्या भी है जो आज के युग में विश्लेषण योग्य व अंगीकार करने योग्य है।

## आध्यात्मवाद व भाषा की अभिव्यक्ति

आध्यात्मवाद में मनुष्य की स्थूल देह के साथ सूक्ष्म देह की मान्यता है। मनुष्य के सुक्ष्म देह में 7 चक्रों की बात कही गयी है जो निम्न हैं:

| | |
|---|---|
| 1. मूलाधार चक्र | मेरूदण्ड के सबसे निचले भाग |
| 2. स्वधिष्ठान चक्र | जननांग मूल स्थान |
| 3. मणिपुर चक्र | नाभि स्थान |
| 4. अनाहात चक्र | हृदय स्थान |
| 5. विशुद्ध चक्र | कंठ स्थल |

6. आज्ञा चक्र त्रिकुट स्थल

7. सहस्रार चक्र सिर के तालु में

मानसिक सोच के अनुसार मन का अवस्थान इन चक्रों में होता है और कार्यकलापों का संपादन व नियंत्रण यहीं से होता है।

भाषा सोच का वाचनिक रूप है। आध्यात्म के अनुसार भाव अभिव्यक्ति की प्रक्रिया छः स्तरों में न्यस्त है। अभिव्यक्ति के प्रथम भाव को चिंतन ''पराशक्ति'' कहा जाता है। यह भाव का मूल बीज है। यह भाव मूलाधार चक्र में स्थित होता है।

चिंतन के आगे बढ़ने के क्रम में स्वाधिष्ठान चक्र में मनुष्य मूल बीज भाव को मानसिक रूप में दृष्टिगत करता है। अपनी अभिव्यक्ति को मानसिक रूप में देखना पश्यन्ति कहलाती है। मणिपुर चक्र में यह मानस दृष्टि मानसिक आवाज में बदल जाता है। जिसे मध्यमा शक्ति कहते हैं। इसके आगे के क्रम में मनुष्य अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करना चाहता है। यही दयोतमाना शक्ति कहलाती है। यह नाभि क्षेत्र (मणिचक्र) व गले के बीच विशुद्ध चक्र के बीच काम करती है। चिंतन जब विशुद्ध चक्र या कंठ स्तर में पहुंचती है तो वह भाषा में बदल जाती है। इसे बैखरी शक्ति कहते हैं। बैखरी के बाद यह बोलचाल वाली वास्तविक भाषा में बदल जाती है जिसे श्रुतिगोचरा शक्ति कहते हैं।

आध्यात्मिक दृष्टि से अभिव्यक्ति की भाषाई विभिन्नता सिर्फ छठवीं अवस्था में ही प्रकट होती है। शुरू की पांच अवस्थाओं परा, पश्यन्ति, मध्यमा, दयोतमाना और बैखरी की अवस्थाओं अभिव्यक्ति में कोई अंतर या बदलाव नहीं होता। आज के भाषायी विद्वेशकों को यदि यह समझ में आ जाय तो भाषा के नाम पर सामुदायिक संघर्ष बहुत हद तक रूक जायेगा। कहने का तात्पर्य है सभी भाषाएं ईश्वर प्रदत्त या उन्हीं की कृपा से बनी हैं अतः नफरत करने का सवाल ही नहीं है लेकिन हर जगह की स्थानीयता के मद्देनजर वहां की भाषा को महत्व देना ही उचित है। कुड़माली बहुल क्षेत्रों में कुड़माली को मान्यता, मुण्डारी, कुडुख, संथाली, हो, खड़िया एवं अन्य भाषाओं को अपने स्थान पर मान्यता मिलनी ही चाहिए। वक्त का तकाजा है कि इन क्षेत्रों में सरकारी काम काज करने वालों को जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं को जानना ही पड़ेगा क्योंकि वे अपनी भलाई के लिए नहीं बल्कि यहां के लोगों

की भलाई के लिए यहां कार्यरत हैं। ठीक यही चीज आसाम में आसामिया को मानना पड़ेगा जो बंगाली सरकारी अफसर वहां कार्यरत हैं, वहां उन्हें आसामिया भाषा सीखना पड़ेगा। यही फार्मूला बंगाल, कश्मीर, दक्षिण भारतीय भाषा क्षेत्र में भी प्रयोज्य है। मूलबात है कि यदि नौकरशाह लोगों की भाषा में कार्य करते हैं तो उनके साथ उनकी आत्मीयता बढ़ती है और समस्याओं को सहज रूप में समझ पाता है व उनका निराकरण भी सहज रूप में होता है। मानवतावादी दृष्टिकोण से किसी दबंग द्वारा किसी की भाव भाषा को दबाना अनुचित ही नहीं बल्कि मानसिक शोषण है (Psycho Exploitation) क्योंकि शोषित की मानसिकता नीचे हो जाती है और वह हीन भावनाओं से ग्रसित हो जाता है। हकीकत यह है कि लोगों की मातृभाषा में उन्हें संबोधित करने से वह उनके दिल को छू जाती है। हम यदि कल्याणकारी सरकारी मुलाजिम हैं तो लोगों के हृदय को स्पर्श करने की चेष्टा करें।

आज झारखण्ड में भाषा विवाद का मूलकारण है अन्य "गैर झारखण्डी" भाषाएं जिनका अन्य जगह अपना स्थान होते हुए भी यहां की भाषाओं की हकमारी कर यहां अपना स्थान बनाने की कोशिश में हैं। इसे कुड़माली "आहना" में कहते हैं।

**खाँखड़ा उड्ञ सामाल सांप, सांपे कहेइ मञ तरे बाप।**

## प्राचीन भाषा और मौलिक भाषा

सभ्यता के संबंध में कहा जाता है कि मौलिक सभ्यता वह है जहां अन्य सभ्यता संस्कृति का सम्मिश्रण नहीं हुआ है या अत्यन्त कम हुआ है। मिश्रित सभ्यता में अनेक सभ्यताओं का मिश्रण माना जाता है। उदाहरणस्वरूप मौलिक रक्त में आस्ट्रिक, निग्रो, मंगोल आदि को मौलिक माना जाता है और इनके मिश्रण से बने रक्त को मिश्रित एवं इनसे जन्मी पल्लवित हुई सभ्यता को मिश्रित सभ्यता कहा जाता है। जो सभ्यता प्रथम स्तर में होती है उसे मौलिक सभ्यता कहा जाता है। माननीय प्रभात रंजन सरकार के शब्दों में इसे सभ्यता का हिल स्टेज या पार्वतीय स्टेज कहा जाता है। ठीक इसी प्रकार मौलिक भाषा के सम्बन्ध में भी कहना उचित होगा कि जिसमें उसके मूल शब्द काफी संख्या में अभी भी प्रचलित है तथा उनका व्याकरण (भाङअर) उनके अपने हिसाब से चलता है या चल रहा है। प्राकृतिक नियम से आदान

प्रदान होता ही है। भाषाओं में भी यह नियम मान्य है। लेकिन यह भी सत्य है कि दबंगई के चलते कहीं कहीं पर किसी जाति या भाषा को दबाया भी जाता है। यह नियम संस्कृति सभ्यताओं में देखा जाता है। सबल द्वारा निर्बल को पूरी तरह प्रभावित करना या आत्मसात करना होता है। इसे ही संस्कृतिकरण (Sanskritization) कहा जाता है। गौरव की बात है कि कुड़माली, संथाली, कुडुख, मुण्डारी, हो, खड़िया जैसी कितनी ही कबिलाई भाषाओं ने अपना अस्तित्व बरकरार रखा है और वे मौलिक हैं।

प्राचीन भाषा से तात्पर्य कबिलाई भाषा से है क्योंकि मूल भाषा के जनक आदिमानव या आदि काल के कबीले ही हैं। इन्होंने ही प्रकृति के विभिन्न शब्दों का अनुकरण कर भाषा का निर्माण किया। भाषा उत्पति की गणना में प्रागैतिहासिक काल को छोड़ भी दें तो भी समूह में निवास कर "व्यवस्थित सामाजिक जीवन काल से हम इसकी उत्पति मान सकते हैं।" व्यवस्थित समाज व्यवस्था हम उससे कहेंगे जहाँ से मनुष्य ने नीतिवाद आध ारित जीवन जीना सीखा– अर्थात् विवाह व्यवस्था के प्रचलन के बाद। इस प्रसंग में उल्लेखनीय है कि मानव सभ्यता के उन्मेष के बाद उसे व्यवस्थित करने के लिए परम पुरूष को संकल्प देह धारण कर भगवान सदा शिव (बूढ़ा बाबा) के रूप में इस पृथ्वी पर आना पड़ा था। शिव एक ऐतिहासिक पुरूष थे। इसमें कल तक द्विमत था लेकिन आज नहीं होना चाहिए क्योंकि आनन्द मार्ग के प्रवर्तक व पूज्य गुरूदेव श्री श्री आनन्द मूर्तिजी ने उनकी ऐतिहासिकता को अपने प्रवचनों में तथा अपनी पुस्तक नमः शिवाय शान्ताय में प्रांजल भाषा में व्याख्यायित किया है। उन्होंने शिवकाल को अभी से 7000 (सात हजार) वर्ष पूर्व माना है। अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि प्राचीन भाषाकाल 7000 वर्ष का है। व्यवस्थित समाज काल को व्यवस्थित कृषि काल से ही माना जा सकता है क्योंकि कृषि के व्यवस्थित होने पर ही मानव ने व्यवस्थित होकर कबीलाई जीवन प्रारंभ किया। "प्राचीन विश्व इतिहास का परिचय" पुस्तक के लेखक फयोदोर कोरोब्किन (प्रगति प्रकाशन मास्को/पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड नई दिल्ली–55) ने भी मानव सभ्यता के कृषि काल का समय 7000 वर्ष माना है। व्यवस्थित समाज जीवन काल के पहले की भाषा को स्वीकृत भाषा नहीं माना जा सकता क्योंकि व्यवस्थित समाज में ही मनुष्यों ने सार्थक व सम्यक रूपेण भाव विनिमय में भाषा का व्यवहार किया।

मौलिक भाषा तो प्राचीन हो ही सकती है लेकिन प्राचीन भाषा यदि

अपनी मौलिकता को नहीं बचा सकती तो वह मौलिक कहाँ से होगी? आस्ट्रिक या आग्नेय ऑरिजन की भाषाओं में यदि आस्ट्रिक शब्दों की भरमार है तो उन्हें मौलिक कहना ही संगत होगा अर्थात् वर्तमान युग की चलंत (अन्य भाषाई) शब्दों के ग्रहण के बावजूद। उदाहरण के तौर पर कह सकते हैं हमारी झारखण्डी (क्षेत्रीय एवं जनजातीय) भाषाओं ने अपना मौलितत्व बरकरार रखा है। कुड़माली भाषा की मौलिकता के लिए इसके कुछ विशिष्ट संज्ञा शब्द व क्रियाओं की सूची यहां पर दी जा रही है :

| **संज्ञा (शब्द)** | **क्रिया (शब्द)** | **संज्ञा (शब्द)** | **क्रिया (शब्द)** |
|---|---|---|---|
| मुड़ | अइला, किंदरा | | |
| पेन | खंखाँ | आइड़ | चापा |
| तुतका | उला, भाभा | उदल | धुंका |
| घेंचा | आछड़ा, अहरा | इस (सांइड़) | हिंचड़ा |
| थथना | थाना | गुंगु | हेला |
| लुलुहा | भाला | कातु | असरा |
| टम | झिका | काकना | उपला |
| अनानुड़ा | | किआः | लेबदा |
| चुइ | सापा | कुहु | आँचा–आँचि |
| संढुर | हाबु | काड़ा | खुंटा |
| अटाफहमा | | गरू | गंजा |
| आँडुहेबड़ा | | खुदि | छेंका |
| रजअ | गुड़दा | अरखि | चाडु |
| आँटि | दुलका | महुरा | झाँउरा |
| आँठुअना | | कसबि | ढनगा |
| अरपा | हुलका | हेड़ा दरड़ा | |
| बा | लिलिआ | खेमटा | ददा |
| गइ | चघा | गुपति | पेतिआ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| चकलि | पालटा | ताबला | उघरा |
| चाला | पुदगा | दिरखा | अंगठा |
| चेइला | संपड़ा | भुलुक | अझड़ा |
| झुंटिआ | सलगा | नागेरा | आजड़ा |
| टुइला | तेंतरा | पाक्खा | निछड़ा |
| टंकि | चापु | पाघाड़ | पछड़ा |
| टुंडि लँगसा | | पागहा | हिड़का |
| ठेर | अँचड़ा | दड़ाडु | |
| ठुटकु | राँपा | पाचेइर | गबेचा |
| डहु | हेंसरा | पंठरू | लेउड़ा |
| डहर | थिरा | पांजरा | गाभड़ा |
| ढेलुआ | जिरा | पालुआ | चउका |
| डुटु | पंहटा | बउगि | इड़का |
| डुंडलु (फिडंगा) | जबड़ा | बुक | मलका |
| डेगा जबका | | बुकु | कदरा |
| ढड़हा | गिरगिता | | |

नोटः ये विशिष्ट शब्द आर्य भाषाओं के शब्द कोर्स में नहीं मिलते।

प्राचीन भाषा के संबंध में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि इनकी कुछ अभिव्यक्ति छोटे शब्दों से या यों कहें एकल अक्षर द्वारा भी होती है हम जानते हैं बन्दर प्रजाति से मनुष्य का उद्‌भव हुआ। बंदर अपनी अभिव्यक्तियाँ– किऊ, कि, कुंई –– आदि के द्वारा करते हैं। जंगल में रहने वाले बंदरों की भाषा में कम शब्द हैं जब कि मनुष्य संपर्क में रहनेवाले बन्दरों की भाषा में अधिक। भाषा की शुरूआत कुछ शब्द समष्टियों को लेकर होती है उसके बाद व्यवहारिक जगत में विभिन्न स्तरों में जनगोष्ठी जब आगे बढ़ती है तो उसका शब्द भण्डार पुष्ट होता है। वर्तमान युग के भाषा विज्ञानी श्री प्रभात रंजन सरकार जिन्होंने कहा है कि विश्व की सभी भाषाओं के मूल में संबंध है, सभी भाषाएं एक सूत्र में पिरोई जा सकती हैं ने अपनी पुस्तक योग

मनोविज्ञान पृष्ठ 209 में लिखा है – जंगलों में रहने वाले बंदरों की भाषा में करीब 34 शब्द हैं जबकि मनुष्य के संस्पर्श में रहने वाले बंदरों के शब्दकोश में नौ सौ। उन्होंने यह भी उल्लेख किया है कि अफ्रिका की अन अग्रसर जुलू कम्युनिटी की भाषा में शब्द संख्या बहुत ही कम है। अन्य भाषाओं में जैसे– फ्रैंच अंग्रेजी, जर्मन, संस्कृत में प्रचुर शब्द भंडार हैं। बंगला भाषा में प्रायः सवा लाख शब्द हैं। जबकि गुजराती में संतानबे हजार यानी लगभग एक लाख शब्द।

**प्राचीन भाषा के लक्षण** – चूंकि बंदर प्रजाति की भाषा प्रमाणित करती है कि सिंगल सिलेबल से एक सार्थक अभिव्यक्ति हो सकती है। मौलिक व प्राचीन भाषा के जनक आदिम कबिलाओं की भाषाओं में यह लक्षण दिखाई पड़ता है। प्राचीन भाषा कुड़माली के कुछ रूप :

| **संज्ञा शब्द** | **क्रिया–शब्द** |
|---|---|
| बा–बाप | डु–सोना |
| बु–पानी | ठां–सामने |
| लि–बकरी दे, | दे बाएं ओर घुमने का निर्देश |
| ग्अ–माता | ज–उपाय |
| खन–समय | म–जला कर खाना |
| ति–हाथ | छं–ओझल |
| टुञ–चोटी | ,व.पसगुतु– कुत्ता को बुलाना |
| हि–बैल | जाञ–जाओ |
| अन–कान | चिस–लिखना |
| गु–विष्टा | आ– आओ |
| डि–गांव | जा–जाओ |

. इससे हटकर कबीलाई भाषा में गणना पद्धति अपनी प्राचीनता को व्यक्त करती है। कुड़माली, मुंडारी, संथाली, उराँव, खड़िया आदि कबीलाई भाषाओं में संख्यावाचक शब्दों की विशेषता यह है कि दहाई का अंक पहले और ईकाई का अंक बाद में आता है। उदाहरणस्वरूप– कुड़माली में, अना–एक, दना–दो, टेना–तीन, चारा–चार, मांचा–पांच, झेग–छः, गइ–सात, अठइ–टाइ, नमि–नौ, सिहम–दस। सिहम अना–ग्यारह, सिहम दना– बारह, सिहमटेना–तेरह, कुड़अना–इक्कीस, टेनेन अना– इक्कतीस, नमेन

नमि्–निन्यानबे।

**कुडुख–** ओंद– एक, पंचे–पांच, सय–सात, दोय–दस, दोयपंचे–पन्द्रह, दोयसय–सत्रह

**खड़िया–** मोञ–एक, उबार–दो, उउवे–तीन, मोलोइ–पांच, टिबरू–छ, घोल–दस, घोलमोञ–ग्यारह

**संथाली –** गेल–दस, गेलमित– ग्यारह, गेलबर–बारह, गेलेपे–तेरह, गेलपोन–चौदह

**मुण्डारी –** मियद–एक, बरिय चा–दो, अपिया–तीन, उपनिया–चार, गेलेया–दस, गेल–मियाद– ग्यारह, गेलबारिया–बारह, गेल, अपिया–तेरह, गेलउपनिया–चौदह

**तिब्बती**–छु–दस, सुम–तीन, तेरह के लिए छुकसुम

पांच के लिए ङ तथा पन्द्रह के लिए छोङ संख्यात्मक शब्द बनता है।

आधुनिक भाषाओं हिन्दी, बंगला, उड़ीया में संख्यावाचक शब्दों की विशेषता यह है कि दहाई का अंक बाद को आता है और ईकाई का अंक पहले।

हिन्दी में दस के बाद–ग्यारह, बारह, तेरह, बीस के इक्कीस, बाईस तेईस

**बंगला–** एक, दुइ, तिन, चार–बीस के बाद एकुइस, बाईस, तेइस, निन्यानबे तक हिन्दी की तरह ही संख्यात्मक शब्दों का गठन होता हैं यही पद्धति संस्कृत में हैं एकादस, द्वादस, त्रयोदस इत्यादि।

## पारंपरिक कालगणना व कबिलाई कालगणना

पारंपरिक काल गणना (बारह महीने का वर्ष) शिष्ट साहित्यों, में जिनकी चर्चा है (विक्रम संवत, शक संवत, हिजरी, बंगाब्द तथा अंतर्राष्ट्रीय रोमन ई. सन आदि) है, जबकि कबिलाई, कालगणना पद्धति काफी प्राचीन है। हम यहां विशेष तौर पर कुड़माली गणता पद्धति की बात करते हैं। कुड़माली कबीला का सामाजिक जीवन कृषि आधारित है। अतः इसी के आधार पर तथा प्राकृतिक ऋतुओं की घटना के मद्देनजर वर्ष छः मासों में (तत्कालीन) या यों कहें ऋतुओं में बांटा गया था जो निम्नलिखित है।

1. मधुमास — फाल्गुन व चैत महीना
2. निरनमास — वैशाख व जेठ

| | |
|---|---|
| 3. बेइरसामास | आषाढ़ व सावन |
| 4. भादरमास | भादो आश्विन |
| 5. काटेन मास | कार्तिक व अगहन |
| 6. जाड़मास | पौष, माघ |

उनकी गणना में इस तरह की स्थिति दो महीने या यूं कहें 60 दिन लगभग रही थी। अतः छः मास की गणना में एक वर्ष पूरा होता था। इसकी चर्चा प्रचलित कुड़माली घटनाओं व गीतों में मिलती है। यथा–

**करम गीतः**

जाहु–जाहु करम राजा एहअ छअ मास
आउए दे भाद्‌रअ मास आनबं घुराइ।
आइज तरे करम राजा घारे–दुआरें
काइल तरे करम राजा, कांस नदिक पारे

**सोहराई गीत – बांदना गीत**

अहि रे– जाल्‌अ फेंकइते केउटा डुबअए
डुबि रहलअ छअ मास्‌अ।
केहु जे कांदे केउटा जन्‌म जनम ह
केहु त्‌अ कांदे डेड़ह पहर राति
भिनिसारे खंपा चिकिनाइ
अहि रे माञ बुढ़ि काँदइए जनम–जनम ह
बहिने त्‌अ कांदे छअ मास रे
तिरिआ जे कांदे भाला डेड़ह पहर राति
भिनिसारे खंपा चिकिनाइ

**करम गीत–**

जाउआ डालि, जाउआ डालि
अरे कहु डालि दुखअ–सुखअ बात।
किआ कहबँ डालि दुखअ–सुखअ बात्‌अ ह

अ–रे मात्र मरल्अ छअ मास

बापें मके बिहा देल सात् समुंदर पारे

अ–रे, खबर पाअलँ छअ मास

आसे–पासे रहेइतेलें रका खबर पाउएइ तेलँ

अ–रे छ्अ रे मासे माअएरि खबर

हकीकत में ये वन–जंगल के वासिन्दे थे, लेकिन उस जमाने की नदिओं में साल भर भरा–पूरा पानी होता था। नदी के तौर पर सबरनखा (सुवर्णरेखा) को लें। आज पानी कम बहता दिखाई देता है, लेकिन प्राचीनकाल में पानी भरा पूरा बहता था। जलवायु परिवर्तन के चलते आज आनुपातिक वर्षापात कम होती है, प्राचीन काल में यह स्थिति नहीं थी। उस जमाने में अति आवश्यक होने पर ही हमारे कबिलाई लोग नदियों को पार करते थे। उन्होंने समुद्र का नाम या चर्चा सुनी होगी, लेकिन उनके लिए यह नदी ही समुद्र समान थी। प्रसंगवश उल्लेखनीय है, आधुनिक काल में भी राँची जिला के सोनाहातु प्रखंड के गांव जो सबरनाखा (स्वर्णरेखा) से पूर्व है उनको वर्षाकाल में नदी पार करना मुश्किल था। उस स्थिति में भरी सबरनाखा (सुवर्णरेखा) उनके लिए समुद्र समान थी।

कहने का तात्पर्य हमारे यहां कालगणना अति प्राचीन काल से प्रचलित है चूँकि कृषि युग को लगभग 7000 वर्ष पूर्व माना गया है एवं कुड़मी ही कृषि के जनक हैं तो कुड़माली को 7000 वर्ष के पूर्व की भाषा मानना ही होगा।

चूँकि इसकी स्वतंत्र कृषि आधारित जीवन धारा रही। अतः भाषा का भी स्वतंत्र प्रवाह रहा। इसलिए इसकी उत्पति न संस्कृत से, न प्राकृत न अपभ्रंश से मानी जा सकती है। अन्य महत्वपूर्ण उल्लेखनीय विषय यह है कि ये कबीले (मुंडा, संथाल) आदि अन्यत्र से यहाँ जीवन पद्धति शुरू किये यह समर्थन योग्य नहीं है। इसके समर्थन में बहुत सी बातें कही जा सकती हैं आधुनिक रिसर्च बताते हैं :

"दक्षिण एशिया में पायी जानेवाली अनुवंशिक विविधता की उत्पति 35000 वर्ष पूर्व इंडो आर्य के भारत आने से पहले ही हो चुकी थी।" राढ़ सभ्यता सिद्धांत (सभ्यता की बिंदु राढ़) के प्रतिपादक प्रभात रंजन सरकार कहते हैं " मानव प्रजाति का जन्म पश्चिम राढ़ अंचल स्वर्ण रेखा के तटवर्ती

दामोदर नदी द्वारा आवेस्टित उपत्यका में हुआ था। इस सिद्धान्त के अनुसार यहीं से मानव प्रजाति का कालक्रम में अन्यत्र गमन भी हुआ।''

हैदराबाद स्थित सेंटर फॉर सेल्यूलर एंड मालिक्युलर बायोलॉजी की ओर से कराये गए अध्ययन से खुलासा हुआ है कि दक्षिण एशिया दो पितृ कुल का ठिकाना था। इसमें से एक का प्रसार दक्षिण, पश्चिम एशिया, मय पूर्व और पूर्व कॉकेशस की ओर हुआ जब कि दूसरा घटक दक्षिण एशिया में ही रूका। कालांतर में ही यही घटक भारत की 50 प्रतिशत से ज्यादा जनसंख्या का पूर्वज बना।

अस्तु यहाँ के कबीलाओं की भाषा (कुड़माली, मुंडारी आदि) इस जमीन की भाषा है एवं सुप्राचीन। इन्होंने अन्य भाषाओं की रीढ़ को बनाया है। दिया अधिक लिया कम है।

भाषाओं की प्राचीनता आज भी इनके द्वारा प्रयोग में लाये जानेवाले शब्दों में लक्षित हैं। उदाहरणस्वरूप कुड़माली में :

| | | |
|---|---|---|
| पेटे | ठंगरअ | रूंइटु |
| संघड़ा | हिटिग–टिंड़िंग | फुँसिआड़ा भुरूंग |
| रेनहा | दांफिन | गुड़कु |
| खाड़रा | ठेर (ठनका) | हेड़चेंग– हेड़चेंग |

नोट : समंदर भरल छः मास के प्रयोग से गलतफहमी नहीं होनी चाहिए कि कुड़मी कबीला समुंदर किनारे निवास करता था।

दैनिक व्यवहार में आनेवाले शब्दों को देखें

| | | | |
|---|---|---|---|
| हला/माड़ना | लड़हि | लुका, पागरा | |
| डाडु/ठेकरा | पाटि | ठेंठि | गठ |
| ढकनि | जांता | पांचन | हंसलि |
| डांटि | ढेंकि | डांटा | चंदरअ धइर |
| खुसनि | कदाइर | झुला/अंगा लुलुक | |
| चाटु | हार–फार | खंच | बाजु |
| गिना | जुंआट | खंच | बंगरि |
| छिपा | जति | पंग–अंकुर | काकन |

| | | | |
|---|---|---|---|
| छिपि / डुभि | सांइड / इस | हेचार | पेछुआ |
| डुभा / छिपा | अंद | डाइर | सांखा |
| | सग | खदा | |
| घटि | उदल | पंइरि | |
| ठिलिआ | बिछिया / झूंटिया | | धाड़पि |
| गागरा | मकरि | चंउरि | |
| बटलहि | निघा | मटर कांटा | |
| सुप | बुरूञ | ढाभना / तांतरा | |
| दउरा | सेंढ़ि | बड़ा | |
| डाला | सुनुम–सुनुम | सथुल | |
| टंकि | बाड़हेन | पिरका | |
| बउकि | हेंड़चेंग हेड़चेंग | पेइरका | |
| खाँचि | रका | लेबदा | |
| ढाकि | दरफुचक | लुठु | |
| डिमनि | ढकड़कुचा | जुकड़ | |
| डेलि | ऐंड़िया | गेजड़अ | |
| हाड़का | अल्हानी | थेंकामुंह | |
| ठेंठि | मुधना | ढिबअढेंकि | |
| फेरकि | मकरि | गसउआल | |

इसी प्रकार के अन्य कबीलाई भाषा जैसे मुंडारी, संथाली, हो, खड़िया व कुडुख आदि में भी मिल सकते हैं। अतः कबिलाई भाषाएं प्राचीन हैं।

चूंकि मानव सभ्यता के उषाकाल में सब मानवों की स्थिति एक जैसी थी। करीबन एक ही परिस्थिति का उन्होंने सामना किया। अतः उनमें मेल होना लाजिमी है। श्री प्रभात रंजन सरकार ने तो कहा ही है कि सभी भाषाएँ एक सूत्र में पिरोई हुई हैं जैसे सभी भाषाओं को एक सूत्र में पिरोकर मणिमाला बनाई जा सकती है। हो सकता है हम उस सूत्र को नहीं जानते हैं। हम यहां कबीलाई कुड़माली, मुण्डारी, कुडुख और मालतो में मेल को दर्शा रहे हैं।

| मुंडारी | कुड़माली | हिन्दी |
|---|---|---|
| अइगो | हाइगअ | दर्दसूचक शब्द |
| अकड़ा | आखड़ा | अखाड़ा |
| अकुआ | आंकुरा | अन्नों का अंकुर होना |
| अगराव | अगरा | अनिच्छा प्रकट करना |
| अगड़–बगड़ | अगड़–बगड़ | बेठिकाने की बात |
| अगिनसाल | अगनिसाल | देर से पकने वाला धान |
| अङगा | अंगा | पहिरावा |
| अचड़ा | आछड़ा | कादो जमीन को अच्छी तरह जोत कर समतल कर धान बुनना |
| अजगड़ | अजगड़ | बड़ा, विशाल, बहुत विशाल |
| अजा | आजा | बाप का पिता |
| अजि | आंजि | दादी |
| अजउड़ि, | आजाड़ | किसी बर्तन या टोकरी आदि को खाली करना |
| अटकब | अटक | रोकना, रोक रखना। |
| अटा | अटा | चिंड़िया फंसाने का लस्सा |
| अटा | अटा | शिकार में छिप के बैठने का स्थान |
| अटि | आंटि | धान घांस या पुआल का पुलिंदा |
| अटु | आंटु | आम की गुठली |
| अरना | आरना | सांड़, बैल, काड़ा भेड़ आदि में बलिष्ट तेज एवं लड़नेवाला |
| अला | उला | आग में हलकाई से भुनना |
| अड़ा–साड़ा | अरा–सरा, | एक समान, करीब करीब |

| | | |
|---|---|---|
| | | बराबर |
| अड़ि | आइड़ | सीमा, मेड़, |
| आड़े | आड़े | तिरछा |
| आंट | आंट | जोखिम, कठिन, संकट |
| उदल | उदल | बैल गाड़ी या सगड़ की धुरी पर लगी हुई दो लम्बी लकड़ी |
| एरे | एरे | शुभ–अशुभ का लक्षण |
| ककना | काकना | हाथ में पहनेवाला हार |
| कका | काका | पिता का छोटा भाई |
| कका, गुंगु, | काका–गुंगु | चाचा के लड़का या लड़की |
| ककि | काकि | चाची |
| कतु | कातु | बांस छिलने वाला छुरी |
| कपटा | कपाट | किवाड़ / पल्ला |
| करइ / खरइ | कडरा | पेशाब करते समय का जलन |
| कसबि | कसबि | वेश्या |
| किअः | किआ | सिंदुर की डिबिया |
| कुदा | कुधा | ढेइर |
| कुहु | कुहु | आम गुठलिका गुद्दा |
| खेचा | खेंजा | भाग |
| केड़ा | काड़ा | भैंसा |
| खन | खन | समय |
| खण्डि | खंडि | 20 पैला या आधा मन का नाप |
| खवासिन | खउआसिन | बिना विवाह के रखी हुई स्त्री |
| खिति | खेति | उपज |
| खुटब | खुंटा | बांधना |
| खुद्दि | खुदि | अन्न के टूटे टुकड़े |
| खेमटा | खेमटा | एक प्रकार का नाच |
| गइ गोठ | गाइ गठ | गायों का झुंड |
| गचा | गाचा | जुर्माना |
| गदर | गादर | फल, मटर मकई आदि का |

| | | |
|---|---|---|
| | | अधपका अवस्था |
| गदला | गेंदला | मैला |
| गया | गइआ | बधिया किया हुआ मुर्गा |
| गुप्ति | गुपति | तेज नोंक वाली सीधा तलवार |
| गुड़दा | गुड़दा | मारना |
| गोसो | गसअ | मुरझाना |
| गोठ | गठ | झुंड |
| गेजव | गेंजा | किसी चीज का प्राकृतिक दशा का नष्ट करना। |
| चकुलि | चकलि | बिना हुआ, लकड़ी के गोल फ्रेम में मजबूत रस्सी में जो बहिगों के दोनों ओर लटका कर मिट्टी या अन्य चीजें ढोया जाता है। |
| चटनाहा | चाटहा | लोभी, लालची |
| चला | चाला | हांडिया, छाकनी |
| चुकुमुकु | चुकुमुकु | घुटना मोड़कर बैठना |
| चुपियाव | चपाल | किसी चीज का स्वाद पाकर बार बार पाने की आशा |
| चुर | छुर | एक प्रकार का खेल |
| चुइ | चुइ | गाय का छोटा बछड़ा/बाछी |
| चेटगर | चेटकार | चालाक, निडर |
| चेपा | चापा | घास सहित काटी हुई मिट्टी की उपरी तह |
| चैला | चेइला | लकड़ी के छोटे टुकड़े |
| चोपा | छपा | काटना |
| चोम चोम | थम थम | गुस्से के मारे गंभीर |
| चौड़ल | चउड़ल | पालकी |
| चोंया | चञआं | मछली के शरीर का छिलका |
| छकव | छाका | धोखा देना |
| छन्दि | छांदा | रस्सी से पैरों को बांधना |

| | | |
|---|---|---|
| छुतका | छुतका | योनी से सफेद श्लेष्म का बहना |
| छेंकद | छेंका | रोकना |
| जड़ा | जाड़ा | एरेन्डी |
| जन्जरा | झांझरा | कपड़ा या पत्ता में छेद छेद करना |
| झलिया | झाइल | लम्बा |
| जुला | झुला | औरतों का जाकिट |
| जू | जाञ | जोर देते हुए आदेश |
| जे से | जेटा सेटा | निरर्थक बातें |
| जोगाड़ | जगाड़ | प्रबंध करना |
| जोबला | जभि | दलदल, कीचड़ |
| जोवा | जआ | गाल |
| झपकेन | झप करि | अचानक |
| झपटव | झपटा | एकाएक आक्रमण करना |
| झम–झम, | झम–झम | एक प्रकार का ध्वनि |
| झांक | झांक | लतरों को चढ़ाने के जमीन पर गाड़ा गया डाली |
| झांका | झांका | खिंचना |
| झुकुर | जुकुर | वैसा ही |
| झुमसव | झंउरा | मुरझाना |
| झोलोंगो | झंगल्अ | रस्सी का धागा अपने स्थान से खिसक कर ढीला हो जाना |
| टन्कव | टनका | पुनः स्वस्थ होना, मजबुत होना |
| ठसकव | ठसका | कमजोर डाली |
| टुइला | टुइला | एक ही तार वाला बाजा |
| टुङकि | टंकि | एक प्रकार की टोकरी |
| टुटकि | ठुटकु | घिसा हुआ झाड़ु |
| टुपअः | टुपा | छोटी टोकरी |
| टुवर | टुअर | अनाथ |
| टेन्ठा | टेनठा | स्वेच्छाचारी, हटधर्मी |

| | | |
|---|---|---|
| टोना | टना | लकड़ी को नाप कर काटना |
| टेर | ठेर | बज्रपात |
| टोर | ठर | चोंच |
| ठौका | ठउका | मात्र |
| ठांव | ठाञ | स्थान, जगह |
| डगुल–डगुल | डुगुल–डुगुल | हिलना हिलना |
| डहर | डहर | रास्ता, पगडंडी |
| डिडि | डिडि | पैर के अंगूठे के बल पर खड़ा होना |
| डिमनि | डेमनि | अनाज रखने का उंचा टोकरी |
| ढिलुवा | ढेलुआ | झूला |
| डुरियब | डुरिआ | जानवरों को खेद कर ले जाना |
| डेगव | डेगा | उछलना, कूदना |
| डेङगा | डेंगा | मासिक धर्म के समय औरतों द्वारा पहिना जाने वाला कपड़ा का टुकड़ा |
| ढिका | ढिका | जम जाना |
| ति | ति / टम | हाथ |
| तिति | तिति | मुर्गियों का बुलाने का शब्द |
| तिरतिराल | तिरतिराइ | तेजी से |
| तिरमिर | तिरमिर | मूर्छित |
| तुबिद | तुबा | मुंह, थैली या छेद में किसी चीज को बलपूर्वक ठूसना |
| तुम्बा | तुमबा | सूखा लौकी से बना हुआ |
| तेपड़अ | थेपड़अ | चूतड़ के सहारे बैठना |
| तोपा | तपा | गाड़ना |
| देदे | देदे | जुआंट में जुड़े हुए बायीं ओर के बैल या काड़ा को पुकारे जाने वाला शब्द |
| ददल | दुलका | मारना |
| दरिया | दरिआ | नदी या तालाब का विस्तृत गहराई |

| | | |
|---|---|---|
| दिनाकि | दिनाम | हररोज, प्रतिदिन |
| दुन्दुर | दुंदरा | धमकाना |
| दोदद | ददि / दंदा | अस्वीकार करना |
| दोहाइ | दहाइ | विन्ती करना, नम्र निवेदन |
| धरती आबा | धरति बा | जगत पिता |
| धुसरी | धुसरी | देर से पकाने वाला धान |
| नेल | लिलिआ | देखना, दिखाना |
| पखार | पाखाल | पानी भात |
| पतिया | पेतिआ | विश्वास करना या दिलाना |
| पलवा | पालुआ | इमली के पत्तियों का चूर्ण |
| फहम | फहम | स्मरण करना, याद करना |
| पहड़ु | पाहुड़ / पाड़ु | हरा हुआ मुर्गा |
| पुचु | पुचु | किसी छेद से निकलना |
| पुनि | पुनि | नन्हें बच्चों की एक बीमारी |
| बकसिस | बकसिस | ईनाम |
| बकिं | बकिं | रोपे हुए धान में सफेद रोग |
| बच्छरू | बाछुर | गाय का बच्चा / बच्ची |
| बड़ा | बाड़ा / बड़ु | पिता का बड़े भाई |
| बथइन | बाथान | पशुओं को रखने का स्थान |
| बनार | बानार | पता |
| बड़ाम–बोगा | बड़ाम भुत | रोग भूत |
| बिनिड़व | बिड़न | परीक्षा |
| बुका | बुक | दिल, हृदय |
| बेड़ा | बेड़ा / बहाल | निचली भूमि |
| बेरा | बेरा | हाथ पैर में पहननेवाला कड़ा |
| बेस | बेस | अच्छा |
| भेदिया | भेदिआ | जासूस |
| महुरा | महुरा | बिष / जहर |
| मांड़ा | मड़ा | मानव का शव |
| मन्दुलि | मादलि | तांबा का बना हुआ एक प्रकार का हार |

| | | |
|---|---|---|
| महरग | महरग | आकाल |
| मना | माना | निषेध |
| मर तोबे | मार तबे | कुछ समझौते के बाद कहना |
| रण्डि | राड़ि | बिधवा |
| रदा | रादा | परत |
| रहा | रह | ठहरो |
| रहि | रहि | छुटकारा |
| रा | रा | अभी ठहरो |
| रूजि | रजअ | योनी |
| रोका | रका | ताजा |
| रोका–तोका | रका–तका, | तुरन्त जल्दी |
| रोंगो | रंगअ | अधिक जल जाना |
| लहंगा | लहंगा | घुटना तक का पहरावा |
| लुति | लुति | नन्हें मक्खी |
| लुद | लुदु | नरम, मुलायम |
| लुन्डा | लुंड़ा | चिथड़ा जो घर पोंछने में लाया जाता है। |
| लेका | लेखेन | ऐसा, इस प्रकार |
| लेका | लेखान | गिनना |
| लेंगा | लेंगा | बायां |
| लेटे | लेटुआ | अधिक पक जाना |
| संकड़ि | संखड़ि | भोजन करने के बाद थाली या हाथ में भोजन का छोटे अंश का रह जाना |
| संगा | संगि | मित्र, साथी |
| संगति | संगति | मित्रता |
| संगि | सांगि | बहुत, अनेक |
| सपाड़व, | सनिपात | ठंड से होने वाली बीमारी |
| सलगव | सलगा | आग धराना |
| सरसराल | सरसराइ | तीव्रगति से चल देना |
| सल | सलहअ | सीधा |

| | | |
|---|---|---|
| सड़िता | सेड़ता | डिबरी का फीता |
| सिगिल–बिगिल | सिगिल–बिगिल, | झुंड के झुंड |
| सिंगर | सिंगार | अलंकार, आभूषण |
| सिन्दुरि | सिंदुर | सिंदुर |
| सिरजव | सिरजा | सृष्टि, उत्पन्न करना |
| सुगंड़ | सुघड़ | सुंदर, मनोहर |
| सुनुसार | सुंसार | सेवा करना |
| सो | सउ | मुर्गियों को भगाने का शब्द |
| हदा–हदा, | हद–हद | गिरते हुए जल का शब्द कोलाहल |
| हप्ता | हापता | सप्ताह |
| हंसुलि | हांसलि | धातु से बना गले का हार |
| हिचड़व | हिंचड़ा | झटका देकर छुड़ा लेना |
| हिनसति | हिनसति | तुच्छ समझना निरादर |
| हुहि | हहि | हल्ला गुल्ला |
| हुड़का | हुड़का | लकड़ी का बेड़ा |
| हेइ | हेइ | हां |
| हेवा | हेउआ | अभ्यास, आदत |
| हेला | हेला | गाय, बैल, बकरी का बुना हुआ खेत पर धावा करना या टूट पड़ना। |

| कुड़मालि | कुड़ुख | हिन्दी |
|---|---|---|
| चुइल | चुट्टी | केश / बाल |
| चुंदि | चुंदि | शिखा |
| महड़ा | मुंहि | चेहरा |
| कापाड़ | कपड़े | ललाट |
| कनखि | खन्न | आंख |
| गाल | गल्ले | गाल |
| बाइ | बइ | मुंह |
| चउहा | चौवहा | जबड़ा |
| बाजु | बड़ि | बांह |

| | | |
|---|---|---|
| आंगुर | अंगलि | अंगुलि |
| छाति / बुक | छति | सीना / छाती |
| धुक धुकि, | धुक धुकि | सीने पर धक धक करने वाली जगह |
| डांड़ा / कमर | कड़मा, | कमर |
| टेंग / गड़ | खेड़े | पांव / पैर |
| चाम | चपटा | चमड़ा |
| करजि | करजि | कलेजा |
| नाड़ि | नाड़ि | |
| खुर | खुरि | खुर |
| पांज / दाप | दब्बि | पद चिन्ह |
| ठर | ठोर | चोंच |
| डेना | डेना | पंख |
| मड़ा | मड़ा | लाश, मुर्दा |
| लर | लखो | आंसु |
| साड़ा | सड़ा | शब्द |
| काथा | कत्था | बोली |
| सांड़ / महादेव | सांढ़, | सांड़ |
| हेड़ा | एड़ा | बकरी |
| मेढ़ा | मेढ़ो | भेड़ / भेड़ी |
| बिलाइ | बेरखा | बिल्ली |
| मुसा / रेकटे | ओसगा | चूहा / मुसा |
| कउआ | खाखा | कौवा |
| चिल | चेनखो | चील |
| पका | पोक | कीड़ा |
| भइंस / मंइस | भंइस | भैंस |
| लकड़ा | लकड़ा | बाघ / शेर |
| गेड़े | गेंड़े | बतक |
| हांस | हंसा | हंस |
| खुखड़ा / सांड़हा | कोकरो | मुर्गा |
| पंडकि | पंड़कि | पाण्डुक |

| | | |
|---|---|---|
| बादलि | भदड़ि | चमगादड़ |
| सुगा/रूपु | रूपु | तोता |
| मेजुर | मिंजुर | मोर |
| पेचा | पेच्चा | उल्लू |
| गिरधिन | गिदहि | गीध |
| काछिम | कछुवा | कछुवा |
| चञआ | चोएयां | चोइंठा |
| खाँखड़ा | ककड़ो | केंकड़ा |
| गेंड़हि | घुंघहि | घोंषा |
| मुतरू | मकरा | मकड़ा |
| भुकचुंदि | भगजुगनि | जुगनू |
| बा | बाबा | पिता |
| बड्ड/गुंगु | गुंगु | पिता के बड़े भाई |
| आइ | अयो | माता |
| भाइ | भाइस | भाई |
| बहिन | बहिन | बहन |
| काका | काका | चाचा |
| फुफा | फुफा | फूफा |
| मामा | ममु | मामा |
| मसि | मसि | मौसी |
| काकि | काकि | चाची |
| फुफु | फुफु | बाप की बहन |
| मसा | मोसा | मां की बहन का पति |
| मामि | ताचि | मामी |
| संगि | संगेस | मित्र |
| सारेइ | सखुआ | साल वृक्ष |
| पिपर | पिपर | पीपल |
| लड़ंग | लंड़गारउ | लता |
| फंइडका | बी | अंडा |
| बुलुंग | बेक | नमक |
| कदल/कइराकेड़ा | केला | |

| | | |
|---|---|---|
| जनाइर | जिन्होर | मकई |
| टेमरस | टमरस | अमरूद |
| छालि | छल्लि | छाली |
| कसइला / गुआ | कसैली, | सुपारी |
| अरखि | अरखि | शराब / दारू |
| तेंतेइर | तेंतालि | इमली |
| महुरा | महुरा | जहर |
| खसा | खत्रना | गिरना |
| केंदड़ा | केंदड़ना | सकना |
| धरा | धरना | पकड़ना |
| लेबदा / हेबड़ा | हेभेड़ना, | फेंकना |
| मुंदा | मुंधना | बन्द करना |
| रहा | रःअना | ठहरना |
| किना | खेंदना | खरीदना |
| बेचा | बीसना | बेचना |
| सिख | सिखिरना | सीखना |
| उरिआ / उचरा | ओरनःना | शुरू करना |
| रेंका | रेंकना | रेंकना |
| छिनगा | छिंड़ना | अलग करना |
| बुड़ा | बड़बःअना | नाश करना |
| अरजा | अरजआना | कमाना |
| नेउता | नेवतअना | न्योतादेना |
| संखड़ि | संखड़ि | खाने के बचे भोजन के टुकड़े |
| गबर | गोबारि | गबर |
| थुंका | तुप्पना | थूकना |
| चाबा | चबना | चबाना |
| सकता | सकतआना | कसना |
| चांड़े | चांड़े | शीघ्र |
| डहरेता | डहरे, ईकुस | मुसाफिर |
| डंगेइता | डोंगाइतस | नाविक |
| घांस | घांसि | घास |

| | | |
|---|---|---|
| डाइर | डाड़ा | डाल |
| काठ | कंक | लकड़ी |
| बाकला | बोकला | वक्कल |
| चाकला | चाकला | छिलका |
| चपा | चपा | छिलका |
| खंच | खोर | कलि |
| रसि | रासि | रस |
| आंठु | अठु | गुठली |
| टुअर | टुवर | अनाथ |
| डेंठि | डंटि | डठल |
| फुल | पुंप | पुष्प |
| **मालतो** | **कुड़माली** | **हिन्दी** |
| अकाबका | अकाबका | जल्दी |
| अकालें | अकाले | आकाल |
| अकनि | एखनेइ | अभी |
| अंगा | अंगा | कमीज |
| अदा | आधा | आधा |
| अदकपाड़ि | आदकापाड़ि | आधा सिर का दर्द |
| अपुसे | आपुसे | परस्पर |
| अम्बाड़े | आमड़ा | आमड़े का फल |
| अमसि | अमसि | आम के सूखे टुकड़े |
| अर | आर | और |
| अर्सि | आरसि | दर्पण |
| ईडे | इदिगे | यह जगह |
| ईसे | इस | हरिस |
| उजाड़ेइ | उजाड़ | नष्ट करना |
| उड़ियार | उड़िआ | उड़ना |
| उपुर | उपर | ऊपर |
| एकदम | एकदम | एकदम |
| कस | कांसा | कड़ुआ होना |
| कके | कांकइ | कंघी |

| | | |
|---|---|---|
| कक सियले | खेंखि | सियार लोमड़ी |
| कचा | काचा | लंगोटी |
| कचमि | काछिम | कछुआ |
| कडरू | कडरू | पंडवा |
| कपाड़े | कापाड़े | ललाट |
| कपलि | कपिल | नील गाय |
| कबकुबि | गुबगुबि | एकतारा |
| कमाने | कामान | दशकर्म |
| कले | कलाइ | उरद दाल |
| कसि | खासि | बधिया |
| किरिया | किरा | शपथ, कसम |
| किसमे | किसिम | प्रकार |
| किदक | खिद खिद, | टुकड़े टुकड़े करना |
| कीले | खिल, | परती भूमि |
| कुचड़ि | कुंचड़ि | अनाज रखाने के लिए बनी टोकरी |
| कुटा | खुंट | ठूंठ |
| कुद्रमि | कुदरूम | पटसन का पौधा |
| कुलि | कुलहि | गली |
| कुलपे | कुलुप | ताला |
| कुलप कटि | कुलुक–काटि | चाबी |
| कुवा | कुआं | कुआं |
| कूमें | कूमनि | मछली रखने का खांचा |
| केते | खेत | धान का खेत |
| कैनद्रे | केंदर | वाद्य यंत्र |
| कोचा | कचा | किचन गार्डेन |
| कोचड़ा'– | कचड़ा | महुआ का फल |
| कोटबाड़े | कटउआड़ | गांव का मुखिया |
| कोड़ा | कड़ा | खुदाई करना |
| कोदा | कद्अ | एक प्रकार का अनाज |
| कोदमे–कदम | एक वृक्ष विशेष तथा इसके फल | |

| मालतो | कुड़माली | हिन्दी |
|---|---|---|
| कोनड़ि | कनढ़ि | कली |
| कोपा | खेंपा | जूड़ा |
| कोयरि | कुइलि | कोयल |
| कोर्ला | कारला | करेला |
| कोड़ामें | खड़म | खड़ाऊ |
| कोलमि | कलमि | एक प्रकार का साग |
| कोसटे | कसटें | कष्ट |
| गटा | गटा | ठोस वस्तु |
| कौरे | खेइर | कत्था |
| गड़ा | गड़ा | पहाड़ी समतल भूमि |
| कौले | खल | खोखला |
| गोब्रि | गबर | गोबर |
| गोसानि | गुसाला | भगवान |
| चक / | चकाचख | तेज करना |
| गोदड़ | गाधड़ | गाढ़ा |
| गड़टि | गेंङटि | चूना पत्थर |
| गजाले | गजा | नोकदार / तेज |
| गाजुजवा | गंजुआ | बटुआ |
| गडया | गाड़हिआ | छोटा पोखर |
| गनडा | गनडि | तना |
| गनदि | गंधि | पंनगा |
| गबनि | गाबिन | गाभिन |
| गमि | गमा | अनुमान करना |
| गरामि | गराम | गाँव |
| गरेयि | गरअइ | एक प्रकार की मछली |
| गरि | गरि | गालना |
| गला | गाल | गाल |
| गामाचि | घुमउरि | घमौरी |
| गायदु | गाइ | गाय |
| गुति | गुता | मुक्का मारना |

| | | |
|---|---|---|
| गुनडे | गुंडा | चूरा, पाउडर |
| गुन्डरि | गुंडरि | बटेर |
| गुवा | गुआ | सुपारी |
| गुसटि | गुसटि | बंश, समाज |
| गेन्द्रु | गिदरा | शिशु |
| छोटा पोखर | चकि | चखना |
| चप्रि | छोटा | छप्पर |
| चमबे | चाम | चमड़ा |
| चरार | चरा | चरना |
| चड़ार | चढ़ा | चढ़ना |
| चले | छाल | छिलका |
| चवगा | चहुआ | जबड़ा |
| चसा मले | चासा | किसान |
| चहि | चाहा | चाहना |
| चाकोरे | चाकर | नौकर |
| गुंगु | घंग | पतों की बनी छतरी |
| चाड़े | चाइड | जरूरी आवश्यक |
| चानदो | चाँद | चन्द्रमा |
| चानि | छाना | छानना |
| चारे | चारा | चार |
| चाले | चाल | आमान |
| चिति | चिति | एक प्रकार का सांप |
| चिना | चिनहा | चिन्ह |
| चिले | चिल | चील |
| चीरि | चिरा | फाड़ना |
| चुका | चुका | सकोरा |
| चुकड़ि | चुकरि | छोटा सकोरा |
| चुचु | चुचि | सकोरा |
| चुर्गर | चंगरा | टपकना |
| चुलहा | चुलहा | चूल्हा |
| चुरो | चुरगिन | भूत–प्रेत |

| | | |
|---|---|---|
| चेया | छांहेइर | छाया |
| चेरार | छेरा | दस्त होना |
| चोंगा | चंगा | नठो |
| चोपा | चपा | भूसा |
| चोलो | चालि | पिछवाड़ा |
| चाड़े | चाइड़ | जरूरी, आवश्यक |
| जगा | जाइगा | जगह |
| जबरा | जबरा | कूड़ा–कर्कट |
| जमबु | जाम | जामुन का फल पेड़ |
| जामित्रि | जामिर | एक प्रकार का फल |
| जर्ना | झरना | झरना |
| जड़े | झेइड़ | बारिस |
| जवा | जउआ | शराब के लिए |
| जगजगर | जागर | चमकना |
| जामे | जांउआञ | दामाद, जमाई |
| जरि | भिभरि | जंजीर |
| जितो | जइत | रस्सी |
| जिदया | जिघा | अकखड़ |
| जिनसे | जिनिस | चीजें |
| जुगि | जुगि | रंगीन धागा बेचने वाली |
| जुरि | झुड़ि | टहनियां |
| जेपला | झपड़ा | लम्बे बाल वाला |
| जोका | जक | बराबर |
| जोकोन | जखन | जब |
| जोगि | जगा | निगरानी करना |
| जोड़लो | झंगलअ | ढीला |
| जगड़ा | झगड़ा | |
| जोपी | झंपा | गुच्छा |
| जन्जरा | झांझरा | जाली |
| जौड़ार | जड़ि | सहवास करना |
| जता | जांता | चककी |

| | | |
|---|---|---|
| जौड़ोनदेर | जड़िदार | जोड़ा |
| जनगुरू | जानगुरू | ज्योतिषी |
| जौड़ेया | जुड़िया | माला |
| जनला | जानला | खिड़की |
| **<u>मालतो</u>** | **<u>कुड़माली</u>** | **<u>हिन्दी</u>** |
| टका | टाका | धन, रूपया |
| टटका | टाटका | ताजा |
| टपा | टापा | खांचा |
| टिपि | ठेपि | कीप |
| टिलहा | टिलहा | टीला |
| टीके | ठिके | ठीक, उचित |
| टुटा रौगे | ठुंठा रग | कोढ़ |
| टुपला | टुपा | छोटी टोकरी |
| टूञे | टुञ | मंगरा |
| टेकार | टेका | रोका जाना |
| टेरा | टेरा | भैंगा |
| टेना | टेना | तीसरा |
| टोंगि | टंग | कबूतर खाना |
| टोपा | ठपा | बूंद |
| डंगा | डांगा | मैदानी जमीन |
| डबा | डबा | खट्टा फल |
| डड़कया | डेंड़का | एक प्रकार की छोटी मछली |
| डला | डाला | एक प्रकार की टोकरी |
| डहरे | डहर | रास्ता |
| डाकिन | डाकिन | डायन |
| डाकि | डाका | बुलाना |
| डाड़ि | डाइर | शाखा, टेहनी |
| डिलि | डेलि | अनाज रखने की वस्तु |
| डुपु | ढिपि | टापु |
| डुबि | डुभि | छोटा बर्तन |
| डेकि | ढेंकि | ढेंकी |

| | | |
|---|---|---|
| डेबचु | ढेबचु | एक प्रकार की पक्षी |
| डेमबि | डेमबअ | अधपका |
| डेरा | डेरा | तकली |
| डेरा | डेरा | ठहरने की जगह |
| डेला | ढेलका | ढेला |
| डैरि | ढेरि | भूसका ढेर |
| डेनडा | ढंड़ा | बांबी |
| तप्ति | थापड़ि | तालियां बजाना |
| ताड़ि | ताड़ा | खींच कर अलग करना |
| तालु | तालु | तालु |
| तेतलि | तेंतेइर | इमली |
| तेबे | तबे | तब |
| दगा | दागा | धोखा |
| दिने | दिने | दिन में |
| दुदि | दुद | दुध |
| दोसना | दसना | चम्मच |
| नासा | नासा | नासा |
| नेहारे | नेहर | विनती |
| पकड़ि | पाकुड़ | एक वृक्ष विशेष |
| पन्जरि | पांजरि | पसली |
| पत्यार | पेतिआ | विश्वास करना |
| बदुड़े | बादलि | चमकीदड़ |
| परि | पारि | बारी |
| पसे | पस | अंजुली भर |
| बता | बाता | चिरा हुआ लकड़ी पतली |
| पस्तार | पसतान | पछताना |
| पहि | पाहि | पंक्ति लाईन |
| पागे | पाग | पगड़ी |
| पारे | फारे | हल का फाल |
| पारि | पारना | सकना |
| पिट | पिटा | मारना |

| | | |
|---|---|---|
| पिटा | पिठा | रोटी |
| पिनड़ा | पिंड़ा | बरामदा |
| पुलंगि | फुनगि | चिंगारी |
| पुसड़ि | फुसड़ि | मस्सा / फुंसी |
| पेर्वा | पेरूआ | कबूतर |
| पोका | पका | कीड़ा |
| पोड़ा | पड़ा | जला हुआ |
| पौने | पन | दहेज |
| बक्रा | बाखरा | हिस्सा, भाग |
| बगे | भाइग | भाग्य |
| बगना | भेगनि | भांजी |
| बचरि | बछरि | हर वर्ष |
| बचरू | बाछुर | बाछी, बछड़ा |
| बकिज | बांझि | बांझा |
| बड़ि | बाढ़ा | बढ़ना |
| बाप्रे | बाप रे | बार रे |
| बासि | बासि | बासी |
| बिजोबने | बिजुबन | एकान्त जंगल |
| बिटलहा | बिटलाहा | जाति बहिष्कृत |
| विदा | बिदा | बिदाई |
| बिहा | बिहा | ब्याह / शादी |
| बुकु | बुक | सीना / छाती |
| बुजि | बुझा | समझना |
| बुता | बुता | शक्ति / ताकत |
| बुसा | भुसा | भूसा |
| बेकु | भेंकु | फल की डण्डी |
| बेजात | बेजात | जाति |
| बेनटि | बेनठिन | सब्जी काटने का चाकू |
| बेरबादे | बेरबाद | बर्बादी |
| बेला | बेरा | समय |
| बेहड़ा | बेहड़ा | बहेड़ा पेड़ |

| | | |
|---|---|---|
| बैरनेइ | बेरहन | मजदूरी |
| बोका | बका | मूर्ख |
| बदबकि | बांचल खुंचल | बचा हुआ |
| बद्रे | भादर | भाद्र पद का महिना |
| बदलि | बादेइर | बादल |
| बदलेइ | बदलेइक | बदलना |
| बनि | बना / बाइड़ | बाढ़ |
| बनड़ा | बांड़ा | बिना पुंछ का |
| बनदा | बांधा | बन्दक |
| बबे | बाबइ | एक प्रकार का घास |
| बरापुरा | भरल–पुरल | भरपुर |
| बराहि | बरहइ | मोटा रस्सी |
| बरसार | भरसा | भरोसा करना |
| बड़बड़ार | बड़बड़ा | बड़बड़ाना |
| बड़सि | बनसि | बंसी |
| बबा | बा | मेरे पिता |
| बबना | भावना | चिंता |
| बसार | भासाल | बहा ले जाना |
| बागि | भागि | हिस्सा |
| बाच | बचका | कहना |
| बाटि | बांटा | बांटना |
| बाति | बात | बात रोग |
| बादि | बाधि | ढोलकी ढोरी |
| बोकला | बाकला | छाल |
| बोजा | बझा | बोझ |
| बोबि | बबा | गूंगा |
| बोरे | बर | दूल्हा |
| मकड़ारे | माकड़ा | मकड़ी |
| मगुरे | मागुर | एक प्रकार की मछली |
| मड़ि | मड़ा, | शमशान |
| मुतड़ा | मुतरा | बहुमूत्री |

| | | |
|---|---|---|
| मुलके | मुलुक | देश, मुल्क |
| मेहि | मेहि | महीन |
| रहि | रहि | ठहरन |
| रहड़ि | राहेड़ | एक प्रकार का दाल |
| राजि | राजि | मान जाना |
| राति | राइत | रात |
| रूप | रूपा | चांदी |
| रेहु | रेहु | रोहू मछली |
| रोकोमेः | रकम | प्रकार |
| रोहनि | रहिन | एक प्रकार का त्योहार |
| लाज | लाज | शर्म |
| लज्जा | लेंज | पूंछ |
| लआ | लाठा | लासा |
| लढ़ि | लाढ़ा | लादना |
| लाड़ि | लाड़ा | हिलाना |
| लुगा | लुगा | कपड़ा |
| लेकि | लिखि | लिखना |
| लेला | लेलहा | मूर्ख |
| लेलि | लेलहि | मूर्ख स्त्री |
| लोके | लक | लोग |
| सड़के | सड़प | सड़क |
| ससता | ससता | सस्ता |
| सहि | सहा | सहना |
| साचे | सांचा | सच, सत्य |
| साजार | साजा | सजना, तैयार होना |
| सामा | साउआं | एक प्रकार का घास |
| साड़ा | साला | साला |
| साड़ि | साड़ि | साड़ी |
| साड़ि | सालि | साली |
| साडु | साढु | पत्नी के बहन का पति |
| सिंगा | सिंगा | एक प्रकार की मछली |

| | | |
|---|---|---|
| सिदा | सिदहा | सीधा |
| सोजा | सजहा | सीधा |
| सोपि | संपा | सौंपना |
| सोबहा | सबहा | सुंदर, सुहावना |
| सोमाने | समान | बराबर |
| सोमतले | समतल | समतल |
| सोर्कड़ | सुरपा | चूसना |
| सोहरायि | सहरइ | जनजातियों का त्योहार |
| सौने | सन | पटसन |
| सकि | साखि | साक्षी, गवाह |
| सकड़ि | संखड़ि | जूठा खाना |
| संगा | सांगा | छप्पर में लगनेवाला मोटा लकड़ी |
| सद्रे | सदअरे | खुले आम |
| सपा | साफा | साफ |
| सबुरे | सबुर | धैर्य, सब्र |
| समटेइ | समटा | बेबस्था |
| समदड़ि | समधिन | समधिन |
| समछि | समदि | समधी |
| सरगे | सरग | स्वर्ग |

स्रोतः बी. पी. महापात्रा, माल्तो, हिन्दी इंगलिश डिक्शनरी

| कुड़माली | खड़िया | कोरवा | कोर्कू | हिन्दी |
|---|---|---|---|---|
| उंजरा | कोड़म | हाइर | उजजलि | अंजलि |
| आंडु | आनडोरी | बिलि | गेलि | अंडकोश |
| पटा | पोटा | लाइज | लाइजतु | आंत |
| आंगुर | अङ्गठि | अङगरि | अङगरि | आंगुली |
| टेहनि | कोहन | मुस | मुकोय | कोहनी |
| गाल / जआ | गलफु | जो | जोहम | गाल |
| तुतका | चेथि | तुतका | तुतका | सिर का पृष्ठभाग |
| महड़ा / चेहरा | रूमड़ | मेरमुड़ा | चेहरा | चेहरा |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तारू | ताड़ु | तरूआ | कोपरा | तालु |
| थापड़ | चापोड़ | | चटा | थप्पड़ |
| नख | रमट | नखि | नखि | नाखुन |
| बुकु | | | बुकिम | नाभि |
| पांजरा | पन्जारा | | | |
| लाइ | लाइ | | | पेट |
| बइआर | बहगड़ | बहगढ़ | | बलवान |
| बांह | बहां | | | भुजा |
| कापार / कपाल | | | कपाल | कपाल |
| गोधि / दिमाग | दिमाग | | मस्तिष्क | |
| मुठा | मोठि | मुठि | मुट्ठी | |
| गात / देह | देह | देह | देहिमि | शरीर |
| निकास / सांस | सुआसा | सास | सांस | श्वांस |
| ति / हात | ति | सोप | तिमु | हाथ |
| माञ | माता | माता | गोटि | चेचक |
| जर | कुलदा | जर | जरइअना | ज्वर |
| धारि | धरि | धरि | किनारी | |
| चेंथरा | चिरकिटे | | | कपड़े का टुकड़ा |
| आंचर | अंचरा | अंचरा | छोरत | आंचल |
| आङगा | कुरचा | अंगे | आङगा | कमीज |
| कांकुआ | कनासि | नकिज | नकेइ | कंघी |
| खंपा | खोपा | खोपा | तुलुमि | जूड़ा |
| फुलि | फुललि | नखुटि | चिचिआ | नथ |
| खएर | खएर | खरएर | खएर | कत्था |
| कइरा / कदल | केरा | केड़ा | केरा | केला |
| हेंड़िया | बाझरा | केसड़ा | हड़िया | चावल की शराब |
| जहर / महुरा | जहर | जहर | जहुरा | जहर |
| चपर | छालि | चोका | छोकला | छिलका |
| डुमेइर | लुआ | डुमरि | डुमरि | गूलर |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| माड़ | बालिड़ा | माड़ | माड | माड |
| महुआ | मुरून | मदकोम | मेतकम | महुआ |
| तुंबा | तुभा | तुमा | तुभा | लौकी |
| अरखि | झांरा | अरकखि | | शराब |

स्रोतः जनभाषा और साहित्य–हीरालाल शुक्ल, मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, भोपाल 1982

इस प्रकार गहन रिसर्च के द्वारा यह प्रमाणित किया जा सकता है कि सभी भाषाओं के मूल में मेल है। यहां विशेष तौर पर उल्लेख करना है कि गवेषणा गो+एषणा, गो–गोरू खोजना (कुड़माली गोरू खजा) का संबंध निश्चित तौर पर कबीलाई कुड़माली भाषा से है।

## भाषा व उपभाषा

अब तक की अवधारणा में मूल नदी की तरह मूल भाषा को ही मूल कहा जाता रहा तथा अन्यों को गौण कहा गया। मजे की बात है कि क्षेत्रीयता के तौर पर मौलिक होने के बावजूद कुछ भाषाओं को दबंग भाषा की उपभाषा कहा गया जो अनुचित था। जिन भाषाओं को हिन्दी की उपभाषा कहा जाता था। (अवधि, मगही, भोजपूरी, बुंदेली आदि) ये मूल भाषाएं भी अपनी मौलिकता के चलते आज सिर उठाकर खड़ी हो रही हैं। झारखण्ड की मौलिक भाषाएं भी कल तक दबी थीं, कल तक अपनी मातृभाषा में बात करना लज्जा जनक व हीनमान्यता प्रदर्शित करती थीं। लोग हिन्दी में बातचीत करना गौरव समझते थे। मातृभाषा आन्दोलन लहर ने मातृभाषा प्रेमियों को आन्दोलित किया और आज कबीलाई भाषायें भाषा के रूप में खड़ी हैं, और खड़ी हो रही हैं। मजेदार बात यह है कि इन्होंने दबंग भाषा को रस सुधा प्रदान किया। तो क्या इनका महत्व नकारने योग्य है?

उपनदी कोयल, गंडक, कोशी, सोन आदि का गंगा को विशालकाय व सतत् प्रवाहिता बनाने में यथेष्ट योगदान है। विशाल गंगा तट पर पनपी व पल्लवित प्रतिष्ठित हुई सभ्यता में इनका तो अंशदान है, लेकिन हमारा प्रश्न है – कोयल तट सोन तट, गंडक व कोशी किनारे पनपी सभ्यताओं में गंगा का क्या योगदान है? हमारा तर्क है कि जहां तक इन (तथाकथित उपनदियों) का अस्तित्व है वहां तक इनकी मान्यता होनी चाहिए।

ठीक उसी तरह कबिलाई भाषाओं को उप कहना कहां तक उचित है। इन्होंने तो दबंग व शिष्ट भाषाओं के निर्माण में अपना खून भी दिया, पानि भी दिया, ईंट के रूप में अपने शरीर का मांस भी दिया। इस प्रसंग में हम हिन्दी साहित्यकार श्री भगवान सिंह, दिल्ली की उक्ति है – "भारतीय भाषा का ज्ञान मुंडारी और द्रविड़ भाषाओं के बिना अधूरा है को पेश करना प्रासंगिक समझते हैं।

हमारी मान्यता है कि कबीलाई भाषाएं ही मूल हैं परिनिष्ठित होकर जो आज शिष्ट भाषा के रूप में स्थापित हैं वे इनकी ग्रहणी हैं। हमारा कहना है इन शिष्ट भाषाओं के शब्द इन्हीं से गृहित हैं। प्रचलित अवधारणा के अनुसार संस्कृत, प्राकृत व अपभ्रंश की धारा मान्य है। आर्य भाषाओं का जन्म व विकास इसी धारा से मान्य हो सकता है। लेकिन कबिलाई भाषाओं का जन्म व विकास इसी धारा से हुआ है यह तर्क संगत नहीं लगता, क्योंकि आर्यों के आगमन के पूर्व यहां कबिलाई भाषाओं, बोलियों का अस्तित्व था। भाषाविद इन्हें भाषा की मान्यता प्रदान करना नहीं चाहते क्योंकि उनके द्वारा प्रतिष्ठित भाषाई मानदंड में ये खरे नहीं उतर रहे होंगे। लेकिन इनके अस्तित्व को अस्वीकार करना युक्तिसंग नहीं है।

कबिलाई भाषाएं अपनी छन्दगति से टकराती, ठोकर खाती, दबंगाई का दंश झेलती प्राकृतिक आदान–प्रदान प्रथा को मानती आगे बढ़ती गई और अनुकूल समय आने पर अपनी पहचान बनाई तथा बना रही है। अनुकूल समय संबंधी बातों की चर्चा में यह कहना संगत होगा कि ईश्वरीय कृपा वर्षण हुआ। हम सभ्यता उन्मेष के काल को देखें तो भी यह तर्कसंगत लगेगा कि आखिर सभ्यता पनपी तो हर जगह वह भी करीब करीब समकालीन। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से समय सापेक्ष युगोपयोगी व प्रयोजन की क्रिया उन्हीं की कृपा से संपन्न होती है। साहित्य सृजन का युग, भक्ति उन्मेष का युग आदि भी इस दृष्टिकोण से विवेच्य है। आनंदमार्ग के प्रवक्ता के अनुसार सोशल डायनामिक्स के तीन कारण हैं:

1. जड़ संघात (Physical Clash)
2. भाव संघात (Psychic Clash)
3. वृहत का आकर्षण (Attraction of the great)

प्रथम दो कारणों को स्वभाविक तौर पर तो समझा जा सकता है। तृतीय कारण को समझने के लिए स्रष्टा और सृष्टि को समझना होगा। स्रष्टा ने सृष्टि बनाई। जीवन धारा को आगे बढ़ाने के लिए। अतः सर्जन संबंधी और अन्तिम लक्ष्य तक जाना भले ही जड़वादियों के समझ से परे है लेकिन प्राकृतिक नियम से यदि कहीं से कोई धारा निकलती है तो अंतिम बिन्दु तक पहुंचती है। गंगा गंगोत्री से निकलती है तो सागर संगम में पहुंचकर सागर से एकाकार हो जाती है। ठीक उसी प्रकार व्यक्ति व समय की जीवनगति धारा भी। कवि जयशंकर प्रसाद के शब्दों में

''इस जीवन का लक्ष्य नहीं
शान्त भवन में टिका रहना
किन्तु पहुंचना उस सीमा तक
किसके आगे कोई राह नहीं''

संकेत करता है कि जीवनधारा अंतिम लक्ष्य की ओर प्रधावित है –

छन्दमय मानव जीवन गतिधारा परम आनन्दमय सत्ता, सत्त–चित्त आनन्द, सत्ता, निराकार निर्गुण ब्रहम की ओर लक्षित है। यह सत्य है कि अनुकूल समय बनाना जगत नियंता परम शिवः पुरूषोत्तमः विश्वस्य केन्द्रम' का ही काम है।

उल्लेखनीय है कि धर्मगुरू श्री श्री आनन्दमूर्ति जी ने मातृभाषा की महत्ता और मौलिक भाषाओं की मार्यादा की चर्चा हमेशा की है। 60 और 70 के दशक में इन्होंने मौलिक भाषाओं को खड़ा करने के लिए अपने अनुयायियों को निर्देश दिया। इन्होंने तथाकथित हिन्दी की बोलियों (पारंपरिक भाषा विद्वों के अनुसार) को कभी बोली नहीं कहा – इन्होंने भाषा ही कहा– नतीजा आज सामने है ये गौरवमयी भाषा के रूप में खड़ी हो रही है कुछ हुई भी है। कहने का तात्पर्य है कि भाषा विकास में अनुकूल समय एक बहुत बड़ा तत्व है। परम पुरूष की इच्छा, महापुरूषों की इच्छाएं चिंतन धाराएं अनुकुल परिवेश तैयार करती हैं और जनमानस को स्पंदित करती हैं।

उपभाषा, आंचलिक भाषा या डायलेक्ट के संबंध में भाषा विद्वानों का मत है कि समय के आगे बढ़ने पर ये भाषा की अर्हताओं को पूरा करते हुए भाषा का रूप ले सकती हैं। यह कई उदाहरणों से स्पष्ट भी है। यथा भाषा

विज्ञानी प्रभात रंजन सरकार के अनुसार मगधी प्राकृत की दो कन्याओं के परिवार में

1. पश्चिमी अर्ध मगधी (मगही, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, नागपुरी)

2. पूर्वी अर्ध मगधी (असमिया, मैथिली, बांग्ला, उड़ीआ, अंगिका) है।

प्राकृत के जमाने में इन भाषाओं की अलग पहचान नहीं थी, लेकिन आज है, हो रही है प्रसंगतः झारखण्डी भाषाओं के संबंध में यह कहना होगा कि इन्हें उपेक्षा का दंश झेलना पड़ा, दबंगता का दमन सहना पड़ा, लेकिन अनुकूल परिवेश ने इन्हें सिर उठाने और पैरों पर खड़ा होने का मौका दिया। यह आश्चर्यजनक ही नहीं बल्कि ऐतिहासिक तथ्य है कि अपने राँची प्रवास के दौरान (1967–1970) आनन्द मार्ग के गुरूदेव प्रतिदिन प्रातः नागपुरी समाचार का अंक पढ़ते थे। तब यह दैनिक समाचार पत्र के रूप में प्रकाशित होता था। अस्तु, भगवत कृपा या अनुकूल परिवेश की बात को दरकिनार नहीं किया जा सकता है।

पारंपरिक उपभाषा व उपनदी की अवधारणा ने आंचलिक विद्वानों व भाषा विद्वों को आहत व आलोड़ित किया है उन्होंने इस अवधारणा को अंतर दिल में कभी स्वीकार नहीं कर पाया।

मौलिक होते हुए अवज्ञा कैसी? इसी विषय पर हमारे दिलो दिमाग में भी काफी अर्से से भावोदगार व्यक्त करने की इच्छा थी। अतः कबीलाई भाषाओं की मौलिकता पर भाव इजहार करने की ठानी। हमारे जैसे अन्य विद्वानों में भी हमारी तरह की मनोभावनाएं हिलौरी ले रही होंगी। हमारे कुछ कुड़माली विद्वानों ने भी इस संबंध में अपने विचार व्यक्त किये हैं, उनका उल्लेख हम प्रासंगिक समझते हैं।

कुड़माली साहित्यकार व 'मानभूम लोक संस्कृति के संपादक श्री भरत महतो का आंचलिक या उपभाषा के संबंध में कहना है ''लोक भाषा ही मानव भाषा का उत्स है। आदिमानव का लोक भाषा मानव की मौलिक भाषा है। इसे उपभाषा की संज्ञा देना मन में एक प्रश्न खड़ा करता है कि आखिर उपभाषा की सटीक परिभाषा क्या है? मूल से निकल कर जो विभिन्न शाखाओं में विभक्त होता है वह है उपभाषा या मूल बनाने वाली मौलिक भाषाएं हैं उप

(स्वीकृत भाषा)?"

विद्वान लेखक ने सही कहा है कि मूल से निकलने वाले को उप क्यों नहीं कहा जाए? संवैधानिक स्वीकृति लाभ करने वाली भाषा को मूल कहकर उनको बनाने वाली मौलिक भाषाओं को उप कहना क्या युक्ति संगत है?

अन्य विद्वान श्री भगवान दास महतो के भी विचार ऐसे ही हैं "आंचलिक कबिलाई भाषाएं अपने आप में स्वतंत्र व पूर्णांग भाषा हैं इन्हें सिर्फ सरकारी स्वीकृति नहीं है। तो क्या संवैधानिक स्वीकृति नहीं रहेगी तो उनका स्तर उप का होगा। यह अवधारणा अब चलने वाली नहीं है। समय की मांग है उप का सटीक व्याख्या मूल से निकलने वाला होना चाहिए। हमारी सोच से निकलने वाला होना चाहिए। हमारी सोच के अनुसार मूल गंगा की धारा जो बंगलादेश (पद्दा) की ओर गई है, तथा जो कलकत्ता की ओर गई है, दोनों को गंगा की उपनदी कहना संगत होगा न कि कोयल, कोशी, गंडक, सोन को मौलिक तौर पर जो मूल गंगा का निर्माण करते हैं। हमारे विचार परंपरावादियों को नागवार लग सकता है, लेकिन यह एक सच्चाई है कि मौलिक भाषाएं अपनी दीप्ति से भास्वर हैं।

पारंपरिक भाषा विद्वों के अनुसार आर्य भाषा विकास क्रम निम्न है।

1. संस्कृत

2. प्राकृत

3. अपभ्रंश

यहाँ पर हम कहना चाहेंगे संस्कृत के निर्माण में जिन मौलिक भाषाओं का योगदान है (जिन्हें उपभाषा, बोलियों आंचलिक भाषा कहा जाता है) उनकी अवज्ञा तो अब तक हुई अब और आगे नहीं होनी चाहिए क्योंकि कबिलाई या आंचलिक भाषाओं का परिनिष्ठित रूप ही संस्कृत के रूप में पहले पहले सामने आया। भ्रमवश संस्कृत को आर्यों द्वारा लाई हुई भाषा के रूप में समझा जाता है। लेकिन हम जानते हैं और आज यह स्वीकृत है कि आर्यों के प्रवेश के पहले यहां सभ्यता पुष्पित पल्लवित थी और धान की लहलहाती फसलों की तरह लहलहा रही थी तो क्या उस जमाने में यहां भाषा नहीं थी? उत्तर में कहा जायेगा भाषा थी। यहां कृषि सभ्यता थी जिसे

राढ़ सभ्यता कहा जाता है। यहाँ की कबिलाई भाषाओं का संस्कार अवश्य हुआ था और एक सर्वमान्य भाषा विशाल क्षेत्र में बोली जाती थी वह संस्कृत थी। संस्कृत और वैदिक भाषा संबंधी भाषा विज्ञानी माननीय प्रभात रंजन सरकार के विचार यहां पर उद्धृत किये जा रहे हैं।

"संस्कृत भाषा के साथ भारत में आर्य आगमन का कोई खास संबंध नहीं है। अतीत में मध्य एशिया से प्रारंभ कर दक्षिणपूर्व एशिया तक प्रायः एक ही तरह की भाषा का प्रचलन था। इस क्षेत्र में सुदूर पश्चिम में जिस भाषा का जन्म हुआ था उसका नाम वैदिक भाषा था और एकदम पूर्वांश में जिस भाषा का जन्म हुआ था उसका नाम संस्कृत भाषा था। अतः संस्कृत राढ़ की भाषा थी। यह भी जानना जरूरी है कि संस्कृत भाषा और वैदिक भाषा में आकाश पाताल का अंतर है। भारत की पूर्व दिशाओं की भाषाओं में संस्कृत जात तद्भव शब्दों का प्रचलन अधिक है। पश्चिम दिशा की पश्तो आदि भाषाओं में संस्कृत जात तद्भव शब्दों का प्रभाव कम। वहां वैदिक भाषाजात तद्भव शब्दों का प्रभाव ज्यादा है। हमारे राढ़ में वैदिक भाषाजात शब्दों का व्यवहार पश्चिम की भाषाओं की तुलना में अपेक्षाकृत कम है। अतः स्पष्ट है संस्कृत पूर्व भारत को राढ़ की भाषा है अपनी प्रयोजन सिद्धि के लिए ही राढ़ के मनुष्यों ने संस्कृत भाषा को जन्म दिया था, निर्माण किया था।

(रक्त मृतिका राढ़—पंचम खंड पेज 8)

संस्कृत शब्द से तात्पर्य है जिसका संस्कार हुआ हो, जिसे दोष आदि दूर करके ठीक किया गया हो, शुद्ध किया हुआ परिमार्जित किया हुआ हो। अर्थात् हमारे पूर्व भारत में प्राक आर्य काल में जो कबीलाई भाषाएं थीं उनका संस्कार हुआ और संस्कृत का जन्म हुआ जिससे आज की प्रतिष्ठित भाषाओं का निर्माण हुआ। हमारी कबीलाई भाषाएं कुड़माली, मुंडारी, संथाली, मालतो, भूमिज, कुडुख, हो, खड़िया आदि संस्कृत भाषा की जननी सदृश्य हैं तो फिर पारंपरिक भाषा विकास क्रम में हम अपभ्रंश से इनकी उपत्पति क्यों मानें? ये तो मौलिक भाषाएं हैं। कालक्रम में गतानुगतिक तरीके से ये आगे बढ़ती रहीं। हम कहना चाहेंगे संस्कृत भाषा कबिलाई भाषा की ऋणी हैं ये मौलिक भाषाएं संस्कृत की ऋणी नहीं।

हमने प्रतिपादित किया है कि कबीलाई भाषाओं का परिनिष्ठित रूप ही

लौकिक संस्कृत है। तर्क द्वारा आज यह स्पष्ट है कि प्राक आर्य युग में यहां भाषा के रूप में लौकिक संस्कृत प्रचलित थी। पारंपरिक भाषा विद्वों से हम कहना चाहेंगे कि आज जिन शब्दों के बल पर शिष्ट साहित्य निर्मित है, हो रहा है उनका निर्माण शायद कबीलाई भाषा से ही हुआ है।

नामवर सिंह के अनुसार–

''अपभ्रंश में देशी बोलियों का मिश्रण हुआ, अपभ्रंश से देशी बोलियों का जन्म नहीं हुआ। (रामविलाश शर्मा, भाषा और समाज, प. 214)

भाषा बहता नीर है, अतः विकास क्रम में बहुत लेन देन होता है। अतः संस्कृत जात सभी भाषाओं के सभी शब्द कबीलाई भाषाओं से गये हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। लेकिन बहुत शब्द गृहित हैं। यथा राढ़ शब्द का भावरूढ़ अर्थ है लाल मिट्टी का देश। योगरूढ़ अर्थ है भागीरथी नदी के पश्चिम से रामगढ़ पहाड़ पर्यन्त विस्तृत भूखंड। (वर्ण विचित्र अष्टम खंड, पृ. 50) ऐसे ही अनेक उदाहरण मिलेंगे। विद्वानों का मानना है मिन (मिंज– मछली) (कुडुख भाषा) इसी से संस्कृत का मिन शब्द बना।

निष्कर्ष यही है कि कबीलाई शब्द समूहों ने ही आज के संस्कृत व तत्‌जात भाषाओं के शब्द भंडार को मूल रूप से पुष्ट किया है। संस्कृत और जनभाषा (कबीलाई) के बारे में संत कबीर का मत यहां उल्लेखयोग्य है :–

''संस्कृत कूप का बंधा हुआ पानी है और जनभाषा बहता हुआ निर्मल जल है।

(मध्यकालीन भारत, लेखक विद्याधर महाजन, पेज 357)

# अध्याय - 2 : मातृभाषा

बच्चा जन्म से लेकर जो भाषा अपनी माँ के मुख से सुनकर सीखता है वही मातृभाषा है। बच्चा, अन्य भाषा में पारंगत सुसंस्कृत होने पर भी मां से जब बात करता है तो मां से सीखी भाषा में ही करता है– यही मातृभाषा की खासियत है।

प्रचलित अवधारणाओं में हिन्दी भाषी क्षेत्र में कल तक हिन्दी को मातृभाषा समझा जाता था और अपनी मातृभाषा गौण हो जाती थी। आज यह अवधारणा बदल रही है। भोजपुरी, मगही, मैथली, वज्जिका, अवधी, व्रजभाषा, बुंदेलखंडी......आदि भी भाषा के रूप में खड़ी होने की कोशिश कर रही है। मातृभाषा के दृष्टिकोण से भोजपुरी, मगही, अवधी आदि भाषा भाषियों की मातृभाषा हिन्दी है कहना गलत है।

देश देशान्तर में कबिलाई भाषा भाषी कल तक अंधेरे में थे, आज वे अपनी मातृभाषा के महत्व को अच्छी तरह समझ गए हैं अतः इसके संरक्षण, उत्थान व संवर्द्धन में प्रयासरत हैं। उल्लेखनीय है कि कल तक (करीबन 40–50 वर्ष पहले) हिन्दी में, अंग्रेजी में, बात करना गौरव समझा जाता था तथा अपनी मातृभाषा में बात करना हीनता तथा नीचता का प्रतीक था। खुशी की बात है कि आज आमने सामने मातृभाषा में बात करना गौरव की बात हो गई है, साथ में दूरभाष, चिट्ठी, निमंत्रा व अन्य आनुष्ठनिक पत्रों में मातृभाषा का इस्तेमाल दिन व दिन बढ़ रहा है।

मातृभाषा को कुड़माली भाषाविद् स्व. केशव चन्द्र तिड़ुवार ने इस प्रकार परिभाषित किया है।

"जे भाखि माञ ठिनले छउआञ कराञबसि, थन चुसेइतके, दुध ढकेइत के सिखत, आल ले ठाड़, ठाड़ ले निमजुआन, निमजुआन ले जुआन हेत आर पाकठात, आर सभे खन माञ संग अहे भाखिञ काथा कहत।"

(बच्चा जो भाषा माँ की गोद में रह कर दूध चुसते हुए सीखता है तथा शिशु से कुमार, कुमार से नौजवान और नौजवान से पूर्ण मनुष्य बनता है, और हमेशा माँ से उसी भाषा में बात करता है– वही मातृभाषा है)।

कहावत

''सात कोस पर पानी
और तीन कोस पर बाणी''

के अनुसार मातृभाषा में भी स्थान भेद के अनुसार थोड़ी भिन्नता हो सकती है लेकिन साहित्यिक स्वीकृत रूप एक ही होगा। मातृभाषा प्रेमियों के लिए उचित है अपने समाज के लोगों के साथ मातृभाषा में व अन्य भाषियों (हिन्दी, अंग्रेजी आदि) के साथ उसी भाषा का प्रयोग करें। ''भगवान श्रीकृष्ण, की मातृभाषा थी शौर–सेनी प्राकृत। जब वे नन्द, वासुदेव, यशोदा आदि के साथ बात करते थे तो शौरसेनी प्राकृत में लेकिन कौरवों से संस्कृत में। कौरव उनके लिए वी.आई.पी. थे। कौरव एवं पाण्डव आपस में शौर–सेनी प्राकृत में बातें करते थे पर लिखते नहीं थे। पाण्डव अपनी माता कुन्ती से पैशाची मिश्रित शौरसेनी में बोलते थे किन्तु किसी उच्च पदासीन व्यक्ति से बातें करनी होती थी तो वे परिमार्जित शौरसेनी अर्थात् संस्कृत का व्यवहार करते थे।

(महाभारत की कथाएं – श्री श्री आनन्द मूर्ति)

**मातृभाषा की महत्ता :**

1. खुद ब खुद अभिव्यक्त होने की क्षमता जब हम गृहीत भाषा (हिन्दी, अंग्रेजी) में भाव अभिव्यक्ति करते हैं तो वह अंदर से निकलती मातृभाषा का ही परिमार्जित रूप होता है अर्थात् हमारे मन के अंदर मातृभाषा की तरंगे हिलोरें लेती रहती हैं सिर्फ अभिव्यक्ति में रूपांतरण होता है। मूल चिंतन अपनी भाषा में ही होता है। मातृभाषा की महत्ता को हम डॉ हरिवंश राय बच्चन, डॉ उदय नारायण तिवारी, माइकल मधूसुदन दत्त आदि के भाव अभिव्यक्तियों में देख सकते हैं। इनके पेशा की या पी.एच.डी. की भाषा में दक्षता थी लेकिन अपनी मातृभाषा में इन्होंने जिस सर्जन क्षमता का प्रदर्शन किया व लक्षणीय है।

उल्लेखनीय है कि बच्चन साहब अंग्रेजी के प्रोफेसर थे। अंग्रेजी में पी. एच.डी. की थी लेकिन कृति इन्होंने खड़ी बोली हिन्दी में रची वह हिन्दी जगत की अमूल्य धरोहर है अर्थात् खड़ी बोली के बिना अध्ययन के ही इन्होंने खड़ी बोली में अनमोल रचना की वह इनके जेहन में छिपी मातृभाषा रूपी बीज का स्फूरण था।

जनाब माइकेल मधुसूदन दत्त अंग्रेजी व्यवस्था में पले थे व पढ़े थे। अंग्रेजी लड़की से शादी भी की थी। अंग्रेजी लाइफ स्टाईल के प्रेमी भी थे तथा अंग्रेजी में साहित्य सर्जन भी कर रहे थे लेकिन अंग्रेजों ने जब मातृभाषा के सवाल के रूप में इनके सुप्त स्वाभिमान को ठेस पहुंचाया तो इन्होंने मातृभाषा बंगला में रचना प्रारंभ की और बेजोड़ नमूना पेश किया। मेघनाथ बध काव्य लिखा तथा अमिताक्षर छंद का प्रणयन किया। चूंकि मातृभाषा बंगला जेहन में था, अतः उसकी क्रमिक अभिव्यक्ति मानसिक भाव तरंगों की थोड़ी दिशा परिवर्तन से हुई। इसी तरह डॉ उदय नारायण तिवारी का एम. ए. विषय अर्थशास्त्र था, बाद में इन्होंने तुलनात्मक भाषा शास्त्र व पालि में एम. ए. किया लेकिन डी. लिट. भोजपुरी भाषा पर किया।

आज जो कबीलाई साहित्यकार या कवि हमारे सामने आये हैं इनके पीछे या तो मानसिक दंश का कारण या अंतःकरण की प्रेरणा हैं। हम यहां पर कुड़माली साहित्यकार व भाषाविद् स्व. केशव चन्द्र तिड़ुआर के साथ घटी घटना का उल्लेख करना चाहेंगे।

माननीय केशव बाबू हाई स्कूल के शिक्षक थे, साथ में अपनी मातृभाषा कुड़माली के चिंतक व व्याख्याकार थे। इनके कुछ सहकर्मी कुड़माली पर इन पर कटाक्ष भी करते थे। एक दिन छुट्टी होने पर एक सहकर्मी ने इन पर व्यंग वाण छोड़ दिया। "केशव बाबू! आप की मातृभाषा कुड़माली तो एक बोली है इसका कोई साहित्यिक रूप भी नहीं है क्या इसमें कविता वगैरह की रचना संभव है?" केशव बाबू को इस प्रश्न ने झकझोर दिया, इन्होंने तपाक से उत्तर दिया –" कुड़माली को यदि आप बका भेंड़रा (थेथर निम्न कोटि की लकड़ी) समझते हैं तो इससे कुर्सी, टेबल, पलंग नहीं बन सकता लेकिन यदि यह सखुआ या गम्हार है तो अवश्य बनेगा।"

उसके बाद केशव बाबू का दिमाग वहीं पर सर्जन में निमग्न हुआ और स्कूल से घर पहुंचते ही उनके दिमाग में कविता की रचना हो गई। घर पहुंचकर इन्होंने कागज कलम पकड़ा और कविता लिख डाली। वह इनकी पहली कविता थी। "माञभुञ" इसके बाद इनकी सर्जन क्षमता कल कल सरिता की तरह बह चली। कुड़माली भाषा को इन्होंने यथेष्ट लिखित साहित्य प्रदान किया। इसी तरह की घटनाएं अन्य कबिलाई साहित्यकारों के साथ भी घटी होगी। हमें आज खुशी है कि विभिन्न जनजातीय व क्षेत्रीय

भाषाओं के साहित्यकार आज अपनी मातृभाषाओं के साहित्य को समृद्ध करने में व्यस्त हैं।

2. मातृभाषा की स्वतः स्फूर्त अभिव्यक्ति

यह मिथक नहीं हकीकत है कि मातृभाषा अचानक हठात् लबज पर आ जाती है। हम जरूरत के मुताबिक प्रचलित हिन्दी या अंग्रेजी का इस्तेमाल करते हैं। लेकिन अनजान में ही कभी कभी लौकिक शब्दों का व्यवहार कर देते हैं। जैसेः

काड़ा ठो धुन दिया

छेइला टाके काचड़ांञ–कुचड़ाञ आन

जल टा हृदहदाञ बइछे
कपाट गिला हिड़काञ दे।

बाबू, आज घर जल्दी जाना है, इसलिए झाप–झाप काम करके भागेंगे।

सर् तातल भात ठो कैसे जल्दी खायेंगे?
सीट नहीं मिला तो नीचे चुकुमुकु बैठ गए आदि।

रेखांकित शब्द स्थानीय भाषा के हैं जिनका स्वतः स्फूर्त एक्सप्रेशन होता है अर्थात्, आरोपित तौर पर ही हम मातृभाषा से इतर भाषाओं का प्रयोग करते हैं।

## मातृभाषा प्रेमी और भाषा की मर्यादा

मातृभाषाओं के विकास में कुछ मातृभाषा प्रेमियों का अथक प्रयास सर्वदा रहा है। पूर्ण लगन समर्पण के साथ भाषा प्रेमियों ने दिन–रात परिश्रम किया और अपनी मातृभाषा के साहित्यिक स्वरूप को खड़ा किया। यहां हम कहना चाहेंगे कुछ ऐसे भी भाषा प्रेमी हुए जिन्होंने अपनी भाषा छोड़कर अन्य में वार्तालाप नहीं किया। बंगला भाषा में ऐसी भाषा प्रेमियों की संख्या अधिक है। लेकिन मैथिली, मराठी, आदि भाषाओं में भी इनकी संख्या देखी जा सकती है।

हमारे कुड़माली भाषा–प्रेमी, संत सृष्टिधर महतो 'केटियार' के भाषा प्रेमी का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहते हैं।

1956 में मानभूम (पुरूलिया) पं. बंगाल में चला गया। उसके चन्द दिनों के बाद चुनाव की घोषणा हुई। झालदा विधानसभा क्षेत्र के टिकट के लिए माननीय देवेन बाबू (देवेन्द्र नाथ महतो) के साथ स्व. संत सृष्टिधर महतो केटियार, स्व. रामपदो सिंह बानुआर एवं स्व. केशव चन्द्र महतो 'तिडुआर' कलिकाता गए। इन्होंने तत्कालीन मुख्य मंत्री स्व. विधान चन्द्र राय से मुलाकात की जिसका ब्यौरा निम्न है।

"विधान बाबू अपने चेम्बर में अपनी सीट पर बैठे थे। देबेन बाबू अंदर गए। बाहर बरामदें में संत सृष्टिधर आदि बैठ गए लेकिन अन्दर का सब कुछ दिखाई पड़ता था तथा वार्तालाप सुनाई पड़ती थी। देबेन बाबू ने कहा– झाईलदार टिकिट टार जन्ये आइसेछि आमा के दिन।

विधान बाबु-- ना, ना तोमाके टिकिट देउआ हबेना। उसके बाद देबेन बाबु बाहर निकलने को हुए। लेकिन दरवाजा पर संत सृष्टिधर ने रास्ता रोक कर कहा (जो थोड़ी ऊँची आवाज में थी व विधान बाबू को सुनाई पड़ रही थी)

सृष्टिधर – किना कहलउ?

देबेन बाबू– टिकिट नि मिलति।

सृष्टिधर– टिकिट फिकिट छाड़ि दिहिं, जात्र न सुधिआउहिं जितप हेलें मेसात न नि?

झट विधान बाबु ने देबेन बाबु को बुलाया और पूछा– गेरूआ वस्त्र ध ारी साधु बाबा क्या बोल रहे हैं? संत सृष्टिधर गेरूआ वस्त्रधारी साधु वेश में ही थे।

देबेन बाबू ने कहा– ये कुड़माली में कह रहे हैं,

"हमलोग जीत जायेंगे तो क्या आप हमें शामिल कीजियेगा?

यह सुनकर विधान बाबु बोले– गेरूआधारी संत इतना कॉन्फिडेंट और विश्वास के साथ कह रहे हैं मुझे तो ताज्जुब लग रहा है। जाइये, जाइये आपको टिकट दे दिया।

उल्लेखनीय है कि संत सृष्टिधर कुड़माली में ही बात करते थे। इनकी रचनाएं कुड़माली साहित्य की धरोहर हैं। इनके भाषा–प्रेम व विश्वास ने उस

दिन कलिकाता में कमाल दिखाया था।

## कबिलाई साहित्य का उद्भव काल

कबिलाई भाषा का उद्भव काल व्यवस्थित सामाजिक जीवन प्रारंभ काल से माना जा सकता है। लेकिन वहीं से कबिलाई साहित्य काल प्रारंभ हुआ यह नहीं कहा जा सकता। साहित्य के बनने संवरने में समय लगा। यहां प्रारंभिक कबिलाई साहित्य से हमारा तात्पर्य गेय साहित्य, काथा साहित्य (जो चाहे रोदन गीत अथवा उल्लास गीत हो) से है, जो कालान्तर में 'लोक साहित्य' के रूप में परिचित हुआ। गौरपूर्वक पर्यवेक्षण से यह स्थापित हो जायेगा कि प्रत्येक कबीला का अपना लोक साहित्य है और हरेक का लोक साहित्य समसामयिक है। हम यहां पर कुड़माली लोक साहित्य की विशेष चर्चा कर रहे हैं।

कुड़माली लोक साहित्य में– सोइराइ गीत (बांदना गीत) करम गीत, जाउआ गीत, विवाह गीत, एढ़ेइआ, डहरवा, डमकच, कृषि लक्ष्मी, टुसु गीत, जान कहनि, सुन कहनी आदि के रूप में युगों से कुड़माली समाज में पीढ़ी दर पीढ़ी चलते आ रहे हैं। सच बात यह है कि कुड़माली का प्राचीन साहित्य भंडार गीतों व कहानियों में भरा पड़ा है।

## कुड़माली प्राचीनकाल

कुड़माली प्राचीन साहित्य का प्रारंभ शिवकाल को ही माना जा सकता है। क्योंकि विवाह व्यवस्था उसी काल की देन है। भाषा विज्ञानी माननीय प्रभात रंजन सरकार ने शिवकाल को आज से 7000 वर्ष पूर्व माना है।

उन्होंने ''नमः शिवाय शान्ताय' में इस बात की चर्चा की है कि भगवान शिव ही पृथ्वी के पहले विवाहित पुरूष थे। यहां यह चर्चा करना प्रासंगिक है कि शिव–पार्वती ही आदर्श पति–पत्नी थे। आज के दम्पतियों को भी शिव–पार्वती की तरह आदर्श पति–पत्नी की तरह जीवन यापन करने की सीख दी जाती है। अस्तु, शिवकाल सभ्यता का उषाकाल साथ में व्यवस्थित जीवन पद्धति के साथ लोक साहित्य का निर्माण काल का द्योतक है।

यहाँ यह कहना कठिन है कि गेय साहित्य में वेदना बोधक गीत प्रथम

प्रारंभ हुआ या उल्लास बोधक गीत लेकिन इतना अवश्य कहा जा सकता है कि विवाह गीत, करम गीत आदि उल्लासगीत की रचना इनके बाद में हुई है।

गेय साहित्य के विश्लेषण से हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि प्राचीनगीत वे हैं जो दो/चार कलि वाले होते हैं।

1. कुलहिंञ–कुलहिंञ पानि बहे, छउआक हाथें घंघि रे
   देखँ बाबु कतेक माछ,सुधाइ बेंग टुनि रे।
2. झिंगा फुल फुटलेइक रे दादा
   तर बहु के कने देलेक कादा
   धइ धुउआ देलेञ खने
   आरअ लेलि कादा।
3. छुटु–मुटु टकरा, हार बाहे छकरा
   भिजि जातउ रे बाबु, एड़िसर धतिया।
4. छुटु मुटु टुंगरि, सुधाई पाकल कुंदरि
   दे न दादा ठेंगा काटि, बहु जाति बागालि।
5. कन्अ माछ डेगा डेगि, मन्अ माछ ललअकारि
   सामेर गे कन्अ माछ, धारिञ चलि गेल रे।
   पंठि माछ डेगा डेगि, माञआ माछ ललअकारि
   सामेर गे डेंड़का माछ, धारिञ चलि गेल रे।

कुड़माली जान केहनी, सुन–केहनि के काल को हम गेय साहित्य काल के बाद मानते हैं। क्योंकि मनुष्य जब समाज में रहने लगा तो विभिन्न मौकों पर इनकी रचना होने लगी। हमारे पुरोधाओं का मानना है धान उगाने के साथ कुंबा में (चाहे खेत में या खलिहान में) या पगडंडी पर चलते समय इनकी रचना होने लगी। इन कहानियों में जंगल के बाघ, सियार, भालु, बंदर, पशु–पक्षी, गाय–भैंस का प्रसंग आना, इस बात को दर्शाता है कि उन दिनों हमारे पूर्वजों के वासस्थान के इद–गिर्द इनकी बहुतायत थी मधुर संबंध था, अतः कहानियों का पात्र बनाया। उदाहरण के तौर पर जान केहनि

1. अना हात पुतलि दना हात पड़लि
   जे उभरअलि कांथाञ तउना देलि।
2. आबट दामड़ा दाँउअब कइसे
   गिरल पइना बिछब कइसे

3. केरिआ चुका धुंध लुका
4. उपाइ मनिक टुपाञ छउआ।
5. घांस खाइ गबर नाइ।
6. फेइड़काक भितरे साड़हाक डाक
7. ठिंग चरेइएक मुंड़ेइ मास
8. मांझ बने कारहा चले
9. लालि गाइएं छालि खाइ
   पानि पिलें मरि जाइ।
10. हुकुड़ कुंबा दुइटा दुआइर।

## लोकोक्ति – (आहना)

1. कापाड़े तर नेखउ चिना, ठकठकाउले हेतउ किना?
2. आखा आहि, पाखा नि, बुइद आहि, भरसा नि।
3. अगहन मासें, चुटिआक सात टि बहु।
4. आपन करम, भाइएक धरम
5. आमें बान तेंतेइरे टान
6. अजलइते घघि आड़ा, पेछु बाटे सिआड़ा
7. आगुक घड़ा, पेछुक लेड़हा
8. आंगा गुने पांगा, लहा गुने टांगा।
10. काथाञ काथा बाड़हेइक, ताल पाते कान बाड़हेइक
11. काना आपने जाना
12. घारेक ढेकि बाघ।
13. चरनि गाइ चराइ खाइ, साबुद गाइ बांधाइ जाइ।

## सुन केहनि

गइ दादा अना बहिन (सात भाई एक बहिन)

ढेइर दिनेक पुनना काथा, बने जेसन नाना लेखेइन जिब जंतु, पाइख–पाखुड़, असने हड़ें (मानुस) बन–झाड़े, पाखना खल्से, गाछेक ढड़हरें, बन माञएक लिला–खेलाञ, जिनगानि पुहाउएइहेला, जिब–जंनतु, पाइख–पाखुड़ेक सेंदरा करिकुन ढ़ड़हा भरेइहेला।

अरून बनेक अना करें, अना डिहें, अना हड़ेक बस्अवास। लकटाक सातटा बेटा आर एकटि बेटि। पेटेक जालाञ भाइरा दिनाम जात सिकारें। सिकारें जे पाउअत बहिन के आनि देथिक, बहिने रांधि बाटि देइन। अना दिनेक काथा–दिनामें निअर सात्अ भाइ गेला सिकारें, मेनतुक उदिन सिकार हेलेइक फांका, सुधाइ घार घुरला। भुखें–पिआसें खेमाइ कुन काहिल। आइतुरिआइ बहिन के सुधिआउहेथिक– हें मिआं आइज किना बेसाति (तिअन) राँध्अ लाहिस? बहिने कहलेइन किना आर राँधम, साग भुजअलाहँ। बहिने देलेइन माड़ आर साग भुजल। खाइते–खाइते निजे निजे गंदराहात, सागटा त्अ मांसलेउ आनखाइ सआद लागेहेइक। बहिन के सुधिआउएहेथिक– किना देइकुन सागटा भुंजअलाहिस जे आनखाइ सआद लागेहेइक?

बहिन– किना आर देबेञ दादा, साग काटते काटते काटाइ हेलं, तखन संचलअ काहाँ पंछम, सागटाहिं पंछिदेलेञ। तखन नुड़ल झिकल परें भाइराञ गमला, एकर रकत टा एतना सआद त्अ मांस टा केतना सआद लागतेइक। हिआञ उपज्अ लेइक पाप। फांड़ला फिरकिटि, बहिन के मराउएकतेहें। धान चासेक उचरेइन ना हेलउ, छाना छिटका, इतिआ उतिआ, झुम चासेक रूपें राहेड़, कलाइ, गुंदलि हेन–तेन खंद उपजाउएइहेला। घार डिंड़ाक फाराकेइ रहलेइन राहेड़ गड़ा। राहेड़ गादराक धेरिआ। राहेड़ खाइलाइ बनेक जिब–जंतु, पाइख–पाखुड़ टानाइ लागला। दादा निखाञ संचला– एहेटाइ बत्अरेक बेरा।

राहेड़ गड़ाञ बनाउला एकटा माचान आर बहिनके दिनाम राहेड़ अगरे पाठाउथिक। बहिन बेसियामें नुड़ि झिकि जाइ आर सांइझ तड़ि घार घुरेइ।

दुइ–चार दिन तइल सात्अ भाइ बहिन के मारेक तेहें आरिगुरि करला। बहिने बुझ पाउलि–आइज दादा राञ मके मराउता। बड़अ दादाञ जखन बिंधेंक तेहें अरि गुरि करलाक तखन बहिनें कांदि कांदि कहेहेइक–

धिरे धिरे बिंधअबे रे बड़अ दादा<br>
मञ तअ हेकं सात् भाइएक एकेटि बहिन।

बिंधे तअ बिंधलेइक, मेनतुक लागलेइक निहि। एसने छअ (झेग) दादाञ पारिञ पारिञ बिंदलेथिक आर बहिने असने कांदि कांदि कहेइन। काकरअ कांड़े जखन निमरलि, पारि आइलेइक छट्अ दादाक। बड़अ राञ छट्अ के कहलेथिक– तके मराउए हेत्अ नित्अ तकेइ बिंधिकुन मराउबउ।

तखन छ्टअ गिरलाक हप्अ सटअञ। बिंधलेइक हेंट मुड़ करि के मेनतुक कांड़ टि आनबाटे नि जाइके छातिहिं लागलेइक। बहिन माचान ले भुञए गिरलि। गिरल परे छअ भाइएं तुनगी ले जलेथिक नदि धार। काटि कुटा रांध ाला। मेनतुक छट्अ दादा एखर ले छिनगालाक। जखन एखरा मांस खात, तखन एञ माछ खाइन, जखन एखरा हाड़ चाबत तखन एञ खंखड़ि खाइन।

मन पुरन खाइएक परें जेटा नि सिराउला, उठा लेगिगुन टिलहा गाढ़ाञ तपि देलथिक। टिलहा लें जनमअलेक बांस। बुलेइते बुलेइते एकटा डम पहंचलाक अहे बांस झुड़। डमें संचलाक– बांसि भालअ बनतेइक। एहे संचि काटे लागलेइक। जखनेइ चटाउअम कहेइस– अनाइ पाउलाक कांदनांक साड़ा। साड़ाटा–

धिरे धिरे काटअबे रे डमुआ

मञ तअ हेकं सात्अ भाइएक एकेटि बहिन।

डमें हेंदे हुंदे भालेइ, मेनतुक केउ काहुँ नाञ। आरअ चट देइक असने अनाउएइ। सेसे धिरजा धरि काटलाक एकटा सहलअ बांस। बनाउलेइक बांसि। बांसि लेइ डम चललाक अह बसागतें जाहां रहेइन सात्अ भाइएक बसागत। छ् बडअ् भाइएक दुआरे दुआरे फुंके लागल बांसि। बांसिटाञ साड़ा देहेइक– धिरे धिरे फुंकअबे रे डमुआ

एरा तअ हेकत दुसअमन्अ भाइ।

बांसिक साड़ा अनाइ बेटि छउआ फासार फुसुर हेहत, इ आरअ किना बाबा!। बहिन के बिंधि मराउलेथिक, ताउ बांसिक साड़ाटा तअ अकरे निअर। पांछे डाइन–भुत हेलि न किना? हिआञ जाइलेइक डर। डरें चाड़े माड़े डम के करलेथिक बिदाइ। डम गेलाक छट्अ दादाक घार। उहांउ फुंकेइस, मेनतुम साड़ा टा भिनु रकम–

धिरे धिरे फुंकअबे रे डमुआ

इ त्अ सहदर भाइ

अनाधाङ (एकबार) फुंकेक परें आरअ कहे हेइक फुंके। तखन छ्ट्अ दादाञ कहलेइक खाइले। तखन डमें टेंग, टम धइकुन बांसि टाके छांछाञ गंजलेइक आर खाइलाक बसलाक लखन आपन बांसि टा अहे तिआइ गंजि

देलेइक आर डमेक बांसिटा राखि लेलाक। डम खाइ पिकुन चललाक। छट्अदादाञ कन्अ दिन रांध राधिं करेइ नि। मेनतुक घारे भात रांधाल थाकेइक। छ्टअ दादाक मन खटक्अलेइक। भाभि दांजि लुकालाक आड़अते। भालेइस–एकटि बेटि छउआञ आइकुन राँधे लाग्अलाहि। टकलेइक– तञ कन हेकिस। तखन बहिनेक रूप लेलि। बहिन पाइकुन खुसिञ दादाक हिआ उछलेइक घेरिआ। दुअ संगेइ रहे लागला। निके सुखें बेरा पुहाउए लागला।

स्रोतः डॉ मनोरमा

नोटः इस करूणा कहानी में भाईयों द्वारा बहन की हत्या कर मांस खाने की कही गई है जो प्रागैतिहासिक कालों में ही संभव था। कहने का तात्पर्य प्रागैतिहासिक काल में ही कुड़माली समाज में भाषाई चेतना थी जो कहानी के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी चली।

## सोहराई गीत (बांदना गीत)

काहाँजे हिं गरअजए बांघ बाघिनि ह
काहाँ हि गरअजए सांड़।
काहाँ हि गरअजए गाँउए का गराम ग्अ
घारें–घारें खल्अतउ कपाट 1

रने बने गरअजए बाघ बाघिनि ह
गठे हिं त्अ गरअजए सांड़।
कुलहि मुंड़ाञ गरअजए गांउए का गराम ग्अ
घारें घारें खल्अतउ कपाट 2

केथिहिं नेहरबँ बाघ–बाघिन ह,
केथिहिं नेहरबँ सांड़।
केथिहिं नेहरबँ गाँउए का गराम ग्अ,
घारे घारें खल्अतउ कपाट 3

गुलि कांड़े नेहरबँ बाघ बाघिनि ह,
जुआलिञ त्अ नेहरबँ सांड़।
खुखड़ि चेंगनाञ नेहरबं गांउएका गराम ग्अ
घारें घारें खलअतउ कपाट 4

प्रसंग क्रम में उत्सव, अनुष्ठान के गीतों का जिक्र निम्नलिखित हैं।
विवाह गीत (पिंधान गीत)
चार कुने पखेइर टि
हांका पाड़ेरे बामना
कनिआइ माञए खजे ग्अ बाबा
रेस कदम साड़ि रे भभरा
सेह सुनि बरेक माञए झाड़े लागल ग्अ साड़ि
काहां पाइके देबं समधिन
रेस कदम साड़ि रे भमरा।

चार कुने पखेइर टि
केनिआइ बापें खजेइ ग्अ बाबा
थारि भरि टाका,
सेह सुनि बरेक बापे छाड़े लागल गअ धतिया
काहां पाइके देबं बाबा
थारि भरि टाका रे भमरा।

चार कुने पखेइर टि
कनिआइ दादाञ खजेइ ग्अ बाबा

साल बाँधल घड़ा रे भमरा।
सेह सुनि बरेक दादाञ
चंथे लागल ग्अ दाड़िआ।
काहां पाइके देबं सांगात
साल बांधल घड़ा रे भमरा।।

नोटः प्रचलित परंपरा के अनुसार कुड़माली समाज में लड़के वालों का ही लड़की पक्ष को पनटाका, साड़ी एवं अन्य प्रयोगनीय वस्तुएं देनी पड़ती थीं यहां 'दहेज' का नामोनिशान नहीं है। इस गीत में यह स्पष्ट है।

## जावा गीत

इति इति जावा, किआ–किआ जाउआ
जाउआ जाउलं मञ दाना बहुरा
से अहरे दाना एक पांता सइरे
राँड़ा हरिना चरि चरि जाइ रे
मारबं रे हरिना, पिटबं हरिना
तरि चामे मांदरि छाराबं।

## करमगीत –1

पड़ल्अ, भारदअ मास, लागल्अ नइहरेक आस
नन्द गे एबे हामें जाबं नइहर जे।
आअत्अ भइआ मर, चिउड़ा सनदेस लेइके
ननद गे एबे हामें जाबँ नइहर जे 2
कांसि फुल फुटिगेल सउब आसा टुटि गेल
बहु गे निहि रे आअलअ भइआ तर जे। 3
निहिं आअल्अ भइआ तर चिउड़ा सनदेस लेइके
बहु ग्अ केसे करि जाबे नइहर जे। 4
आअल्अ भइआ मर, चिउड़ा सनदेस लेइके
ननद गे एबे हामें चललअँ नइहर जे। 5

## करम गीत

सराबन महिना परे, आअल्अ भादरीं
नइहर जाएं ह, हामें खेलबं झुमरि
करम्अ पुजबं डाइर धरि।
सात्अ संगि मिलि जुलि
नदि हिं उठाउबं बालि
फुल्अ तड़ि ह, आनबँ डाला भरि
करम्अ पुजबँ डाइर धरि।
करमेक एकादसि सेअबँ दिन्अ राति
एके मने ह, हामें जरबं बाति
करम्अ पुजबं डाइर धरि।
मागबं बेटा बेटि, आरअ मागम धन समपति
नइहर जाएं ह हामें खेलबं झुमरि
करम्अ पुजबं डाइर धरि।

निष्कर्ष में कह सकते हैं कि भाषा की उत्पति के बाद धीरे धीरे साहित्य रचना प्रारंभ हुई और सोशल डायनामिक्स के साथ उत्तरोत्तर पल्लवित, पुष्पित– सुरभित होती चली।

यह सभ्यता के उषाकाल से जीवंत रही है। प्रागैतिहासिक काल में सूरज देवता, मरांगबुरू (बड़ पाहाड़) करम देवता आदि के प्रति इनकी श्रद्धा भक्ति थी। सुपर नेचुरल पावर से ही प्रकृति की घटनाएं हो रही हैं। यही इनकी मान्यता व अवधारणा थी। सभ्यता शुरूआत के साथ इनमें "मूल देवता" "बुढ़ा बाबा" के प्रति प्रबल अपनापन महसूस हुआ व जीवन के सर्वोच्च देवता के रूप में इन्होंने इसे स्वीकार किया। मजे की बात है कि आज के जमाने में भी शिव बाबा (बुढ़ा बाबा) इनके अन्यतम एकम अद्वितीयतम देवता है। इनके गुणगान व पूजा में इनकी भक्ति चैत पर्व (चड़क पूजा) में आज भी देखी जा सकती है। लेकिन इसे भक्तिकाल नहीं कहा जा सकता है।

## कुड़माली मध्यकाल :

आधुनिक साहित्यों में भक्ति काल का प्रारंभ 14वीं शताब्दी के लगभग माना गया है जहां नाथपंथी, गोरखपंथी, तुलसीदास, सुरदास, कबीरदास, मीराबाई आदि की भक्ति रचनाएं सामने आईं। कुड़माली इत्यादि में इस काल का अपना प्रभाव है और यहां भी कृष्ण भक्ति का वर्णन विभिन्न रूपों में आया लेकिन झूमर के रूप में यह ज्यादा लोकप्रिय हुआ और आज भी है। यहां वैष्णव धर्म प्रभाव का वर्णन चैतन्य चरितामृत में मिलता है। जैसे

1. ''मथुरा जाबार काले आसि झाड़िखण्ड

   भिल्ल प्राय लोक ताहे परम पाषण्ड।।

2. झाड़िखण्डे स्थावर जंगम आछे जत्अ

   कृष्ण नाम दिया कैलअ प्रेमेते उन्मत्त।।

प्राचीन कुड़माली साहित्य में भक्ति वर्णन की बात लयात्मक रूप में व निर्गुण तत्व अभिव्यंजना के रूप में देखी जा सकती है। लेकिन भक्तिकाल नहीं कहा जा सकता है।

देह तत्व, गुरू तत्व, आत्मा तत्व आदि का वर्णन उस युग के प्रचारकों (जैन बौद्ध साधु संत) ने किया है। ''चर्यापद'' नामक ग्रंथ में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है, इस संबंध में कुड़माली भाषाविदों व पुरोधाओं का मानना है कि यह कुड़माली भाषा ही है। गौरतलब है कि इनके कुछ रचयिता कुड़माली अंचल के ही समर्पित ईश्वरानुरागी थे। इस संबंध में अध्यापक सुबोध बसुराय की उक्ति उद्धृत की जा रही है।

''चर्यागीति उ झुमुरेर सादृश्य घनिष्ठ बले मने करि, गठन रीति उ विषय वस्तु उभयतः बिचारे। देह तत्वेर झुमुर एखाने प्रचलित, साधु गानेउ (बाउल गाने) चर्या गीतेर प्रभाव प्रत्यक्ष। आक्षरिक मिल रयेछे। चर्यागीतिर ध्रु (ध्रुवपद) एखाने सर्वत्र रक्षित। डोम्बी, शबरी, ऊँचा पर्वत मोरंगी पिच्छ, गुंजरीमाली, सांग (सांघा–द्वितीय विवाह) सब एखानेर। भाषार मिल उ रयेछे।''

अर्थात्

"विषयवस्तु व गठन रीति दोनों के मद्देनजर चर्यागीति व झूमर का घनिष्ठ सादृश्य मालूम पड़ता है। देह तत्व के झूमर (यहां के प्रचलित साध ुगान या बाउलगान) में चर्यागीत का प्रभाव देखने को मिलता है। विचारों व शब्दों का हुबहु मेल भी दिखाई पड़ता है। चर्यागीत का ध्रुपद (शास्त्रीय रूप) इन झूमरों में संरक्षित है। डोम्बी, शबरी, ऊँचअ–ऊँचअ पर्वत, मोरंगी पिच्छ, गुंजरीमाली, सांग या सांघा सब यहीं के हैं।

आगे की कड़ी में लेखकद्वय (किरीटी माहतो व श्रमिक सेन) टिप्पणी करते हैं।

"कुड़माली भाषाविद् उ पण्डित गनेर दाबी आरउ सुष्पष्ट उ युक्तिपूर्ण। चर्यार संगे झूमेरेर मिल सतखानि उ अभिन्न जे चर्या के झूमूरेर आदिरूप बले तारा दाबी करेछेन। तादेर दाबि हर प्रसाद शास्त्री कथित संध्या भाषा आजउ प्रचलित उ कथित कुड़माली भाषा छाड़ किछुई नय। आदि सिद्धाचार्य लुई, भुसुक सह बहु पदकर्ता एई झूमूर जनपदेरइ मानुष छिलेन। पण्डितगण ता स्वीकार करेन।

मयूर भंजेर "समिवृक्षा" ग्रामें आजउ लुईएर पूजा उ एतद उपलक्ष्ये मेला उ उत्सवेर आयोजन हये आसछे। भुसुक सह अन्यान्य पदकर्ता गनउ एई अंचले पूजित हन। एमनकि सरासरि चर्यागीतिर पद सकलउ।

स्रोतः निर्वाचित झुमुर समग्र– किरीटी माहतो व श्रमिक सेन।

आजउ झूमुर हिसेबे एई अंचले गीत नृत्य

हय उ तार संगे नृत्य परिवेशित हय। एर भाषा उ अर्थउ साधारण मानुषेर काछे अत्यंत सहज बोध्य।

प्राचीन साहित्य सामग्री चर्याषद की थोड़ी चर्चा और व्याख्या करके ही वस्तु स्थिति को स्पष्ट किया जा सकता है।

चर्यापद लगभग 10वीं ई. की रचना है। इसमें देह तत्व व ईश्वर तत्व, निर्गुण तत्व, आत्मा तत्व आदि की अभिव्यक्ति सरल पदों में की गई है। उदाहरणस्वरूप इन पदों को देखा जा सकता है :

पदः

नगर बारिहिरें डोम्बी तोहोरि कुड़िया

छुई छोई जाइ सो ब्राहम नाड़िया।

इसका बंगला अनुवाद – नगरेर बाईरे रे डोम्बी तोर कुड़े घर।

छुँये–छुँयें जाय तोके ब्राम्हण एवं नेड़े।

इनके अनुसार हिन्दी में:

रे डोम्बि! नगर के बाहर तुम्हारी पूस की झोपड़ी (कुम्बा) है जिसको ब्राह्मण एवं मुण्डन किया हुआ व्यक्ति छु–छु कर जा रहे हैं।

सर्वविदित है, चर्यापद की रचनाएँ आध्यात्म रस आलप्रावित है। प्रस्तुत अनुवाद में आध्यात्म का नामोनिशान नहीं है। अत्यंत सरल अर्थ से जोड़ा गया है जो पूर्णतः भ्रामक है। कुड़िया से मतलब झोपड़ी है ही नहीं।

आइये देखें कुड़माली व्याख्या –

पद को कुड़माली व्याख्याकारों ने यों सजाया है–

न–न गर बारई हरे डोम्बि तोहरि कुड़िया

छई छई जाउअस ब्राहम्म नाड़िया

न अर्थात् 9 (नौ)

न–न गर का मतलब – 81

बारई– 12

हरे – हरण करना या घटान। अर्थात 81–12 . 69

तोहोरि– तौ हरि (अर्थात उसके बाद हरें माने घटायें)

कुड़िया – कुड़ि (गिनती की) – 20

अर्थात 69–20 . 49

कहने का तात्पर्य देह तत्व या सहज योग साधन पद्धति में 49 वायु ब्रहम नाड़ि को स्पर्श करके जा रहे है।

(स्रोत– निर्वाचित झुमुर समग्र–लेखक किरीटी माहतो व श्रमिक सेन)

कुड़माली भाषा को जितना भी हेय दृष्टि से देखा जाय, लेकिन इसके व्याख्याकारों ने चर्या पद की जो व्याख्या प्रस्तुत की है वह दर्शाता है कि दार्शनिक तत्व को व्याख्या करने की अद्भूत क्षमता व समझ इनमें है। ये व्याख्याएं यह भी बताती हैं कि यहाँ के लोक जीवन के साथ इन पदों का गहरा तालमेल है।

**दूसरा उदाहरणः**

काइआ तरूवर पंच–बि–डाल
चंचल चिये पइठो काल
दिढ़ करिअ महासहि परिमाण
लुई भनई गुरू–पूच्छिअ ज्ञान
सकल समाहिअ काहे करिअई
सुख दुःखेते निचित मरिआई
एड़िएउ छान्दक बान्ध करणक पाटेर आस
सुनु पाख भिड़ि लाहू रे पास
भनई लुई आमहे साने दिठा
धमन चमन बेनि पान्डि बईठा।

काआ – काया
चिअ – चित–मन
पंच– पांच
बि – विशेष
डाल – शाखा
दिढ़ – दृढ़–सख्त
महासहि – उपयुक्त रूप में
पूच्छिअ– पूछें
समाहिअ– समान
एड़िएउ– दरकिनार करके

आमहे– मैं

साने (संगे) साथ में

दिठा– मिलन (कुड़– देखा गुरू संगे)

बेनि – त्रिवेणी (आज्ञाचक्र)

छान्दक– कुड़– बांधन

करणक– करें

पाट– मुक्ति, निर्वाण

आस– आशा

सुनू – सुनो

पाख– कुड़– पास

भिड़ि– भिड़ जाओ–एकदम

नजदीक जाओ

धमन– सूर्य नाड़ी

चमन– पिंगला/चन्द्रमा

पान्डि– पींड़े, कुड़माली

तीरे– किनारे

बईठा– बैठा हूँ

**हिन्दी अनुवादः**

कायारूपी तरूवर में पांच विशेष शाखाएं हैं। (दो हाथ, दो पैर और कमर सह धड़– विशेष अर्थ में पांच कर्मेन्द्रियाँ) और चंचल मन में काल (यमराज) ने स्थान लिया है। मरणरूपी भय से हरजन त्रस्त है। उसे इस पर विजय प्राप्त करना है। भिक्षु लुई पाद का कहना है– जिस साधन तंत्र से इस पर विजय प्राप्त किया जा सकता है, वह गुरू के पास है अतः उपयुक्त तरीके से दृढ़ श्रद्धा भक्ति से गुरू को इसके बारे पूछना पड़ेगा। काल जब मन में बैठ ही गया है तो सुख–दुःख के जीवन में हमारी मृत्यु निश्चित है लेकिन हमें विचलित नहीं होना है। लुई कहते हैं सब कर्म को समान प्राधान्य (महत्व) क्यों दे रहे हैं? सांसारिक कर्मों के बीच योग–साधना तंत्र को ही अधि

ाक महत्व देना है जो हमें मृत्यु के महाभय से मुक्त करके इस महाजीवन को चरम आनन्द के महांगन में प्रतिष्ठित करेगा। उनका कहना है सर्व प्रकार के बन्धन (त्रिबंधन) से मुक्त होकर मुक्ति (निर्वाण) की आकांक्षा करें।

साधक! तुम सुनो– नजदीक आकर सुनो– बहुत नजदीक जा कर गुरू को पकड़ो। गुरू के बगैर दुःख व भय के भवसागर को पार नहीं किया जा सकता है। अपनी उपलब्धि अवस्था की बात करते हुए वे कहते हैं– मुझे गुरू का साक्षात्कार हुआ है और मैं गुरू कृपा से त्रिवेणी के तीर पर (आज्ञाचक्र में जहां इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना मिलती है) में बैठा हुआ हूँ। अर्थात् मेरा मन त्रिवेणी में पहुंच गया है। जहां मुक्ति/ मोक्ष/निर्वाण संभव है। आप भी कोशिश करेंगे तो तंत्र–योग साधना से यहां तक पहुंच सकते हैं और दुःख भय को विजय कर परमानंद प्राप्त कर सकते हैं।

चर्यापद की सटीक व्याख्या कुड़माली में है और इसे प्राचीन कुड़माली ग्रंथमाला माना जाना चाहिए। इसे भक्तिकाल की रचना नहीं कह सकते हैं।

हमारे अंचल की विशेषता रही है कि जब भी किसी भक्ति रूपी सरिता का प्रवाह हुआ है यहाँ के लोग उससे प्रभावित हुए हैं। चूँकि जैन बौद्ध का अहिंसावादी दर्शन के अनुकूल नहीं था अतः पूरा का पूरा समाज उसे प्रभावित हो– यह संभव नहीं था। लेकिन भक्ति का बीज यहां के लोगों के जेहन में आदिकाल से रहा है। अतः कुछ लोगों ने इसे अपनाया। यहाँ सिर्फ एक समुदाय विशेष की बात नहीं कही जा रही है बल्कि जितने भी यहाँ निवास करते थे सबों पर यह प्रयुक्त होता है। इसी के परिणाम स्वरूप कुछ समुदाय (जातियाँ) कुछ हद तक अभी भी जैन–बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। हमारा मानना है जैन बौद्ध काल में भी कुछ लोग इस आधार पर जैन या बौद्ध भिक्षु बने व तत्कालीन प्रचलित तांत्रिक साधना की। अपने द्वारा अनुभूत तथ्यों का उन्होंने अपनी भाषा में व्यक्त किया। हम समझते हैं इस विषय पर आंचलिक गहन शोध की आवश्यकता है। प्रसंगतः उल्लेखनीय है कि हमारे अंचल में जैन धर्म स्थलों व बौद्ध स्थलों का अस्तित्वमान होना क्या यह नहीं दर्शाता है कि स्थानीय सहयोग के बिना इनकी स्थापना संभव नहीं थी? जैन केन्द्र जैसे पाक बिड़रा, देउलघाटा, देउल बेड़ा, पवनपुर, हारूप पखेइर आदि। यहाँ उपासना स्थल के रूप में अस्तित्वमान हुए तथा इनके पुजारी भी स्थानीय समुदाय के थे। ब्राहम्णों का यहाँ स्थान नहीं था। आज भी यहाँ के पुजारी

स्थानीय नस्ल के ही हैं। आधुनिकता के प्रभाव में कहीं कहीं ब्राम्हणों का प्रवेश हो रहा है। प्रसंगक्रम में उल्लेख करना जरूरी है कि किता (थाना सिल्ली) के नेगटीडीह में नेगटी मूर्ति की पूजा फिलहाल तक श्री रामकिशोर महतो के पिताजी स्व. नरहरि महतो करते थे। गौतमधारा के बौद्ध मंदिर के पुजारी जिलिंग सेरेंग गांव के महतो परिवार से ही थे तथा हैं। देउलबेड़ा में श्री चुनु मुंडा के पूर्वज पूजा करते आ रहे थे लेकिन अब भी पुजारी हैं। यहाँ आज ब्रम्हण पुजारी को भी स्थान मिला है। यही कहानी तमाड़ के देउड़ी मंदिर की है। प्रस्तर मूर्तियों की स्थापना यहाँ जैन व बौद्ध काल में ही हुई थी। ब्राह्मण पुजारियों का प्रवेश सौत के रूप में हुआ है जो यहां की मौलिकता को नष्ट करने का षड़यंत्र भी है। प्राचीनकाल में भक्ति की चर्चा हुई लेकिन वह भक्ति काल नहीं कहा जा सकता।

जैना मोड़ का नामकरण जैन केन्द्रों के मद्देनजर ही हुआ है। जैन लोग नदी किनारे सुरम्य स्थानों पर ही उपासना स्थलों का निर्माण करते थे। दामोदर नदी किनारे जैन केन्द्रों में जाने के लिए जो मोड़ बना वह जैन मोड़ था– बाद में जैना मोड़ का रूप लिया।

जैन–युग, बौद्ध युग के बाद तंत्र का जो भी रूप प्रचलित हुआ इसमें हमारे लोगों की भागीदारी रही, यह हमारी मान्यता है। कृष्ण भक्ति काल में बाउल संपद्राय का इस अंचल में सृष्ट होना इसी कड़ी को सत्यापित करता है। चैतन्य महाप्रभु के समय यहाँ रचनाकारों की भरमार हुई तो कुछ लोग भक्ति तरंग में बह भी गये। मठों तक भी इनकी पहुंच हुई। वर्तमान में आनन्द मार्ग की धारा चली तो इसका व्यापक प्रभाव यहां दिखाई पड़ा। लोग सिर्फ अनुयायी ही नहीं बने बल्कि संन्यास जीवन को भी अंगीकार किया। खिस्चियनिटि को नजरअंदाज करें तो भी नहीं चलेगा। अपवाद स्वरूप ही सही लेकिन कुछ लोग इसको (चाहे जिस कारण) अपनाये व एकाधिक पादरी भी बने। जैसे सुरेन्द्र मोहन एम. जी. भूतपूर्व अध्यक्ष जी.ई.एल. चर्च, राँची। इसी प्रकार "पौलुस नेमो जो जनजाति कुड़मी समाज के थे, ख्रीस्तीय होने की चर्चा है। पौलुस नेमो को जर्मन लुथेरन मिशनरियों ने बपतिस्मा दिया और दिनांक 16 मार्च 1869 में उन्हें पुरोहिताई पदाभिषेक किया गया। गोस्सनर चर्च के इतिहास में यह रेकॉर्ड है।"

(बिशप डॉ. एन. मिंज, 9–11–98, स्रोत– बसंत कुमार मेहता, झाडखंडी जन

जीवन, 1999)

संप्रतिकाल में बालयोगेश्वर, आशाराम बापू, गौड़ीयामठ, अनुकूल चन्द्र, रामकृष्ण आश्रम आदि के अनुयायी भी यहां बने।

साहित्य में हमें रचनाओं व रचनाकारों का लेखा जोखा करना जरूरी होता है। उनके प्रति आभारी होना हरेक साहित्यकारों व भाषाप्रेमियों का कर्त्तव्य है। अतः हम जहाँ तक ज्ञात हो सका है, भक्ति काल के कवियों को स्मरण करने की चेष्टा कर रहे हैं।

**कवियों के नाम**

1. ब्रजुराम तांती
2. बिनोद सिंह
3. गौरांगिया
4. दीना तांती
5. उदाय कर्मकार
6. तुलसीदास
7. चामु कर्मकार (सीतारामपुर, वर्द्धमान)
8. अखु कर्मकार (मानबाजार)
9. जगत कविराज (मानबाजार)
10. दुर्योधन दास (हेसलांग, बागमुंडी)
11. नरोत्तम सिंह मानकी (तोड़ांग, झाइलदा)
12. रामकृष्ण गांगुली (बीरडीह, ईचागढ़, चांडील)
13. उदय कवि, पातकुम
14. रामेश्वर सिंह – दमुरपुर, संथालडीह
15. परेश कर्मकार – हुड़ा, पुरूलिया
16. गदाधर चौधरी – पलमा, पुरूलिया
17. देवी दास – भांगड़ा, पुरूलिया
18. हजारी प्रसाद राजवाड़ – दुमदुमि, पुरूलिया
19. गरा
20. अर्जुना
21. अमरिता आदि

# कुड़मालि आधुनिक काल

पूरे विश्व में औद्योगिक क्रान्ति ने ही आधुनिकता को समग्र रूप में खड़ा करने का काम किया था। यूरोप के "रिनांसा" (पुनर्जागरण) ने ही नवचेतना का सूत्रपात किया था। अतः सामाजिक जीवन में बदलाव तब से ही दृष्टिगोचर होने लगा था। सामाजिक परिदृश्य ही साहित्य के स्वरूप को प्रभावित करता है। अतः विश्व साहित्य में भी उसके बाद से ही नव सर्जन की परंपरा चल पड़ी हम विश्व के उन्नत भाषा के साथ कदम मिला के नहीं चल सके, क्योंकि हमारी जीवन शैली एक विशेष भूखंड विशिष्ट पेशा (खेती) के साथ ही जुड़ी रही। हमारे यहाँ जीवनशैली में परिवर्तन (अर्थात खेती से हटकर अन्य जीविका अपनाना) बहुत बाद में आया। औद्योगिक क्रान्ति का फल हमारे सामाजिक जीवन में बहुत बाद अर्थात स्वतंत्रोत्तर काल में आया। लेकिन आधुनिकता की जहर को हमारे यहां सृष्ट करने में स्वतंत्रता संग्राम के आन्दोलन का बहुत बड़ा हाथ है। चाहे गाँधीजी का इस इलाके में भ्रमण हो, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का हो व अन्य नेताओं का, हमारे काफी नौजवान व देश प्रेमी उनसे जुड़े व देश भक्तिगीत झूमर जोड़ने में आगे बढ़े। हमारे कुछ वैसे रसिक भी हैं, जिन्होंने प्रेमगीत या टुसु गीतों की रचना की होगी, लेकिन वह गाँव या अंचल विशेष में ही सीमित रह गया। छपाई के अभाव में हो सकता है अब तक के कुड़माली साहित्य, वाङमय से दूर रहा। हमारा मानना है वैसी रचनाएं यदि उपलब होती हैं तो इन्हें अवश्य कुड़माली साहित्य में स्थान दिया जाना चाहिए।

मूल बात पर लौट चलें। आधुनिकता की लहर व रचना धर्मिकता के मद्देनजर हमें आधुनिक कुड़माली का काल 1900 से ही मानना चाहिये। कहने का तात्पर्य कुड़माली का आधुनिक काल, प्राचीन व मध्यकाल की तुलना में कम कालावधि का है। दुख इस बात का है कि अन्य कबिलाई भाषाओं का आधुनिक काल कामोवेश 1900 ई. के लगभग ही प्रारंभ होता है। लेकिन लिखित साहित्य में वे काफी आगे हैं। हमें खुशी इस बात पर है कि हमारी भाषा परंपरा को हमारी महिलाओं ने अपनी रसिकता के कारण व उत्सव, अनुष्ठानों के प्रयोजनानुसार जीवंत रखा, साथ में बाउल परंपरा के हमारे यहाँ के साधुओं (चाहे वे कोई भी जात से संपर्कित रहे) व रसिकों ने इसके प्रवाह को गति दी। नये पीढ़ी के भाषा प्रेमी नौजवानों/ युवतियों ने भी आज जो

रूझान दिखाया है वह काबिले तारीफ है और हमें विश्वास एवं भरोसा है कि आने वाले समय में ये मातृभाषा कुड़माली के जलते मशाल को आगे की ओर ले चलेंगे।

आधुनिक कुड़माली साहित्य सर्जन प्रक्रिया में परिस्थिति जन्य सर्जना का उदाहरण हम महीपाल साधु, केशव चन्द्र तिडुआर, व सृष्टिधर केटियार, आदि में पाते हैं जो लिखित तौर पर उपलब्ध हैं। हो सकता है और भी रसिकों ने परिस्थितिवश साहित्य रचना धर्मिकता को साकार रूप दिया हो। लेकिन हमारी नजर में न आया हो। अतः आधुनिक रचनाओं पर गहन शोध होना चाहिए। सुधी पाठकों के लिए, महिपाल, विद्रोही कवि केशवबाबु, संत सृष्टिधर बाबा की रचनाओं की चर्चा करेंगे।

जनश्रुत है सन् 1930 में गाँधीजी सिल्ली, जिला राँची पधारे थे। सिल्ली हाट बागान में स्वतंत्रता आन्दोलन सभा का आयोजन हुआ था। जिसमें बाबा महिपाल भी उपस्थित थे। देश के लिए प्राण निछावर करनेवाले रणबांकुरों के प्रति गीत लिखने व शहीद मेला लगाने की भावना से यहां प्रेरित हुए। यहीं निश्चित हुआ कि झालदा के शहीद सत्य किंकर की स्मृति में गुजरू व सालदहा, नदी के किनारे मेला का आयोजन हो। ज्ञात हो कि तत्कालीन झालदा राजा के ईशारे पर अंग्रेज पुलिस वाहिनी ने सत्य किंकर को मारा था। निर्णय अनुसार 1931 की 15 जनवरी को मेला का आयोजन हुआ लेकिन अंग्रेजी हुकुमत को यह नागवार लगा। मेला को तितर बितर करने के लिए अंग्रेज पुलिस वाहिनी मेला स्थल गयी। वहां पांच नौजवान लाठी खेल का करतब दिखाने अखड़ा में प्रवेश किये। यह प्रदर्शन अंग्रेज मजिस्ट्रेट (जो पुलिस वाहिनी को लीड कर रहे थे) को सीने में भाला चुभने जैसे लगा, उन्होंने तुरंत गोली चलाओ, गोली चलाओ, का आदेश दिया। बस! दो तीन मिनट में ही हमारे वीर नौजवान गोली खाकर खून से लथपथ हो जमीन पर गिर गये और मातृभूमि को चूमकर नमन किये, वे वहीं शहीद हुए। गौरतलब है, ये देश भक्त गोली के डर से न पीछे हटे न कहीं भागे। बाबा महिपाल का अंतस्थल देश भक्ति की राग में इस तरह आंदोलित हुआ कि शहीदों की स्मृति में इन्होंने निम्न गीत की रचना की।

काहाँ गनेश ठेंगा लाठि
काहां तर दतुन काठि

अरे! भाई काहां हेराले जिबन।

ज्ञात हो इस मेला की परंपरा आज भी जारी है और यह तब से ही शहीद मेला के रूप में जाना जाता है। प्रतिवर्ष यह मेला पौष संक्रान्ति के बाद 18 जनवरी को लगता है। इसका आयोजन गोकूल नगर के नौजवानों द्वारा होता है। इसकी पृष्ठ पोषकता गोकुल नगर के आठ घरवाले करते हैं।

दूसरा उदाहरण जब जापानी पद्धति द्वारा खेती का प्रचलन हुआ, इनकी परिस्थिति जन्य सर्जन धारा ने भी अपना रूप दिखाया। इनकी निम्न रचना सामने आई।

खेति करा सभेकाइ

जापानि कर ढंग

हे भाइ! जापानि कर ढंग

तबे जानि देसें बेसि फसल हेतेइक

दुइ गुना हेतेइक जे इनकम।

गौरतलब है कि तबके जमाने में इन्होंने अंग्रेजी इनकम शब्द का इस्तेमाल किया है जो इनकी प्रगतिशीलता को दर्शाता है और कुड़माली वाङमय को विस्तृति प्रदान करने का संकेत देता है।

परिस्थितिजन्य सर्जनात्मक उदाहरण हम माननीय कुड़मी व कुड़माली के पुरोधा स्व. केशव चन्द्र तिडुआर की रचनाओं में भी पाते हैं। रास्ता चलते चलते छोटे बवंडर को उठते देखकर इनकी ''बिड़उल'' सामने आई जिनकी कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं :

उदाहरण –

''बिड़उल''

बिड़उल! बिड़उल!

करिहिस तञ बेजाञ भुल

उठिहिस चुडुल बुडुल

ना करिके हुलुस थुल

बिड़उल! बिड़उल!

करिहिस तञ बेजाञ भुल।।

खटअहत आर नि पाउअहत
गुमरि गुमरि मरअहत
खाटुआक मनेक गुमाहर
तुरते ना करें तञ बाहाइर
उठबे समइअएँ जेठेक डुल
बिड़उल! बिड़उल!
करिहिस तञ बेजाञ भुल।।

उदाहरण–2

झारखंडियों को सावधान करते हुए इनकी "हुसिआर" कविता सामने आई जिनकी कुछ पंक्तियां निम्नलिखित हैं।

हुसिआर! हुसिआर! हुसिआर!
झाड़खंडि आइज हेउआ हुसिआर
बांचेक लड़ाई लड़े हेउआ तइआर
लड़ाइ छाड़ा बांचेक उपाइ नेखेइक आर
हुसिआर! हुसिआर! हुसिआर!
झाड़खंडि आइज हेउआ हुसिआर।

उदाहरण–3

संआधिन मुलुकें झाड़खंडि पराधिनताक आंधारे
अन, धन, माञएक थन चुसअहत देखा देसि थुथेरे
माञ–भुञ, भाखि चारि सभे हेलि छार खार
भाभि देखा हामर उजड़े किना बाकि आहि आर
हुसिआर! हुसिआर! हुसिआर!

ठीक इसी तरह की रचना हम संत कवि सृष्टिधर महतो, केटिआर की रचनाओं में पाते हैं। जब पुरूलिया जिला को बंगाल में रखा जाय या बिहार में, का प्रस्ताव चल रहा था तो तत्कालीन कमिशन के सामने अपना पक्ष प्रस्तुत करने में इन्होंने कैसे अपने लोगों को प्रेरित किया उसका उदाहरण निम्न कविता में पाते हैं।

2. दलें दलें चाला

दले दले चाला सउब, दिहाक ना भा घुसे
मानभुञएक चाइल चलन
देखे आउताक कमिसन
तहरा रइहा ना मट्अरेक आसें
दले दलें चाला.. ना भाई घुसे।

मानभुञएक सिमा लेइके, ठिक करता तिन लकें
हामरा सभे कहब अकरे पासें
दले दले चाला .... घुसे।

मानभुञएक मातरि भासा, आरदा कुड़मालि खासा
बंगला कइह हामरा बंगालि कर पासें
दले दले चाला .... घुसे।

सबकाई देहाक मने जर
करिहा ना भाइ काकरअ डर
ताक हेराइहा ना निजेकर दसें
दले दले .... घुसे।।
सबकाइ भाइ चाला कहअप
नित्अ एबार सभे मरअप,

बांचि रहप आर केथिक आसे
दले दले चाला ... घुसे
पुरूलियां रहप राइत
बिहान हेलेइ रांचि जात
सभे रहप सड़अपेक पासें
दले दले .... घुसे।
बिंदाबनेक दउड़ धुप
तहरा आइहा सबाइ चुप
देबेन माहात्अ आहे तहर पासें
दले दले .... घुसे।
निजेइक धन लुटि लेले
छाड़िहा ना जिबन गेले
सिसटिधरअ आहे तहर पासें
दले दलें चाला साउब, दिहाकना भाइ घुसे।

परिस्थितिजन्य इनकी सर्जनात्मक क्षमता का उदाहरण निम्न कविता में पाते हैं:

मानभुञ आहेक बिहारें
मानभुञ आहेक बिहारें आर रहतेक बिहारें
जड़अ–सड़अ रहब किना हामरा डरें हअ।
हामरा आइह एतेक लक
काकर आहेक एतेक हक
हामरा के लेले जाताक जरें हअ
मानभुञ आहेक ..... बिहारें।

मानभुञएक माटिक रंगे, मेसेक नि आन राइजेक संगे

तबे हामरा मेसब किना करे ह्अ?
तखन रहेइक बिटिस राइज
सेटाउ भाभि देखा आइज
नाम रहेइक छट्अ नागपुर ह्अ
मानभुञ ........ बिहारें।

मानभुञए आहेक धन, लहा कइला तांबां रतन
से सउब देखले आहात चरे ह्अ
मानभुञ आहेक .... बिहारें।

हामर आहि आञआ हक
लुटेक बेराञ कतेक लक
हामर धन आहि माटिक तरे ह्अ
मानभुञ आहेक ... बिहारें।
हामर देसेक धन खाइके
चलअहत अखरा मकमकाइके
आसाम पाठाउहत काम करे हअ
मानभुञ आहेक .... बिहारे
रामपदअ सिह मछाइदास
एरा किछु देला आस
हामराउ सिखले आइह मरे ह्अ
मानभुञ आहे .... बिहारें।
भाइगे रहत देबेन माहातृअ
मानभुञ के करेक सानत्अ
पारेइ रिचिक आधेक बुइदि धरे ह्अ

मानभुञ आहेक .... बिहारें।

मानभुञएक बेउरा, सेटाउ देखले आहात अरा

हुसिआर! हुसिआर! कहेइ सिसटिधरे हअ

मानभुञ आहेक ... बिहारें।

कुड़मालि इसी तरह के परिस्थितिजन्य रचनाओं से भरी पड़ी है। हमारे और भी कवि हैं जिन्होंने ऐसी रचनाएं की हैं।

स्वातंत्रोत्तर काल में रांची में 26 जुलाई 1957 को आकाशवाणी की स्थापना हुई। इसके "देहाती दुनिया" कार्यक्रम ने यहां के स्थानीय कवि, साहित्यकार, कलाकार के लिए मंच प्रस्तुत किया। इसके फलस्वरूप जगह जगह कवि, कलाकारों की टोलियां बनने लगी, भाषा विषय एकांत साधना केन्द्र/संगठन तैयार होने लगे। अब नृत्य गीत अपनी सांस्कृतिक विरासत 'आखड़ा' की सीमा को लांघकर मंचीयस्वरूप धारण करने लगा। अपनी विशिष्टता के कारण कुड़माली की लोकप्रियता को एक नया आयाम मिला। स्थानीय साहित्यकारों/रंगकर्मियों के बीच यहां की भाषा साहित्य को, संस्कृति इतिहास को विशेष रूप में प्रतिष्ठित करने की आकांक्षा बलवती हुई। इस दरम्यान कोंचो, सिल्ली के माननीय अंगद महतो, एडवोकेट के प्रयत्न को भुलाया नहीं जा सकता। इनके अथक प्रयास से ही आकाशवाणी केन्द्र, रांची में कुड़माली अपने गीत लय और छन्द्व के साथ स्थान पाने में सफल हुई।

उस जमाने में जिन लोगों ने व्यक्तिगत या दल के साथ आकाशवाणी केन्द्र, राँची में प्रोग्राम पेश किए उनमें ये प्रमुख हैं:

1. रामसाय महतो, कोंचो, सिल्ली
2. माननीय अंगद महतो, एडवोकेट
3. गणेश राम सिंह, पाटका, सिल्ली
4. महीपाल साधु – नागेडीह, सिल्ली
5. वृकोदर महतो – लोवापीढ़ी, सिल्ली
6. तुलसी दास गोस्वामी– टुटकी, सिल्ली
7. वानेश्वर डुमरिआर, साधु
8. डॉ. मानसिंह महतो कोंचो

नोटः माननीय श्री महत महतो, लोवादाग, सिल्ली तत्कालीन प्रोग्राम एक्जिकुटिव, आकाशवाणी, राँची का कुड़माली कार्यक्रम दिलवाने में प्रशंसनीय योगदान रहा है।

संप्रतिकाल में

1. झुमर सम्राट विजय महतो
2. श्रीमती मनोरमा महतो, प्रथम नारी संगीत दल
3. श्री सुरेन्द्र नाथ महतो
4. रतन कुमार महतो, किता, सिल्ली
5. रामधन राम कालिन्दी, किता, सिल्ली
6. जनक सिंह महतो किता, सिल्ली
7. नगेन पुनोरिआर
8. डॉ वीणापाणी महतो
9. अंजली महतो आदि हैं।

भाषा साहित्य खड़ा करने की कड़ी में बेथेसदा गर्ल्स स्कूल के प्रांगण में 6–7 मई 1978 को झारखण्ड बुद्धिजीवियों का एक सम्मेलन हुआ। सम्मेलन में झारखण्ड बुद्धिजीवी परिषद् का गठन किया गया जिसका उद्देश्य थाः

1. झारखण्ड के आर्थिक–सामाजिक तथा सांस्कृतिक उत्थान के लिए कार्यक्रम तय करना।

2. उस समय डॉ निर्मल मिंज, प्राचार्य गोस्सनर कॉलेज, राँची परिषद् के निर्विरोध अध्यक्ष चुने गए। उस सम्मेलन में कुड़माली भाषा संस्कृति की ओर से

1. श्री विनोद बिहारी महतो–धनबाद
2. श्री बसंत कुमार मेहता–दिंदली, तमाड़
3. श्री लक्ष्मीकांत मुतरूआर– भंडरो, कुरा चास
4. प्रो. शशिभूषण महतो, काड़वार– गोस्सनर कॉलेज
5. श्री श्याम सुंदर महतो– कोंचो, रांची
6. श्री युधिष्ठिर महतो

7. श्री अंगद महतो– कोंचो, सिल्ली

8. श्री विष्णु चरण महतो

9. श्री विरंची महतो–गोस्सनर कॉलेज

10. श्री अघनु महतो, कांटाडीह, सिल्ली

11. भोला नाथ महतो किसान, बोकारो

12. शैलेन्द्र महतो, घाटशिला

13. सोमनाथ महतो पारासडीह

14. गणपति महतो के. के. कॉलोनी, राँची

15. पीताम्बर महतो, गागी सुकुरहुटु

इसी समय झारखण्ड क्षेत्र की चेतना में नित नये उभार आ रहे थे। धनबाद से प्रो. वीर भारत तलवार द्वारा सम्पादित "शालपत्र" और झारखण्ड वार्ता ने यहां के लोगों को एक नयी दिशा दी। शालपत्र में प्रकाशित श्री लक्ष्मी कान्त मुतरूआर और श्री वसंत कुमार मेहता के निबंधों से कुड़माली भाषा की अहमियत प्रकट हुई। सच कहा जाय तो कुड़माली भाषा को प्रतिष्ठित करने और दुनिया की नजर में लाने के लिए इन दो कुड़माली पुरोधाओं का अवदान बहुत ही विशिष्ट था जो चिरस्मरणीय रहेगा।

## कुड़मी जातीय- सांस्कृतिक व कुड़माली भाषाई चेतनाः

यह हकीकत है कि कुड़मी जातीय चेतना, सांस्कृतिक चेतना व भाषायी चेतना आज जितनी प्रखर है वह कल भी थी। इस जाति की विशेषता है कि इन्हीं चेतना के बदौलत यह आज समाज में उन्नत मस्तक कर खड़ी है। यह सर झुकाने में आसानी से कभी तैयार नहीं हुई। नतीजा है कि भाषा संस्कृति जीवंत है। चूंकि भाषा संस्कृति क्षेत्र विशेष में प्रचलित रही व पूरे समाज को इस जाति/कबिला ने समरसता प्रदान कर दृढ़ता से बांध रखा, अतः इसे मुख्य अग्रणी जाति/कबिला का स्थान प्राप्त था व आज भी है। सहिया, फूल व प्रसाद बनाने की परंपरा में इनका योगदान अंशदान अनस्वीकार्य है। क्षेत्रीयता के मद्देनजर अकुड़मियों ने भी यहां की संस्कृति भाषा के लिए अपना योगदान दिया।

भाषा–साहित्य के लेखन गायन में हर साहित्य भाषा में कुछेक

कवियो/साहित्यकारों/समाजसेवियों का योगदान रहता है लेकिन वैसे लोगों की भी कमी नहीं होती है जो जातीय, भाषाई व साहित्यिक चेतना को जीवित रखने व यथासंभव उसे प्रतिष्ठित करने के लिए अपना अमूल्य योगदान अंशदान, सपोर्ट (आर्थिक, मानसिक रूपेण) देने के लिए तैयार रहे हैं। भाषा संस्कृति के नेपथ्य में रहनेवाले ऐसे मनीषीगणों को कभी भुलाया नहीं जा सकता है। कुड़माली जातीय भाषायी व सांस्कृतिक चेतना को जीवंत रखने के अनमोल प्रयास के लिए इन महानुभावों के प्रति हम कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हैं। ये हैं :

1. स्व. सृष्टिधर कटिआर
2. स्व. महिपाल साधु
3. स्व. रामपदो सिंह बानुआर – प्रथम अध्यक्ष, आदिवासी कुड़मी . समाज, जारगो, झाइलदा, पुरूलिया.
4. स्व. राधागोविन्द सिंह – झटगांव, तमाड़, राँची
5. स्व. वसंत कुमार मेहता– अध्यक्ष, झारखण्ड आदिवासी कुड़मी समाज
6. स्व. लखीकान्त मुतरूआर– उपाध्यक्ष, झारखण्ड आदिवासी कुड़मी समाज, भंडरो, बोकारो
7. स्व. केशव चन्द्र तिडुआर– महासचिव, आदिवासी कुड़मी समाज
8. स्व. मधुसूदन महतो – आसनतलिया, चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
9. स्व शिव प्रसाद महतो– बड़पोस, मनोहरपुर, प. सिंहभूम
10. युधिष्ठिर महतो, काड़वार– डुमरेदा, बान्डामुंडा, सुंदरगढ़
11. स्व. विनोद बिहारी महतो– धनबाद
12. स्व. खुदीराम महतो, पूर्व सांसद– पुरूलिया
13. स्व. धनुर्जय महतो, पूर्व एम.एल.सी. – चांडील, सराईकेला, खरसावां
14. स्व. प्रफूल्ल कुमार महतो– पटमदा, पूर्व सिंहभूम
15. डॉ वीणापाणी महतो– जमशेदपुर
16. डॉ विद्याभूषण महतो– जमशेदपुर
17. तपन कुमार महतो– उलियान, जमशेदपुर

18. गुरूपदो महतो उलियान, जमशेदपुर
19. स्व. गनेश महतो– उलियान, जमशेदपुर
20. स्व. सुनील महतो, पूर्व सांसद– जमशेदपुर
21. श्री पदलोचन महतो– चितोरोढ़ा, वारीपदा, मयूरभंज
22. निरंजन महतो, बीडीओ– नयाग्राम, मिदनापुर
23. ललित मोहन महतो– पुखुरिया, झाड़ग्राम, मेदनापुर
24. डॉ विभुतिभूषण महतो– धुमसाई, झाड़ग्राम, मेदिनापुर
25. रीता महतो, शिल्पी – धुमसाई, झाड़ग्राम
26. स्व. पूर्णचन्द्र महान्तो – पलाशवाधा, बारीपादा, उड़ीसा
27. अनुसुइया माहान्तो, शिल्पी– पलाशबाधा, बारीपदा, उड़ीसा
28. प्रभाती माहान्तो, शिल्पी – पलासबांधा, बारीपादा, उड़ीसा
29. गुलापी महतो शिल्पी– पलाशबांधा, बारीपदा
30. डॉ आदिकंद महतो– चितोरोढ़ा, बारीपदा
31. श्री भीमचरण महतो– नीमसाई, जोसीपुर, मयूरभंज
32. लखीन्द्र महतो– जोसीपुर, मयूरभंज
33. दिवाकर महतो– मदरंगाजुड़ी, मयूरभंज
34. सोसोधर महतो– बिसइ, रायरंगपुर, मयूरभंज
35. धीरेन्द्र नाथ महतो– टांगाबिला, टाटो, मयूरभंज
36. एडवोकेट विद्याधर महतो– करनजिया, मयूरभंज
37. एडवोकेट जगमोहन महतो– करनजिया, मयूरभंज
38. दीनबन्धु महतो– घोड़ा घाघरी, करनजिया, मयूरभंज
39. नरहरि महतो– ठाकुरमुड़ा, मयूरभंज
40. डॉ प्रताप महतो– साहार पाड़ा क्योंझर
41. गुरूचरण महतो– मुरूतगुट्ठु, बहड़दा, मयूरगंज
42. बाबुराम महतो– रायरंगपुर, मयूरभंज

43. खेत्रोमोहन महतो– बड़बिल, क्योंझर
44. गोविन्द चन्द्र महतो– चंपुआ, क्योंझर
45. गोमा महतो– गोलानपसि, भंजकिया, मयूरभंज
46. रत्नाकर महतो– इटामुड़ी, मयूरभंज
47. स्व. मुनिलाल महतो जालबानुआर– पहाड़ीगढ़ा, परास बनिआ बलियापुर, धनबाद
48. हीरालाल संखवार– बालियापुर, धनबाद
49. रघुनाथ महतो, संखवार – रघुनाथपुर, बालियापुर, धनबाद
50. सुभाष चन्द्र महतो बानुवार– भागारामपुर, बलियापुर, धनबाद
51. अनिल पुनोरिआर – मनोहरटांड़, सिंदरी
52. तारापदो बाघबानुआर– पालानी बलियापुर
53. तारापदो काड़वार– बांधाडीह, चास बोकारो
54. जगरनाथ तिडुआर– कुंबाटाँड़, बोकारो
55. गौरीनाथ बाघबानुवार– केंदाडीह, पिंडराजोड़ा, चास
56. हरिबोल हिंदइआर– खेराबेड़ा, चंदन कियारी
57. सुधीर चन्द्र महतो, बंसरिआर– लंका, चंदनकियारी
58. हरिपदो महतो बंसरिआर– लंका, चंदनकियारी
59. गनेश महतो– चिरूडीह, तोपचांची, धनबाद
60. लखीकान्त जालबानुवार– खेदाडीह, घापरी, चंदनकियारी, बोकारो
61. पशुपति पुनोरिआर– मनोहरटांड़, सिंदरी, धनबाद
62. स्व. वैद्यनाथ महतो, संखवार– बाड़ाजामुआ, बड़आड़ा, धनबाद
63. शैलेश चन्द्र महतो– ढीपा, मनोहरपुर, प. सिंहभूम
64. स्व. विष्णु चरण महतो, कांटाडीह, सिल्ली
65. स्व. किशोरी मोहन महतो– वामनडीह, सिल्ली, राँची
66. स्व. उदासीन कुंभप्रसाद महाराज– बांकुड़ा
67. भरत महतो– बांकुड़ा

68. क्रांति प्रसाद महतो– कांटाडीह, राँची
69. अंगद महतो– कोंचो, सिल्ली, राँची
70. स्व. अंगद सिंह– लोवापिढ़ी, सिल्ली, राँची
71. वृकोधर सिंह– लोवापिढ़ी, सिल्ली, राँची
72. हीरालाल महतो– तीनपहाड़, साहेबगंज
73. नरसिंह महतो दीनार्क– गोड्डा
74. रिझु चौधरी– साँढी, रामगढ़
75. प्रेमचंद महतो– नेउरी विकास, राँची
76. संतोष महतो– केदल, मेसरा, राँची
77. मनराखन महतो– केदल, मेसरा, राँची
78. मोतीलाल महतो– चाकला, ओरमांझी, राँची
79. रामेश्वर महतो– मठारी, झाइलदा, प. बंगाल
80. श्रीपदो महतो– रानीडीह, झाइलदा, पुरूलिया
81. बरफूल महतो– जारगो, झाइलदा, बंगाल
82. आनंद खुंटदार– इलु, जारगो, झाइलदा, पुरूलिया
83. स्व. चन्द्रकांत महतो– तिलाइपीड़ी, सोनाहातु, राँची
84. पार्वती चरण महतो– अदरअकुंडी, चास, बोकारो
85. डॉ. वृन्दावन महतो– मारवाडी कॉलेज, राँची
86. डॉ. परमेश्वरी प्रसाद महतो– राँची कॉलेज, राँची
87. प्रो. श्रीकांत महतो– सिल्ली, कॉलेज, राँची
88. प्रो. लोहरा महतो– बुंडु कॉलेज, राँची
89. स्व. डॉ. भूवनेश्वर मेहता– भुरकुंली, सराईकेला, खरसावां
90. प्रो. महेश चन्द्र महतो– शहीद निर्मल महतो कॉलोनी, सामलोंग
91. राजकिशोर महतो– अध्यक्ष, झारखण्ड विधि आयोग, नामकुम
92. शैलेन्द्र महतो– पूर्व सांसद, सेताहाका, चक्रधरपुर

93. सत्यनारायण महतो– डाटमदा, तमाड़
94. फूलचांद महतो– भुइयांडीह, तमाड़
95. बनवारी महतो पाहान– रागड़ा बाडांग, तमाड़
96. प्रो. चन्द्र मोहन महतो– रागड़ा बाडांग, तमाड़
97. डॉ मनोरंजन महतो– सिलदा, झाड़ग्राम
98. श्री मनोरंजन महतो– झाड़ग्राम, मेदनापुर
99. अशोक कुमार सिंह महतो– रानीबांध, रायपुर, बांकुड़ा
100. श्रीमती सुधारानी महतो, शिल्पी– रानीबांध, बांकुड़ा
101. दसरथ महतो– दुंदार, बांकुड़ा
102. अचिंतअ महतो– हरिमैती, नयाग्राम, मेदनापुर
103. ब्रजेन महतो– हरिमैती, नयाग्राम
104. भोभतो सतपथी– तुलिबड़, झाड़ग्राम
105. गुनोधर महतो– धबाबनि, झाड़ग्राम
106. बीना महतो, शिल्पी– झाड़ग्राम, मेदनापुर
107. मीनु रानी महतो, शिल्पी– चांदाबिला, मिदनापुर
108. पंचानन महतो काड़वार– धरमडांगा, मालदा
109. दिनेश महतो काड़वार– धरमडांगा, मालदा
110. नरेश महतो काड़वार– मानिकनगर, नदिया
111. धीरेन सरकार– मानिक नगर, नदिया
112. अमूल्य रतन महतो– 24 परगना, प. बंगाल
113. विष्णु चरण राय– झुंझका, पुरूलिया
114. अनन्त केसरिआर– तुलिन, पुरूलिया
115. क्रीटीभूषण महतो– रामकृष्णपुर, पुरूलिया
116. सुनील कुमार महतो– कालुहर, पुरूलिया
117. सीताराम महतो– ओटार, प. सिंहभूम

118. स्व. कालीबदन महतो– दिगी लोटा, प. सिंहभूम
119. स्व. बलभद्र महतो– ठेसापीड़ प. सिंहभूम
120. स्व. अनंत कुमार महतो– महुलडीहा, सोनुवां, प. सिंहभूम
121. स्व. लोकनाथ महतो– महुलडीहा, सोनुआ
122. स्व. बिसेशर महतो– बाउरीसाइ, कराइकेला, प. सिंहभूम
123. श्याम सुंदर महतो– आसनतलिया, चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
124. प्रभात कुमार महतो– आसनतलिया, चक्रधरपुर, सिंहभुम
125. स्व. प्रेमलता महतो
126. स्व. कुरसों महतो– सेताहाका, चक्रधरपुर
127. ओम प्रकाश महतो– चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
128. गनेश्वर महतो– शहीद निर्मल महतो कॉलोनी, चक्रधरपुर
129. रामशंकर महतो– ओटार, प. सिंहभूम
130. प्रो. भुवनेश्वर महतो, तमाड़, प्रोफेसर कुड़माली, पटमदा कॉलेज
131. नरेन्द्र महतो– बाउरीसाइ, कराइकेला, चक्रधरपुर
132. बुचन महतो– लापित पाड़ा, पुरूलिया
133. भुषण महतो– पारगेला, बांदवान, पुरूलिया
134. डॉ. पशुपति प्रसाद महतो– डाबर, पुरूलिया
135. स्व. मुरली पुनोरिआर– कोटशिला, पुरूलिया
136. अजित महतो– हेंटगुगुई, पुरूलिया
137. चड़गु महतो– फोरेस्ट मोड़, चास रोड
138. सूर्य नारायण महतो– सिंदरी, चास रोड
139. डॉ० राजश्री महतो, झाड़ग्राम
140. उपेन महतो– खेरी बइहार, पुरूलिया
141. नगेन पुरोनिआर– टिमगदा, कोटशिला, पुरूलिया
142. स्व. बानेश्वर महतो, डुमरिआर– बिसरिया, झाइलदा

143. शहीद प्रमोद महतो– नेउरी विकास, राँची

144. डॉ धनेश्वर महतो– पुनदाग, राँची

145. डॉ अमर कुमार चौधरी– कुलसचिव, राँची विश्वविद्यालय, चिलदाग, गुदलीपोखर

146. खिरोधर महतो हस्तुआर– चास, बोकारो

147. शंकर लाल महतो, बंसरिआर– रूगड़ी, चक्रधरपुर, प. सिंहभूम

148. दिनेश महतो– चेला बेड़ा, चक्रधरपुर

149. दिनेश महतो– ओटार, चक्रधरपुर

150. स्व कमीशन महतो, कांटाडीह, सिल्ली

151. श्री लोबिन महतो, किता, सिल्ली

152. प्रसेनजीत महतो, जमशेदपुर

153. अशोक कुमार महतो, तुंकु, सिल्ली

154. श्री भगवान दास महतो, झालदा, पुरूलिया

155. स्व. ठाकुरदास महतो, पुरूलिया

156. स्व. गुरूचरण सिंह, पाटका, सिल्ली

157. कमल महतो, प्रिंटर्स, कांटाटोली, राँची

158. प्रो. भूवनेश्वर महतो, सुरज सिंह मेमोरियल कॉलेज, राँची

159. निरंजन महतो, अवकाशप्राप्त हेडमास्टर, नवाडीह, हाई स्कुल, तमाड़, राँची

160. हरिहर महतो, दींदली, तमाड़

161. विश्वनाथ महतो, सेरेंगडीह, तमाड़

162. संतोष महतो, उलीलहर, तमाड़

163. शरद महतो, बादला, तमाड़

164. शत्रुघन महतो, पेंड़ाइडीह, तमाड़

165. गदाधर महतो, महेशपुर, राहे, राँची

166. महादेव महतो, चास, बोकारो

167. संजीव महन्ता, राउरकेला

168. संतोष महतो, झुमर सम्राट, राज खरसावां

169. पीताम्बर महतो, गागी, सुकरहुटु

170. नीलपदो महतो, जोजोडीह, तमाड़

171. शिव दयाल महतो, चांडिल, सरायकेला

172. डॉ राजाराम महतो (कुड़माली भाषा परिषद्)

173. सावित्री महतो, गोड्डा

174. डॉ राजाराम महतो (जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग

175. ई. मोतीलाल महतो

## जनजाति व क्षेत्रीय भाषा विभाग की स्थापना व कबिलाई भाषाएं

राँची विश्वविद्यालय, में औपचारिक तौर पर अथक परिश्रम और बेचैन प्रतीक्षा के बाद 19 नवम्बर 1981 को कुडुख, मुंडारी, हो, संथाली, तथा खड़िया और नागपुरी, कुड़माली, भाषाओं की पढ़ाई, स्नातकोत्तर स्तर पर शुरू की गयी। इस विभाग में नामांकित प्रथम बेच के 191 छात्र–छात्राओं ने उस दिन अपनी खुशी के इजहार में मिठाइयां बांटीं। वैसे विभाग का विधिवत उद्‌घाटन बिहार के मुख्यमंत्री डॉ जगन्नाथ मिश्रा के द्वारा 17 जनवरी 1982 को आयोजित एक विशेष समारोह में हुआ। जिसकी अध्यक्षता राँची विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ अनुज कुमार धान ने की और मुख्य अतिथि तत्कालीन बिहार के शिक्षा मंत्री श्री करम चन्द्र भगत थे। ज्ञात हो कि इस विभाग की स्थापना का ऐतिहासिक निर्णय एक प्रतिनिधि मंडल के समक्ष छोटानागपुर के इतिहास मर्मज्ञ डॉ. सुरेश कुमार सिंह ने 12 मई 1980 को लिया था जो इस समय एक ही साथ दक्षिणी छोटानागपुर प्रमंडल के आयुक्त व राँची विश्वविद्यालय के कुलपति थे। यह क्षेत्र उनके इस महान उपकार के लिए चिर ऋणी रहेगा।

इसके पहले जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं की पठन पाठन के लिए जिन लोगों ने अथक प्रयास किया वे निम्नलिखित हैं।

1. स्व. एन. ई होरो

2. स्व. प्रफुल्ल कुमार राय
3. रण विजय नाथ सहदेव
4. डॉ वी. पी. केसरी
5. डॉ अनुज कुमार धान
6. स्व. डॉ प्रेम चंद होरो
7. डॉ निर्मल मिंज
8. स्व. डॉ रेव्ह. एस.ए.बी.डी. हंस
9. श्रीमती एस. पूर्ति
10. स्व. जुलियस बाः
11. स्व. लाको बोदरा
12. श्री बलराम पाट पिंगुआ
13. श्री लखीकान्त मुतरूआर
14. स्व. वसंत कुमार मेहता
15. स्व. श्री निवास पानुरी
16. स्व. ज्योतिलाल महादानी
17. स्व. नन्द किशोर सिंह
18. डॉ शशि भूषण महतो
19. प्रो. एच. एन. सिंह
20. स्व. विष्णु चरण महतो
21. श्री अंगद महतो
22. श्री शरदा प्रसाद शर्मा
23. स्व. लक्ष्मी नारायण सुधांशु
24. प्रो. करमा उराँव
25. डॉ. श्रवण कुमार गोस्वामी
26. स्व. जगतमणी महतो
27. स्व. ए. एफ. मार्खम

28. स्व. याकूब मसीह

29. स्व. डॉ राम खेलावन पांडे

30. स्व. डॉ एल. पी. विद्यार्थी

31.स्व. डॉ. के. सी. बोस

32. डॉ. रामदयाल मुंडा

33. डॉ. कृष्ण कुमार नाग

34. डॉ भुवनेश्वर अनुज

35. डॉ दिनेश्वर प्रसाद आदि

विशेष तौर पर उल्लेखनीय है कि पूर्व के निरंतर प्रयास के बावजूद राँची विश्वविद्यालय में इस क्षेत्र की भाषाओं की पढ़ाई शुरू नहीं हो सकी थी। 7 जुलाई 1973 को गुमला में पुनः एक जोरदार सम्मेलन का आयोजन किया गया। नागपुरी के मूर्धन्य कवि शारदा प्रसाद शर्मा इसके संयोजक थे। इसी पृष्ठभूमि में डॉ निर्मल मिंज प्राचार्य गोस्सनर कॉलेज राँची का इस मंच में प्रवेश होता है। स्थानीय चेतना और प्रतिभा को उजागर करने के उद्देश्य से ही उन्होंने संस्थापक प्रो. डॉ शशि भूषण महतो, अर्थशास्त्र, डॉ सुधीरंजन दण्डपाट, राजनीति विज्ञान, डॉ नृपेन्द नाथ ठाकुर, दर्शनशास्त्र से मिलकर गोस्सनर कॉलेज की स्थापनी की थी। 16 अगस्त 1973 को उन्होंने अपने कॉलेज में नागपुरी, कुड़ुख, मुंडारी विभाग के उद्घाटन के लिए बिहार के राज्यपाल आर. डी. भंडारे को आमंत्रित किया। शैक्षणिक स्तर पर यह प्रथम परिष्कृत और प्रभावशाली आयोजन था। इसका अच्छा प्रभाव पड़ा और इसी वर्ष से राँची विश्वविद्यालय में नागपुरी, कुड़ुख और मुंडारी भाषाओं की परीक्षा इण्टरमिडिएट स्तर पर शुरू हुई। संभवतः दो ही कॉलेज थे जहां के छात्रों ने इनकी परीक्षा दी। एक था गोस्सनर कॉलेज, राँची और दूसरा गणेशलाल अग्रवाल कॉलेज डाल्टनगंज मेदनीनगर। जनजातीय व क्षेत्रीय भाषा विभाग की स्थापना के बाद सभी जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं को प्रगति पथ पर अग्रसर होने में नयी उर्जा मिली। प्रसंगक्रम में उल्लेखनीय है कि डॉ अनुज कुमार धान के आग्रह पर ही डॉ रामदयाल मुण्डा अमेरिका से जनजातीय व क्षेत्रीय भाषा विभाग को संवारने के लिए यहां आये और अपना अविस्मरणीय योगदान दिया। इनका योगदान चिरस्मरणीय रहेगा।

## जनजातीय व क्षेत्रीय भाषा विभाग व कुड़मालीः

राँची विश्वविद्यालय में जनजातीय व क्षेत्रीय भाषा विभाग की स्थापना होने के बाद कुड़माली भाषा को संवारने व प्रतिष्ठित होने का मौका मिला। भाषा प्रेमी विद्यार्थीगण तब इस विभाग की ओर झुके तथा ''कुड़माली भाषा के पठन पाठन में बढ़ेंगे'' यही व्रत लिया। कुड़माली भाषा विभाग में प्रथम व्याख्याता डॉ एच. एन. सिंह नियुक्त हुए। इनके साक्षात्कार में श्री अंगद महतो थे। कुड़माली के प्रथम बैच में जिन छात्र–छात्राओं ने नामांकन लिया वे निम्न हैं।

1. मनोरमा कुमारी शहीद निर्मल महतो कॉलोनी, न्यू सामलौंग, राँची
2. प्रमेश्वरी प्रसाद महतो – आड़ाल नवाडीह, सिल्ली, राँची
3. वृन्दावन महतो – बादला, तमाड़, राँची
4. राम नारायण महतो – कुड़ची, गोविन्दपुर, धनबाद
5. विष्णु चरण महतो – कोंचो, सिल्ली
6. नरसिंह महतो – डोमनडीह, सिल्ली
7. वासुदेव महतो – गुरीडीह, झालदा
8. विश्वम्बर महतो – सिटकाडीह, सिल्ली
9. नरोत्तम महतो – लोवादाग, सिल्ली
10. हेमन्त कुमार सिंह – पटका, सिल्ली
11. वासुदेव महतो – लगाम, सिल्ली
12. बलराम महतो –
13. विसेश्वर महतो
14. कृष्ण चन्द्र महतो– मदकमा, बुंडू, राँची
15. सुचाँद महतो –
16. नीलपदो महतो – जोजोडीह, तमाड़

इसके बाद विभिन्न महाविद्यालयों में इंटरमीडिएट व स्नातक स्तर की पढ़ाई शुरू हुई। उसके बाद स्कूल स्तर में कुड़माली पठन पाठन का अभियान

चला। 1981–83 में गोस्सनर कॉलेज, राँची में इंटर स्तर की पढ़ाई में

1. कल्पना कुमारी– रतिआडीह, नवाडीह, झाइलदा
2. शान्ता कुमारी
3. रमणी कुमारी– जामटोला, बुंडु

**1982–1984 बैच में जिन छात्रों ने नामांकन लिया वे हैं:**

1. मोतीलाल महतो – तमाड़
2. हीरालाल महतो– सिल्ली
3. दुतीनाथ महतो– हजारीबाग
4. त्रिलोचन महतो– डोमनडीह, राँची
5. असिमानंद महतो– करमाडीह, झालदा

गोस्सनर कॉलेज में डॉ एस. बी. महतो 'काड़वार' ने व्याख्याता का अतिरिक्त भार संभाला।

उल्लेखनीय है कि हाई स्कूल स्तर पर झारखण्ड अधिविध परिषद के राँची की विज्ञप्ति संख्या 34/2005 के अनुसार प्रथम स्तर में जिन हाई स्कुलों में कुड़माली की पढ़ाई शुरू हुए उनमें

1. मधुसूदन उच्च विद्यालय, आसनतलिया, चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
2. मारवाड़ी +2 उच्च विद्यालय, चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
3. बंगाली उच्च विद्यालय चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
4. महात्मा गांधी हाई स्कुल, चक्रधरपुर, प. सिंहभूम
5. रोलाडीह उच्च विद्यालय, रोलाडीह, टोकलो, प. सिंहभूम
6. प्रोजेक्ट उच्च विद्यालय, बाड़ा बाम्बो, सराईकेला, खरसावां
7. प्रोजेक्ट उच्च विद्यालय, झेलरूआं, गोइलकेरा, प. सिंहभूम
8. रामटहल चौधरी+2 उच्च विद्यालय, उधेइन, मनोहरपुर, प. सिंहभूम
9. कराईकेला उच्च विद्यालय, कराईकेला, बांधगांव, प. सिंहभूम हैं।

इसी तरह राँची, धनबाद, पू. सिंहभूम आदि जिलों के हाई स्कूलों में

कुड़माली की पढ़ाई हो रही है।

शैक्षणिक क्षेत्र में भाषा के संगठित होने के साथ साथ सामाजिक क्षेत्र में भी हलचल पैदा हुई। इसी के नतीजा स्वरूप में ग्राम करमाडीह, थाना झेइलदा, प. बंगाल में दिनांक 28–29 अप्रैल 1984 को "मुलकी" कुड़मालि भाखि चारिक गाहदी जुड़ुआही का आयोजन हुआ। इस जुड़आही के आयोजन में कुड़माली पुरोधा स्व. केशव चन्द्र तिड़ुआर जी का अहम योगदान था। इस जुड़आही के मुख्य अतिथि स्व. रामदयाल मुंडा थे। ज्ञात हो कि कुड़माली के विकास के लिए 1982 में राँची के सिरोमटोली में, डॉ शशिभूषण महतो काड़वार के निवास स्थान पर "मुलकी कुड़माली भाखि बाइसि" का गठन हुआ था।

बाइसि के कार्यकारिणी सदस्य निम्नलिखित थे।

1. अध्यक्ष (तालेबर) – लखीकांत मुतरूआर, धनबाद
2. उपाध्यक्ष (जग तालेबर) – केशव चन्द्र तिड़ुआर, करमाडीह, झालदा, पुरूलिया
3. महासचिव (मुल देउआन) – डॉ शशि भूषण महतो, काड़वार, गोस्सनर कॉलेज, राँची

   सह सचिव – अनंत केसरिआर, तुलिन, पुरूलिया

5. कोषाध्यक्ष – रतनलाल सिंह, एडवोकेट, टुटकी, राँची
6. सह कोषाध्यक्ष – आनंद खुंटदार, जारगो, झालदा

**सदस्य**

1. राधागोविन्द सिंह– एडवोकेट, राँची कोर्ट
2. पदमलोचन महतो– चितोरोड़ा, मयूरभंज
3. विभूतिभूषण महतो– धुमसाई, मेदनिपुर
4. सुनील कुमार महतो– कालुहार, पुरूलिया
5. काशीनाथ महतो– केंदुआडीह, धनबाद
6. श्याम सुंदर महतो – माड़दु, सिल्ली, राँची
7. गजाधर महतो– भँडरो, चास, धनबाद

8. गणेश राम सिंह– पाटका, सिल्ली, राँची

9. कुंवारी करूनामय– माड्डु, झालदा, पुरूलिया

**संरक्षकः**

1. स्व. डॉ नंद किशोर सिंह – प्राचार्य, बी.एन. जालान कॉलेज, सिसई

2. अंगद महतो – कोंचो, सिल्ली, राँची

3. स्व. किशोरी मोहन महतो– बामनडीह, सिल्ली, राँचीं

भाषा विभाग के गठन के साथ साथ इस संगठन को अपना गतिविधि मेें त्वरण लाने में बल मिला। इस कड़ी में 1984 का गाहदी जड्डआही भाषा के प्रगति में मील का पत्थर साबित हुआ।

इस जड्डआही के बाद कुड़माली जाति व भाषाई सभा सम्मेलनों का सिलसिला जारी रहा। इस क्रम में जातीय चेतना (कुड़मी जाति को अनुसूचित जनजाति में शामिल कराने के लिए) को प्रसार करने के लिए दिनांक 11 नवम्बर 1984 को "आदिवासी कुड़मी समाजन, झारखण्ड, बंगाल, उड़िसा का गठन हुआ। इसके गठन में कुड़माली पुरोधन स्व. वसंत कुमार मेहता का विशिष्ठ योगदान रहा। इस समाज की कार्यकारिणी समिति निम्न थी।

1. अध्यक्ष (तालेबर) – स्व. रामपदो सिंह बानवार, जारगो, झालदा, पुरूलिया
2. उपाध्यक्ष (जग तालेबर) – स्व. वसंत कुमार मेहता, दिंदली, तमाड़ा
3. उपाध्यक्ष (जग तालेबर) – लखीकांत मुतरूआर, भंडरो, तमाड़, राँची
4. महासचिव (मुल देउआन) – स्व. केशव चन्द्र तिड्डआर, करमाडीह, झालदा, पुरूलिया
5. सह सचिव (देउआन) – डॉ शशिभूषण महतो, काड़वार, गोस्सनर कॉलेज, राँची
6. सह सचिव – रामेश्वर महतो काड़वार, माठारी, झालदा
7. कोषाध्यक्ष – भीम चरण महतो

**सदस्य (मातबर)**

1. उदासीन कुभ प्रसाद महाराज – बांकुड़ा
2. सतअदल महतो– पुरूलिया

3. अंगद सिंह– लोवापीढ़ी, सिल्ली
4. डॉ विभूति भूषण महतो– धुमसाई, मेदिनापुर
5. अशोक कुमार सिंह महतो– रानीबांध, बांकुड़ा
6. ललीत मोहन महतो– पुरूलिया, झाड़ग्राम
7. स्व. पूर्णचन्द्र महतो– पलासबांधा, मयूरभंज
8. हीरालाल महतो– साहेबगंज
9. आनंद खुंटदार– जारगो, झालदा
10. पंचानन महतो काड़वार– धरमडांगा, मालदा
11. श्यामसुंदर महतो– आसनतलिया, चक्रधरपुर
12. पद्अलोचन महतो– चितअरोड़ा, बारीपदा, मयूरभंज
13. डॉ विद्याभूषण महतो– जमशेदपुर
14. श्रीपदो महतो बंसरिआर– रानीडीह, झाइलदा
15. हीरालाल संखवार, धनबाद
16. प्रो प्रमेश्वरी प्रसाद महतो, रांची
17. प्रो वृन्दावन महतो, श्री प्रभात कुमार महतो

## मातृभाषा और विश्व मातृभाषा दिवस

मातृभाषा किसी भी इंसान के लिए संवाद का जरिया भर नहीं बल्कि वह माध्यम भी है जिसके साथ उसकी समृद्ध विरासत जुड़ी होती है इसलिए इसका संरक्षण भी जरूरी है। मातृभाषाओं में जो भी कुछ सुंदर और श्रेष्ठ रचा जा रहा है उसे सहेजकर रखा जाना चाहिए। आज मातृभाषा संबंधी दुखद पहलु यह है कि दुनिया में कई मातृभाषाएं विलुप्त के कगार पर हैं। जीवनस्तर रोजगारउन्मुखी हो गया है अतः जो भाषाएं रोजगारपरक नहीं हैं उनकी पूछ कम होती जा रही है। दूसरी ओर दबंगता और संस्कृतिकरण की चपेट में बहुत सी मातृभाषाएं निवाला बन रही हैं। अंग्रेजी और हिन्दी के वर्चस्व के कारण कई मातृभाषाएं की क्षति हुई है।

पूरी दुनिया में अंग्रेजी के वर्चस्व और संरक्षण के अभाव में तथा हमारे देशों में हिन्दी के वर्चस्व के कारण और संरक्षण के अभाव में, सैकड़ों भाषाएं समाप्ति के कगार पर हैं। इन देशों की सूची में भारत में स्थिति सबसे अधि ाक चिन्ताजनक है। 196 भाषाएं लुप्त होने के कगार पर हैं। संयुक्त राष्ट्र में

आंकड़ों के मुताबिक भारत के बाद अमेरिका में स्थिति काफी चिंताजनक है जहां ऐसी 193 भाषाएं दम तोड़ती नजर आ रही हैं। उसके द्वारा जारी की गई एक रिपोर्ट के अनुसार, आधुनिकीकरण के दौर में भाषाएं प्रजातियों की तरह विलुप्त होती जा रही हैं। एक अनुमान के मुताबिक, दुनिया भर में 6900 भाषाएं बोली जाती हैं। लेकिन इनमें से 3500 भाषाओं को चिंताजनक वाली भाषाओं की सूची में रखा गया है। रिपोर्ट कहती है कि 2500 भाषाएं ऐसी हैं जो पूरी तरह समाप्त हो जायेंगी।

हमारे भारत में लघुसंख्यक कबीलाओं की भाषा (जैसे अंडमान निकोबार की जरखा जनजाति) की संरक्षण के अभाव में खतरे में तो रहेगी सहज अनुमेय है लेकिन आश्चर्य की बात है कि ब्रजभाषा, अवधी जैसे भाषाएं जो कभी समृद्ध थीं आज खतरे में हैं। एक समय लगभग सारे देश में ब्रजभाषा का प्रभाव था। ब्रजभाषा में कविता लिखना बड़े सम्मान की बात थी। 19वीं सदी के आने तक यह भाषा साहित्य में पूरी तरह छाई हुई थी, लेकिन आज भाषा विलुप्ति के कगार पर है। इसी तरह अवधी का उदाहरण भी हमारे सामने हैं। हिन्दी के दो महत्वपूर्ण ग्रंथों 'पदभावत' और 'रामचरित मानस' की रचना अवधी में हुई। आज अवधी की स्थिति क्या है। साहित्यिक दृष्टि से इतनी समृद्ध भाषाओं की आज ऐसी स्थिति हो गयी है कि ये भाषाएं न शिक्षा का माध्यम हैं, न इनमें पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है न किताबें छपती हैं। ये विलुप्ति के कगार पर हैं। यह बात भारत की कई भाषाओं के साथ लागू होती है।

मातृभाषाओं के संरक्षण संवर्द्धन में युनेस्कों ने रूचि दिखाई और विश्वव्यापी पहल की। युनेस्को महासभा ने नवंबर 1999 में दुनिया की विलुप्त होती भाषाओं के संरक्षण और संवर्द्धन की ओर दुनिया का ध्यान आकर्षित करने के लिए साल 2000 में प्रतिवर्ष 21 फरवरी को ''अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस' मनाने का निश्चय किया।

21 फरवरी को विश्व मातृभाषा दिवस मनाने की कहानी सन 1952 से बांग्लादेश पूर्वी पाकिस्तान से शुरू होती है। भारत के विखंडन के बाद पूर्वी पाकिस्तान अस्तित्व में आया। वहां उर्दू को राष्ट्रभाषा बनाया गया लेकिन यह बंग्लाभाषी आम जनता को नापसंद था क्योंकि उसकी मातृभाषा बंगला थी। अतः बंगला बनाम उर्दू का संघर्ष छिड़ गया। तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान की

जनता (चाहे मुस्लिम हिन्दु या अन्य सम्प्रदाय) किसी कीमत पर मातृभाषा को छोड़ना नहीं चाहती थी। उर्दू थोपने का मतलब उनकी मातृभाषा का अपमान करना था। यही वही मनहूस दिन था जब मातृभाषा बंगला के सपोर्ट व उर्दू के विरोध में ढाका विश्वविद्यालय परिसर के ठीक बाहर बड़ी संख्या में छात्र प्रदर्शन करने के लिए एकत्र हुए थे। इसी दौरान न जाने क्यों हथियारों से लैस सुरक्षाकर्मियों ने उन निहत्थे छात्रों पर गोलियां बरसानी चालू कर दीं जिसमें चार छात्र सलाम, रफीक, जब्बार और बरकत गोलियों के शिकार हुए। इनका बलिदान व्यर्थ नहीं गया। इनकी मातृभाषा प्रेम को देखते हुए युनेस्को ने 21 फरवरी को विश्व मातृभाषा दिवस मनाने का निश्चय किया।

हम झारखण्डीयों का सौभाग्य है कि काफी संघर्ष के बाद हमारी मातृभाषाएं अस्तित्व में आई हैं। विश्व मातृभाषा दिवस से संदर्भ में हमारा फर्ज बनता है हम भी 21 फरवरी को मातृभाषा दिवस मनाने की परंपरा शुरू करें। यह परंपरा आज नहीं तो कल हमारे भाषा प्रेमीयों को मातृभाषा के साथ सक्रियता के साथ जोड़ेगी। बेहतर होगा इसी दिवस को हम कविसम्मेलनों, लेखन सम्मेलनों, साहित्य समालोचना, संगोष्ठियों आदिका आयोजन करें साथ में इसी दिन अपनी भाषाओं की पुस्तकों का विमोचन भी करें।

मातृभाषा की महत्ता के मद्देनजर हम कश्मीर के कश्मीरी की बात थोड़ा कहना चाहेंगे। कश्मीर में बोलचाल, बाजार, व लेन–देन की भाषा कश्मीरी है लेकिन पूर्वी पाकिस्तान के तर्ज पर वहां उर्दू सरकारी भाषा है। हमारा कहना है कि कश्मीरी यदि आमजनों की मातृभाषा है तो उसे पनपने का मौका क्यों नहीं दिया जायेगा? राज्य की सरकारी भाषा में कार्य निष्पादन आदि कश्मीरी में सुगम हो तो मौका दिया जाना चाहिए। उर्दू का पठन पाठन बन्द हो यह कहना अभिप्राय नहीं है यह तो धार्मिक ग्रंथ पाठ के लिए किया ही जा सकता है। पूरे विश्व में मातृभाषा को लेकर हलचल मची है अतः किसी की मातृभाषा को अवसर नहीं देना उसके प्रति घोर अन्याय है।

प्रसंगक्रम में उल्लेख करना है कि कश्मीरी, संविधान की आठवीं सूची में है लेकिन इसकी विधिक स्थिति बड़ी विलक्षण है। भारत के संविधान में कश्मीरी भारत की एक राष्ट्रभाषा है। जबकि राज्य के संविधान राज्य में उसे राज्य की राजभाषा की नहीं, जो उर्दू है बल्कि डोगरी, बल्ती, दरद, पहाड़ी, पंजाबी और लद्दाखी के समकक्ष एक प्रादेशिक भाषा की भूमिका प्रदान की

गई है। (जम्मू कश्मीर का संविधान– अंग्रेजी में) कुछ कश्मीरी साहित्यकारों ने कश्मीरी को राज्य की एक राजभाषा के रूप में मान्यता दिये जाने की मांग की थी। मगर कश्मीर की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया है। (स्वतंत्रोत्योतर भारत जातीय और भाषाई समस्या प्रगति प्रकाशन पेज 117)

भारत के उत्तरांश में प्राचीन कश जाति का निवास था। इन्हीं के नाम पर देश/प्रदेश का नाम कशमेरू, कश्मीर हुआ।, पश्तो तजाकी उजबेकि एक ही परिवार की भाषाएं हैं। रूस की भाषाएं (तजाकी उजबेकि) वैदिक संजात भाषाएं हैं इसलिए ऋगवैदिक भाषाओं आदि के साथ रूस की भाषाओं का साम्य है।

## भाषा व विषय में कुड़माली

1. डॉ नन्द किशोर सिंह – कुरमाली बोलीः एक भाषातात्विक अध्ययन, विश्वभारती, शान्ति निकेतन, 1962 (प्रथम पी.एच.डी. धारक)
2. डॉ संतोष कुमारी जैन– कुरमाली लोकगीतः एक अध्ययन
3. डॉ श्रीमती मनोरमा कुमारी– कुड़माली लोकोक्तियों का : सांस्कृतिक अध्ययन, शोध निर्देशकः डॉ दिनेश्वर प्रसाद, 23–3–89
4. डॉ. चन्द्र मोहन महतोः कुड़माली भाषा का व्याकरण
   शोध निदेशकः डॉ रामदयाल मुंडा 1990
5. डॉ. प्रमेश्वरी प्रसाद महतोः कुड़माली के बांदना गीतः एक सांस्कृतिक अध्ययन। शोध निर्देशकः डॉ दिनेश्वर प्रसाद, 1992
6. डॉ. विभूति भूषण महतोः पश्चिमी सीमांत बंगलार कुड़माली, लोक साहित्य शोध निर्देशक रामदयाल मुंडा 1995
7. डॉ राम नारायण महतो – कुड़माली झूमर : वस्तु और शिल्प
   शोध निर्देशक : डॉ निदेश्वर प्रसाद, 1995
8. डॉ विजय मुखर्जी : कुरमाली कृष्ण काव्य, परम्परा एवं वैशिष्ठय, शोध ा निर्देशक – डॉ दिनेश्वर प्रसाद, 1995
9. डॉ वृन्दावन महतो : छोटानागपुर पठारी क्षेत्र के कुड़मी समुदाय की

सांस्कृतिक व्यवस्था की परम्परागत धार्मिक, दार्शनिक पहलू। शोध निर्देशक : डॉ रामदयाल मुण्डा

10. डॉ राजाराम महतो : कुरमाली विवाह गीतों का सांस्कृतिक अध्ययन

11. डॉ गीता सिंह : कुरमाली लोक साहित्यः विश्लेषणात्मक अध्ययन। निर्देशक : प्रो. रामवृक्ष सिंह, 1998

12. डॉ मानसिंह महतो – हिन्दी और कुरमाली के रासलीला साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन। शोध निर्देशक– डॉ राम प्रसाद

13. डॉ एच. एन. सिंह :

ज्ञात हो कि ये पी. एच. डी धारकों ने कठिन परिस्थितियों में अपनी शोध को पूरा किया तथा कुछ ने अपने विषय को पुस्तकाकार में छपवाया भी। ये सारी पी.एच.डी. धारक धन्यवाद के पात्र हैं।

विशेष तौर पर इन शोधार्थियों के निर्देशकगण धन्यवाद के पात्र हैं, लेकिन डॉ रामदयाल मुंडा, डॉ निदेश्वर प्रसाद विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

# अध्याय - 3 : राजभाषा

राय भाषा से तात्पर्य राष्ट्र या प्रदेश की काम काज की भाषा या यों कहें शासन में, कानून बनाने, आदेश निकालने, अध्यादेश जारी करने, प्रतिवेदन ज्ञापन, सूचना प्रसारित करने, लेखा जोखा तैयार करने, व्यावसायिक काम करने आदि के लिए जो भाषा अपनाई जाती है वस्तुतः उसी का नाम है– राज्य भाषा।

भारतीय संविधान की धारा 343 के अनुसार संध सरकार को राजभाषा देवनागरी लिपि में हिन्दी होगी एवं संध के काम काज में भारतीय अंको के अन्तर्राष्ट्रीय रुपों का प्रयोग होगा। उल्लेखनीय है कि भारतीय संविध ाान ने जिस हिन्दी को मान्यता दी है वह हिन्दी नहीं बल्कि राजभाषा हिन्दी है।

कौटिल्य को भारतीय राजनीति का पितामह माना गया है। उनका ग्रंथ ''अर्थशास्त्र'' भारत के शासन विधान का आदि ग्रंथ है। राजपत्रों वह उनकी भाषा के संबंध में कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में लिखा है कि शासन के भाषा में अर्थक्रम, संवंध परिपूर्णता, माधुर्य, औदार्य, स्पष्टता इन छः गुणों का होना नितांत आवश्यक है।

लिपि एक होने पर भाषाएं एक होंगी जरुरी नहीं है। पश्चिमी देशों की अधिकांश भाषाएॅ रोमन लिपि में लिखी जाती है किन्तु वह अंग्रेजी भाषा नहीं कहलाती हैं क्योंकि लिपि एक होने पर भी उसका उच्चारण, अर्थ आदि अलग अलग होते हैं। भारतीय भाषाएँ व देवनागरी लिपि के साथ भी वही बात है।

हमारे देश में राजभाषा की एक सुदीर्ध परंपरा मिलती है। प्राचीन समय में काफी समय तक लगभग सम्पूर्ण भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा संस्कृत थी इसके अलावा विभिन्न प्रदेशों, राज्यों में उनकी अपनी राजभाषा प्रचलित थी। मुगलकाल में फारसी रजभाषा के रुप में प्रतिष्ठित थी। राजभाषा की आवश्यकता पर बहस अनअपेक्षित है लेकिन आधार पर बहस प्रयोजनीय है। राजभाषा की परंपरा में स्वातंत्रोतर काल में 14 सितम्बर 1949 को भारत सरकार ने राजभाषा के रुप में उस हिन्दी को मान्यता दी जिससे कार्यालयीन

कार्य का संपादन सहज सरल रुप से हो एवं जिसकी लिपि देवनागरी होते हुए भी इसका अंक भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रुप होंगे।

भारतीय संविधान की धारा 347 में राज्य में प्रयुक्त हो सकनेवाली भाषा के संवंध में विशेष प्रावधान है। जैसे

अनुच्छेद 343 special provision relating to language spoken by a section of population of state- on a demand being made in that behalf the president may if he is satisfied that a substantial proportion of the population of a state desire the use of any language spoken by them to the recognized throughout that state or any part thereof for such purpose as he may specify.

अनुच्छेद 343 में प्रदेश की कार्यालयीन भाषा के संवंध में प्रावधान किया गया है जिसका उद्धरण निम्नाकित है– Subject to the provision of articles 346 and 347 the legislature of a state may be by law adopt any one or more of the language in use in the state or Hindi as the language or languages to be used for all or any of the official purposes of that state.

राष्ट्र की तरह प्रदेश में भी राजभाषा का प्रावधान है। हमारे झारखंड में हिन्दी को मुख्य राजभाषा का दर्जा प्राप्त है लेकिन द्वितीय राजभाषा के मसले पर विवाद खड़ा हो गया। प्रदेश की संस्कृतिक विरासत के मद्देनजर यहाँ स्थानीय जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं को ही द्वितीय राजभाषा का दर्जा मिलना चाहिए लेकिन आजकल हर जगह तुष्टिकरण की नीति प्रचलित है।

शायद राजनेताओं के लिए उस नीति का अनुपालन जरुरी ही नहीं बल्कि मजबूरी भी है अतः द्वितीय राजभाषा नीति यहां पूरी तरह राजनीति की शिकार हो गई।

प्रतिष्ठित गैर झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने से यहाँ की स्थानीय भाषाओं की हकमारी तो होगी ही उनका विकास मार्ग भी अवरुद्ध होगा। हम इस विचार के हिमायती हैं कि सुदूर प्रसारी भाषायी भविष्यत् के मद्देनजर सरकार इस मामले में तुष्टिकरण की नीति को त्यागे। स्मरणीय है कि झारखंड राज्य के निर्माण में अन्य कारणों के साथ यहाँ की

भाषाई अस्मिता भी एक कारण था।

द्वितीय राजभाषा के कार्यान्वयन से होने वाले लाभ हानि इसे सत्यापित करेंगे कि स्थानीय भाषाओं को क्यों द्वितीय राजभाषा का दर्जा मिले। यह आवश्यक नहीं कि द्वितीय राजभाषा एक ही हो ये क्षेत्रीयता के आध ार पर (जहाँ जिस भाषा का वर्चस्व है) एकाधिक हो सकती हैं, हाँ क्षेत्र निध ारिण में थोड़ी मशक्कत करनी पड़ सकती है।

**भाषा और राज्य पुनर्गठन आयोग –**

सन 1953 में कांग्रेस सरकार द्वारा राज्य पुनर्गठन आयोग की स्थापना हुई थी क्योंकि भाषावार राज्य संवंधी जन आक्रोश दिखाई पड़ा था तथा भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी भाषावार राज्य गठन की हिमायती थी। भाषाई चेतना प्रबल सेंटिमेंट को जन्म देती है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण बंगाल एकीकरण 1912 में देखा गया। 1905 में अग्रेजों ने बंगाल प्रेसीडेंसी को दो प्रान्तों में विभक्त किया पहला बंगाल का पश्चिमी भाग बिहार और उड़ीसा। दूसरा पूर्वी भाग बंगाल तथा आसाम। भाषाई तौर पर बंगाल भाषियों को पूर्व बंगाल व पश्चिम बंगाल में बँटना मंजूर नहीं था। अतः प्रबल आन्दोलन खड़ा हुआ फलस्वरुप 1912 में बंगालियों के जातीय आन्दोलन के दबाव के आगे झुककर औपनिवेशिक अधिकारियों को बंगाल को पुनरेकीकरण करने को मजबूर होना पड़ा। इसी कड़ी में 1935 में सिंध को बंवई प्रेसीडेंसी से अलग करके अलग प्रान्त बना दिया गया और बिहार को बिहार और उडीसा दो प्रान्तों में पृथक कर दिया गया।

राज्य पुनर्गठन ने स्पष्ट किया कि कांग्रेस की नीति कामोवेश भाषायी समर्थक थी। रिपोर्ट में कहा गया है–

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भाषायी सिद्धांत को अप्रत्यक्ष समर्थन 1905 में ही दिया था जब उसने बंग भंग की खात्मे की मांग का समर्थन किया था। जिसके फलस्वरुप बंगला भाषी जनता को दो इकाइयों में बाँट दिया गया था।

जब साइमन कमीशन भारत आया कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें एलान किया गया कि प्रांतों के भाषायी आधार पर बॅटवारे का

समय आ गया है 1928 में नेहरु समिति की रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया।

यदि एक प्रांत को अपने को शिक्षित करना है और अपना रोजमर्रा का काम स्वयं अपनी भाषा के माध्यम से करना है तो उसे लाजिमी तौर पर एक भाषायी इलाका होना चाहिये। यदि बहुभाषी इलाका हुआ तो लगातार मुश्किलें उठेंगी और वहॉ शिक्षा तथा काम का माध्यम दो या दो से ज्यादा तक भाषायें होगी। इसलिए यह अत्यनत वांछनीय हो जाता है कि प्रांतों का पुनर्गठन भाषायी आधार पर किया जाय। भाषा नियमतः एक विशेष प्रकार की संस्कृति के और परंपरा तथा साहित्य के अनुरुप हुआ करती है। एक भाषायी इलाके में ये तमाम कारक प्रांत की अपना प्रगति में मदद करेंगे। (राज्य पुनर्गठन की रिपोर्ट, पेज–13)

आजादी के बाद हमारे प्रदेश झारखंड के बारे में कांग्रेस की यही नीति लागू रहती तो झारखंड प्रदेश बहुत पहले ही बन जाता क्योंकि सांस्कृतिक तौर पर (जिसमें भाषाएँ प्रमुख घटक हैं) झारखंड बिहार से पूर्णतः पृथक था। उल्लेखनीय है कि आजादी के बाद भाषा प्रेमियों की बहुत बड़ी आशा थी कि भाषाओं को अहमियत देते हुए भाषावार राज्यों का गठन होगा लेकिन प्रत्यक्षतः वैसा नहीं हो पाया अतः आंध्र, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात तथा हमारे झारखंड में मारांग गोमके जयपाल सिंह के नेतृत्व में आन्दोलन भड़क उठा आगे समाधान निकला लेकिन हमारे झारखंड को दरकिनार किया गया। बाद में हमें संगठित होकर अलग झारखंड की लडाई लड़नी पड़ी लेकिन अभी मंजिल तक पहुँचना वाकी है।

उल्लेखनीय है कि कांग्रेस सरकार की भाषायी आधार नीति सिद्धान्त में जीवंतता रही लेकिन यथार्थ के धरातल पर स्पष्ट आकार नहीं ले सकी। स्थानीय भाषाओं की महता तथा द्वितीय राजभाषा का दर्जा के मसले पर राजनीतिक दृष्टिकोण अपना कर यहॉ की जमीनी भाषाओं के साथ अन्य भाषाओं की भी वकालत की गई।

कांग्रेस की भाषायी नीति पर चोट करते हुए ''भाषाधार राज्यों के लिए संधर्ष में कम्युनिष्टों की भूमिका'' पुस्तिका (लेखक अवतार सिंह मल्होत्रा) में कहा गया है।

आजादी के बाद कांग्रेस के नेतृत्व से आशा की जाती थी कि वह

भाषाधार सिंद्धान्त पर भारत गणराज्य के राज्यीय ढांचे का पुनर्गठन करेगा और जो राज्य बनेंगे उन्हें पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त होगी पर अदूरदर्शी और प्रतिगामी इलाकेदार समूहों के प्रभाव के कारएा उसने सभी राज्यों को भाषाधार सिद्धांत के आधार पर पुनर्गठित करने तथा सान्निध्य के आधार पर गाँवों को इकाई मानते हुए उनकी सीमाओं को पुनर्निर्धारित करने से इंकार कर दिया। आखिरकार जब आंध्र, कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात की आम जनता के संध ार्षों का दबाव पड़ा तो समस्या का समाधान हुआ जो कि रूकते कदमों से यह काम किया गया और अब भी कुछ समस्याएँ रह गयी हैं जिन्हें हल करना बाकी है।

प्रसंग क्रम में उल्लेखणीय है कि संसद द्वारा 1963 और 1967 में किये गये संशोधनों के साथ भारत का संविधान देश की राजभाषाओं का और राज्यों की राजभाषाएँ स्वीकार करने के नियमों का निर्धारण करते है और उसमें किसी राज्य की आबादी के कुछ हिस्से द्वारा बोली जाने वाली भाषा के बारे में विशेष प्रावधान है। (स्वतत्र भारत जातीय तथा भाषायी समस्या पेज 116 प्रगति प्रकाशन मास्को)

अब हम लौट चलते हैं द्वितीय राजभाषा की ओर। ओफिसियल लैंगुएज एक्ट में निहित प्रावधानों के तहत द्वितीय राजभाषा का इस्तेमाल सरकारी काम काज में हो सकता है यानी कोई व्यक्ति चाहे तो मुंडारी हो, कुड़माली, कुड़ख, संथाली सहित अन्य द्वितीय राजभाषाओं में सरकार से पत्राचार कर सकते हैं सरकार को भी उसी भाषा में संबंधित व्यक्ति को जबाब देना है। सरकारी अधिसूचनाएँ भी द्वितीय राज भाषाओं में ही जारी की जायेंगी। सरकार द्वारा बनाये जाने वाले नियम कानून भी द्वितीय राजभाषाओं में ही प्रकाशित किये जायेंगे। विधानसभा का कोई भी सदस्य यदि किसी द्वितीय राजभाषा में अपनी बात कहना चाहे तो वह सदन में कह सकता है। विधानसभा की कार्यवाही से संबंधित पुस्तकें भी द्वितीय राजभाषा में प्रकाशित की जायेंगी। राज्य के स्कूलों में द्वितीय राजभाषाओं की पढ़ाई होंगी। सरकारी नौकरी के लिए होनेवाली लिखित परीक्षाओं में कोई परीक्षार्थी द्वितीय राजभाषा में परीक्षा लिख सकता है।

प्रसंग क्रम में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 345 व 348 का हम उद्धरण प्रस्तुत करना चाहेंगे।

Article 345 - Official language or languages of a state subject to the provision of articles 346 and 347 the legislature of a state may by law adopt any one or more of the languages in use in the state or Hindi as the language or languages to be use for all or any of the official purposes of that state.

Article 348- Language to be used in the Supreme Court and in the High Court and for Acts, Bills etc.- Notwithstanding in the for going provision of this part until parliament by law otherwise provides-

a) All proceeding in the Supreme Court and in every High Court

b) The authoritative texts-

(i) Of all Bills to the introduced or amendments thereto to be moved in either house of parliament or in the house either or either house of the legislature of a state.

(ii) Of all acts passed by parliament or the legislature of a state and of all ordinances promulgated by the president or the governor of a state and

(iii) Of all orders regulations and by laws issued under this constitutions or under any made by parliament or the legislature of a state shall be in the English language.

c) Notwith- standing any thing in sub clause a of clause (1) the governor of a state may with the previous consent of the president authorize the use of the Hindi language or any other language used for any official purposes of the state in proceeding in the High Court having its principal seat in that state.

संवैधानिक अधिकारों के मद्देनजर द्वितीय राजभाषा बनने से जो अपेक्षित लाभ होंगे वे निम्न है–

1. सरकारी दफतरों (राज्य स्तरीय, अनुमंडल स्तरीय, ब्लॉक स्तरीय आदि) में राजभाषा का इस्तेमाल किया जा सकत है।

2. सरकारी अधिसूचना द्वितीय राजभाषा में जारी की जायेंगी।

3. सरकार द्वारा बनाये जाने वाले नियम कानून का अनुवाद संबंधित

द्वितीय राजभाषा  में कराये जायेंगे।

4. सरकारी नियुक्तिओं के लिए ली जाने वाली परीक्षा द्वितीय राजभाषा में लिखी जा सकती है।
5. विधान सभा की कार्यवाही से संवंधित पुस्तकें द्वितीय राजभाषा में प्रकाशित की जायेंगी।
6. विधान सभा में कोई सदस्य द्वितीय राजभाषा में अपनी बात रख सकता है।
7. स्कूल कॉलेजों में द्वितीय राजभाषा की पढ़ाई होगी।

यह स्पष्ट है कि द्वितीय राजभाषा के दर्जा से संवंधित भाषा तो विकसित मर्यादित होगी रोजगार के अनेकानेक अवसर भी बढ जायेंगे। गैर झारखंडी मूल के लोग लाभ के मद्देनजर ही अपनी मातृ भाषाओं को झारखंड में द्वितीय राजभाषा का दर्जा दिलाना चाहते हैं। इन्हें न झारखंड के विकास से मतलब है न यहाँ की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने में। मजे की बात है कि झारखंड आन्दोलन से इनका सरोकार तो था नहीं वल्कि जब झारखंड बनने का एलान हुआ तो इनमें कुछ आहत भी हुए और कुछ अंचलों में विरोध व रोष प्रकट किया गया।

द्वितीय राजभाषा की दर्जा के बाद संबंधित भाषा का अगला पडाव अस्टम अनुसूची होता है। भाषाएँ यदि आठवीं अनुसूची में दर्ज होती है तो भाषा की प्रतिष्ठा के साथ साथ सबंधित भाषा भाषियों की जीवन शैली में बदलाव की संभावना बढ जाती है। इस विषय पर बोरिस क्लूयेब के विचार द्रस्टव्य हैं–

"किसी भाषा का संविधान की आठवीं सूची में शामिल किया जाना मात्र प्रतिष्ठा की ही बात नहीं है इससे भाषा के विकास की संभाब्यता काफी बढ जाती है और उसके कार्य क्षेत्र का प्रसार हो जाता है। संघ सेवाओं के लिए प्रवेश परीक्षाओं में केवल आठवीं अनुसूची में उल्लिखित भाषाओं का ही प्रयोग किया जा सकता है। इससे इन्हें बोलने वालों को अच्छे वेतनवाली नौकरियां  पाने में सहायता मिलती है। भारत सरकार ने आठवीं अनुसूची में उल्लिखित भाषाओं के विकास को समन्वित करने के लिए एक विशेष समिति की स्थापना की है। वार्षिक बजटों और पंचवर्षीय योजनाओं में इन भाषाओं के विकास के लिए खासी बड़ी रकमें विनियुक्त की जाती हैं। प्रेस, प्रकाशन,

व्यवसाय, सिनेमा उद्योग और रेडियो प्रसारण की समस्याओं पर विचार करते समय सबसे ज्यादा ध्यान इन भाषाओं में प्रकाशन, फिल्मों और रेडियों प्रसारणों की ओर दिया जाता है। आठवीं अनुसूची में उल्लेखित भाषाओं में सर्वोत्तम बालोपयोगी पुस्तकों, साक्षरता अभियान के लिए शिक्षा साधनों और पाठ्य पुस्तकों तथा साहित्यिक कृतियों पर नियमित रूप से पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। भाषाओं के इस सूची का राजनीतिक महत्व भी है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 344 के अनुसार राष्ट्रपति द्वारा आठवीं अनुसूची में उल्लेखित भाषाओं की समस्याओं पर विचार करने के लिये विशेष आयोगों की नियुक्ति की जाती है। दूसरे शब्दों में इन भाषाओं को अन्य भाषाओं की तुलना में विशेषाधिकार प्राप्त है।''

अपनी मातृभाषाओं के विशेषाधिकार के लिए झारखण्डियों को झारखण्ड में लड़ना तर्कयुक्त तो है– लेकिन गैरों का जिनकी मातृभाषा संविधान की आठवीं सूची में दर्ज है तथा जो किसी प्रदेश में गरिमामय स्थान प्राप्त कर चुकी है, लड़ना अतार्किक बलातू धन हरणकारी दबंगता की तरह है।

गौरतलब है कि अपनी मातृभाषा व संस्कृति के विशेषाधिकार के तहत भारतीय संविधान में संरक्षण का प्रावधान है। यह कल्चरल और एजुकेशनल राइट शीर्षक के अन्तर्गत अनुच्छेद 29 में द्रष्टव्य है।

अनुच्छेद 29 Protection of Interests of minorities in the territory of India or any Part thereof having a distinct language scripture culture of the own shall have the right to conserve the same.

ऐसे ही प्रावधान ने झारखंडियों को अपनी मातृभाषा व विशिष्ट संस्कृति को बचाने को प्रेरित किया। मातृभाषा व सांस्कृतिक चेतना को प्रसारित होने में समय अवश्य लगा। लेकिन आज गर्व से कहा जा सकता है, अब चेतन बलवती हो गई है और आनेवाले दिनों में और पुष्ट होगी।

# अध्याय 4 :
# द्वितीय राजभाषा संबंधी महाजुटान

दिनांक 29–08–11 को बिरसा चौक, राँची पर नौ झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने के मसले पर और बंगला को द्वितीय राजभाषा देने के विरोध में सांस्कृतिक संस्था आखड़ा के तत्वावधान में महाजुटान का आयोजन हुआ। इस महाजुटान की पृष्ठभूमि में यह चर्चा प्रासंगिक है कि दिनांक 16–08–11 दिन मंगलवार को मुख्यमंत्री अर्जुन मुंडा ने बंगला व संथाली को द्वितीय राजभाषा देने संबंधी बिल के प्रारूप पर अपनी मंजूरी दी जिससे विधान सभा में मानसून सत्र के दौरान पेश किया जाना था। संथाली को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने के संबंध में यहां के स्थानीय वासिन्दों, भाषाविदों को एतराज नहीं था लेकिन बंगला के मुद्दे पर था क्योंकि इसके दूरगामी परिणाम भयंकर व आत्मघाती होना निश्चित था। उल्लेखनीय है कि गैर झारखण्डी भाषाओं की मान्यता पर उड़ीया, मैथिली, मगही, भोजपुरी अंगिका आदि को द्वितीय राजभाषा बनाने की मांग जोर पकड़ती और स्थानीय भाषाओं की अहमियत घटती। इतिहास इस बात का गवाह है कि अविवेकपूर्ण निर्णय किसी समुदाय विशेष, जाति विशेष, संस्कृति के भविष्य को गहन अंधकार की ओर ढकेलता है। सस्ती लोकप्रियता व राजनीतिक तुष्टिकरण के लिए ही अविवेकपूर्ण एवं दूरदृष्टिविहीन यह निर्णय यहां के राजनीतिक रहनुमाओं द्वारा अपने समाज के लिए कब्र खोदना जैसा है। इस जघन्यमय अपराध के लिए कोई एक पार्टी या नेता को दोषी ठहराना अनुचित है लगभग सभी पार्टियां व नेतागण तुष्टिकरण को ही राजनैतिक अस्तित्व के लिए हथियार के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं

29—8–11 के महाजुटान में साहित्यकार, भाषाविद रंगकर्मियों के अलावा पूरा झारखण्ड का जनमानस विभिन्न संगठनों के रूप में आखड़ा के आह्वान पर आन्दोलित हुआ और बिरसा चौक, राँची पर अपनी उपस्थिति दर्ज की। जिन संगठनों ने इसमें भाग लिया वे निम्नलिखित हैं :

- आदिवासी कुड़मी समाज, झारखण्ड
- शहीद रघुनाथ महतो फाउण्डेशन

- कुड़माली भाषा संस्कृति परिषद, धनबाद
- झारखण्ड इंडिजिनिअस पीपुल्स फोरम
- आदिवासी छात्र संघ
- झारखण्ड जनाधिकार मंच
- जोहार
- जनमुक्ति संघर्ष वाहिनी
- झारखण्ड आदिवासी वीमेंस एसोसियेसन
- हीरा बरवै छात्र संघ
- आदिवासी वीमेंस नेटवर्क
- हो कला संगम चाईबासा
- छोटानागपुर सांस्कृतिक परिषद्
- पंचपरगनिया विकास समिति आदि

इसके अलावा बुद्धिजीवि, साहित्यकार, समाजसेवी, रंगकर्मियों में – श्री बी. पी केसरी, लाल रण विजय नाथ शाहदेव, मधु मंसुरी, शांति खलखो, मुकुंद नायक, ईश्वरी प्रसाद बड़ाईक, डॉ शशिभूषण काड़वार, डॉ वृन्दावन महतो डुमरिआर, श्याम सुंदर महतो, हीरालाल संखवार, राजीव कुमार महतो, रतन कुमार महतो, दयामनी बारला, ग्लैडसन डुंगडुंग, अश्विनी पंकज, वंदना टेटे, सलोमी एक्का आदि।

झारखण्डी भाषा एवं संस्कृति के मुद्दे पर आदिवासी कुड़मी समाज का दृष्टिकोण एवं नीति स्पष्ट है। जमीन की भाषाओं को अपनी जमीन पर स्थान नहीं मिलेगा इससे और दुर्भाग्य क्या हो सकता है? साथ में अपनी जमीन पर औरों की भाषा को काबिज करना कितना खतरनाक और आत्मघाती हो सकता है यह आदिवासी कुड़मी समाज को भलीभांति मालूम था। अतः अपने अस्तित्व में आने के साथ ही इसने ऐलान किया कि कुड़माली कुड़मियों की मातृभाषा है और इससे द्वितीय राजभाषा का दर्जा अवश्य ही मिलना चाहिए। क्योंकि, भाषा के बगैर संस्कृति बच नहीं सकती है।

झारखण्डी समाज को समरसता प्रदान करने में आदिवासी कुड़मी समाज हमेशा अग्रणी रहा हैं सहिया, फूल, प्रसाद पद्धति ने यहां के विभिन्न

जातियों व वर्गों को एकीकृत करके रखा जो आज भी जारी है जिसमें कुड़मियों का योगदान उल्लेखनीय है। गौरतलब है कि कुड़माली साहित्य में शहीद रघुनाथ महतो, बुली महतो, बिनोद बिहारी महतो, निर्मल महतो आदि को जितना सम्मान प्राप्त है उतना ही बिरसा मुंडा, तिलका मांझी, कार्तिक उराँव आदि स्वाधीन चेत्ताओं लड़ाकाओं को भी।

आदिवासी कुड़मी समाज का गठन ही कुड़माली भाषा संस्कृति के संरक्षण, संवर्द्धन के लिए हुआ है/था। अतः जहां कहीं इसके भविष्य साथ में अन्य झारखण्डी भाषाओं के अस्तित्व को खतरे का सवाल उठा यह सोच्चार हुआ और हर तरह के संघर्ष के लिए तत्पर हुआ। आखड़ा के बैनर तले जब प्रेस कांफ्रेंस में दिनांक 22–8–11 को एलान हुआ कि नौ झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा के दर्जा देने के सवाल पर बिरसा चौक, राँची पर महाजुटान होगा, यह समाज आन्दोलित हुआ। महाजुटान को सफल बनाने के लिए चिंतन मनन, लोक जागरण एवं संपर्क साधन प्रारंभ हुआ। इसी कड़ी में दिनांक 25–8–11 को समाज के महासचिव मान्यवर डॉ शशि भूषण महतो काड़वार की नुमाइंदगी में एक ज्ञापन माननीय मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुंडा जी एवं माननीय उपमुख्यमंत्री श्री सुदेश कुमार महतो जी को दिया गया जो एपेन्डिस –1 में दर्शाया गया है। इस डेलिगेशन में डॉ. शशिभूषण महतो काड़वार के अलावा डॉ वृन्दावन महतो, प्रभात कुमार महतो, डॉ प्रमेश्वरी प्रसाद महतो, मान्यवर जिला परिषद् उपाध्यक्ष, श्री श्याम सुंदर महतो, गनेश्वर महतो, ओमप्रकाश महतो आदि शामिल थे।

महाजुटान को सफल बनाने की कड़ी में ही दिनांक 26–8–11 को बिरसा चौक पर झारखण्डी भाषा संस्कृति परिषद् के बैनर तले धरना दिया गया, जिसमें कई संगठन शामिल थे। वक्ताओं ने अपनी ओजपूर्ण भाषा में अपनी जमीन की भाषाओं के हक की बात कही – उभरती हुई और अपने पैरों पर खड़ा होने की कोशिश करनेवाली यहां की भाषाओं को यदि अपनी जमीन पर ही सपोर्ट नहीं मिलेगा तो अन्यत्र कहां मिलेगा? वक्ताओं ने सही राजनैतिक नजरिया अपनाने की गुजारिश की। बताते चलें इससे पहले प्रेस कांफ्रेंस के दौरान आखड़ा की महासचिव वंदना टेटे, प्रवक्ता डॉ वृन्दावन महतो, अध्यक्ष श्याम सुंदर महतो को झारखण्डकेत्तर भाषाओं के मसले पर पत्रकारों के कई प्रश्नों का सामना करना पड़ा। जैसे :

1. अन्य गैर झारखण्डी भाषाओं को क्या स्थान नहीं मिलना चाहिए?
2. गैर झारखण्डी भाषाओं के प्रति विद्वेष क्यों?
3. झारखण्डी भाषाओं की बात से अन्यों का विरोध क्यों?
4. क्या बाहरी भीतरी की भावना को पुनः उभाड़ने की कोशिश हो रही है?
5. झारखण्ड में वर्षों से बसे गैर झारखण्डी अपनी मातृभाषा को छोड़कर क्या झारखण्डी भाषाओं को अपनायेंगे? इत्यादि।

आखड़ा के विद्वान प्रतिनिधियों ने तर्कसंगत जबाब व संविधान सम्मत प्रावधानों की चर्चा करते हुए कहा –" सबकी मातृभाषा आदरणीय है, झारखण्ड की यह विशेषता है कि यहाँ हर तरह की भाषायें व संस्कृतियां जीवंत हैं, विरोधाभाष तो है ही नहीं, विद्वेष की भावना भी नहीं है। दक्षिण भारत, आसाम व महाराष्ट्र की परिस्थिति यदि यहां होती तो यह सहज अनुमेय है कि उन्हें यहां निवास करने में कितनी दिक्कत होती। स्मरणीय है कि छठ पर्व मनाने के मसले पर महराष्ट्र में कैसा एन्टी बिहारी सेन्टिमेंट उभरा था।"

अपने तर्क में इन्होंने कहा– भाषा–संस्कृति ही किसी समुदाय विशेष की पहचान है। शायद यही मुद्दा झारखण्ड निर्माण व गठन में अहम मुद्दा था। हम यदि पूर्व पाकिस्तान से बंगला देश की निर्माण की बात करें तो भाषा संस्कृति ही मूल मुद्दा था। इस्लाम को मानने वाले पूर्व पाकिस्तानी बंगला भाषा व बंगला संस्कृति के मुद्दे पर पश्चिमी पाकिस्तान से अलग हुए। वर्तमान में गोरखालैंड का आन्दोलन नेपाली भाषा संस्कृति को केन्द्र करके ही है। इससे अलग हटकर यदि झारखण्ड बंगाल में, उड़ीसा में, आसाम में, अपनी भाषा को द्वितीय राजभाषा बनाने की मांग करें। (झारखण्डी भाषा भाषी लोग वहाँ काफी संख्या में हैं) तो क्या उन्हें मिलेगा? उत्तर नकारात्मक है। इन्होंने आगे बताया– फिजी, मरिशस में, भोजपुरी भाषा की मान्यता है। तो क्या बंगाल में भोजपुरी बोलने वाले नहीं हैं। वहां क्यों नहीं भोजपुरी की आवाज उठनी चाहिए? बंगाल के जो क्षेत्र उड़ीसा से सटे हैं वहाँ धड़ल्ले से उड़िया बोली जाती है। आसाम में, उड़ीसा में, दिल्ली में बंगाली झारखण्ड की तुलना में अधिक संख्या में हैं, वहाँ बंगला को द्वितीय राजभाषा का दर्जा की मांग क्यों नहीं हो रही है? झारखण्डी भाषाओं को काफी जद्दोजहद के बाद अपनी जमीन पर पनपने का मौका मिला है। इन्हें यह सुविधा अवश्य मिलनी

चाहिए। एक षड़यंत्र के तहत इनके हकमारी की व्यवस्था हो रही है।

झारखण्डी भाषाओं की लड़ाई नई नहीं है। झारखण्ड गठन के पहले से ही यह लड़ाई चली आ रही है। मरांग गोमके जयपाल सिंह से शुरू करके झारखण्ड गठन से लेकर आज तक संस्कृति की पहचान के साथ भाषा की अस्मिता का सवाल ही झारखण्डी जनमानस में छाया हुआ है। प्रस्तुत लेख में झारखण्डी भाषा आन्दोलन का इतिहास लिखना ध्येय नहीं है। बल्कि झारखण्ड गठन के बाद जो राजनैतिक नजरिया अपनाया गया है साथ ही झारखण्डी जनमानस किस तरह अपनी पहचान बनाने के लिए आन्दोलित हुआ है उसकी एक कड़ी का जिक्र करना अभीष्ट है। शुरूआती दौर के चर्चे में थोड़ा जिक्र करना प्रासंगिक है कि एन. ई. होरो साहब ने भी झारखण्ड अलग राज्य गठन के मामले में यहां की भाषा–संस्कृति को ही मुद्दा बनाया था। झारखण्ड क्या, क्यों और कैसे? (झारखण्ड पार्टी का घोषणा पत्र में) पेज 14 में लिखा गया है : "झारखण्डी भाषाओं (मुण्डारी, संथाली, खड़िया, पंचपरगनिया आदि) के विकास के लिए हर संभव प्रयास किये जायेंगे। मातृभाषा में शिक्षा दी जायेगी। अनुसंधान (गवेषणा) और प्रकाशन की सुविध ाएं दी जायेगी। स्कूल कॉलेजों में इन्हें गौरवमय स्थान मिलेगा। इनमें से जब तक कोई भाषा पूरी विकसित नहीं हो जाती तब तक हिन्दी राजभाषा और कार्यालय की भाषा होगी। यहां काम करने वालों के लिए एक भाषा जानना अनिवार्य होगा। देवनागरी लिपि अपनायी जायेगी।

दिनांक 29–8–11 के महाजुटान में ढोल, नगाड़ा और मांदर के साथ प्रदर्शन हुआ, मधु मंसूरी और अन्य कलाकार ने अपनी लोकगीत स्वर लहरी का जादू इन वाद्य यंत्रों की आवाज के साथ बिखेरा। दिनांक 26–8–11 को भी धरना कार्यक्रम बिरसा चौक पर हुआ था उस दिन भी ढोल, नगाड़ा, मांदरों का इस्तेमाल हुआ था। इस घटना में डॉ. बी. पी. केसरी, डॉ गिरीध ारी राम गोंझू, मुकुंद नायक, वंदना टेटे, महावीर नायक, सूर्य सिंह बेसरा, श्याम सुंदर महतो (धनबाद) वीरेन्द्र सोय, पूनम केरकेट्टा, वीरेन्द्र महतो सहित काफी झारखण्डी साहित्यकार, रंगकर्मी व बुद्धिजीवि उपस्थित थे।

सरकार सीधी भाषा में बात सुनना नहीं चाहती तो प्रतीकात्मक रूप में ऊँची आवाज में अपनी बात सुनाने के लिए झारखण्ड में ढोल, नगाड़ों, मांदरों के साथ प्रदर्शन का रिवाज चलाना पड़ा। उल्लेखनीय है कि पूर्व निध

ारित व घोषित कार्यक्रम के अनुसार दिनांक 27–4–11 को भी अल्बर्ट एक्का चौक पर ढोल, नगाड़ा व मांदर के साथ प्रदर्शन हुआ था। दिनांक 28–4–11 को इससे संबंधित जो समाचार प्रभात खबर में छापा उसका शीर्षक था।

"जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं को दो राजभाषा का दर्जा"

बुद्धिजीवि उतरे सड़क पर

(झारखण्डी कलाकार, लेखक, साहित्कार व भाषाविदों ने अल्बर्ट एक्का चौक पर नगाड़ा बजाया)

इस वक्त मुख्य मांगे निम्नलिखित थी:

केन्द्रीय झारखण्डी भाषा साहित्य अकादमी व आदिम जनजातियों के भाषायी संरक्षण के लिए निकाय गठित किये जायें।

- झारखंडियों का सांस्कृतिक, आर्थिक विस्थापन बंद हो।
- त्रिभाषा (अंग्रेजी, हिन्दी, स्थानीय) फार्मूले पर शिक्षण व्यवस्था हो।
- प्राथमिक स्तर से स्कूलों में झारखण्ड भाषाओं की पढ़ाई के लिए भाषायी शिक्षकों की नियुक्ति हो।
- झारखण्डी मूल्यों पर आधारित एकरूप पाठ्यक्रम लागू किया जाय।

इसी दिन दैनिक भास्कर में जो समाचार छापा उसका शीर्षक था – जोर शोर से उठने लगी है झारखण्डी भाषाओं को राजभाषा बनाने की मांग (अखड़ा के सदस्यों ने नगाड़ा पीटकर किया आन्दोलन का शंखनाद)

आज के कार्यक्रम में झारखण्ड आदिवासी कुड़मी समाज के महासचिव मान्यवर डॉ शशिभूषण काड़वार, डॉ वृन्दावन महतो उपस्थित थे जिन्होंने शान से ढोल नगाड़ा बजाया। अन्य जो उपस्थित थे उनके नाम निम्नलिखित हैं – श्रीमती वंदना टेटे, डॉ शांति खलखो, रमणिका गुप्ता, ग्लैडसन डुंगडुंग, जेरोम जेराल्ड कुजूर, पुष्कर महतो, डॉ वीरेन्द्र सोय, अनिल अंशुमन, प्रो. महामनी कुमारी, सच्ची कुमारी, शांति सवैया, अशर्फी नंद प्रसाद, सलोमी एक्का, मॉरिस किड़ो, जीतू उराँव, मानसिंह मुंडा, प्रदीप बोदरा आदि।

भाषाई मुद्दा एक संवेदनशील मुद्दा है। आदिवासी कुड़मी समाज इस मुद्दे पर कोई समझौता करने को तैयार नहीं। भाषा को आधार मानकर ही आजादी के बाद राज्यों का पुनर्गठन हुआ। झारखण्ड बनने के बाद यदि सिर्फ

झारखण्डी भाषाओं को ही द्वितीय राजभाषा के दर्जा की मांग हो रही है तो इसमें गलत क्या है? बाकी भाषाओं का अपना स्थान है यहां द्वितीय राजाभाषा का दर्जा मांगना यहां की भाषाओं के साथ अन्याय है, धोखा है। पुरानी कहावत "विशाल बरगद के छाँव तले छोटे पेड़ पौधे नहीं पनप सकते।" गौर करें तो यह स्पष्ट होगा कि समृद्ध इतर भाषाओं को यहां स्थान मिला तो झारखण्डी भाषाओं का विकास अवरूद्ध हो जायेगा। कई लेखकों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं कि जो अन्य प्रदेश अपनी भाषा को छोड़कर राष्ट्रभाषा हिन्दी को सम्मान नहीं देना चाहते तथा जो अपने को झारखंडी कहते हैं उन्हें भाषा–संस्कृति को उचित दर्जा व स्थान देना नहीं चाहते वे किस आधार पर झारखण्ड में अपनी भाषा के लिए राजभाषा दर्जे की बात कर रहे हैं। प्रसंग क्रम में उल्लेखनीय है कि सरकारी निर्णय (जिसमें बंगला, उड़िया को भी द्वितीय राजाभाषा का दर्जा विधान सभा मानसून सत्र 2011 में दिया गया) के आलोक में जो पंजाबी, मारवाड़ी, गुजराती, नेपाली आदि यहां हैं वे भी अपनी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने की मांग नहीं उठायेंगे? (फिलहाल मैथिली, मगही, भोजपुरी, अंगिका आदि की मांग उठ चुकी है) द्वितीय राजभाषा के मामले व भाषाई समाज के मामले में छत्तीसगढ़ ने जो राह दिखाई वह अनुकरणीय है। वहां राजभाषा हिन्दी के साथ छत्तीसगढ़ को द्वितीय राजाभाषा का दर्जा प्राप्त है।

किसी भी भाषा को राज्य की द्वितीय राजभाषा बनाये जाने के लिए भारतीय संविधान में स्पष्ट दिशा–निर्देश हैं वे भाषाएं जो राज्य की संस्कृति, साहित्य, इतिहास, परंपरा, रहन–सहन, रीति–रिवाज, कला–कौशल, संगीत–नृत्य, भूगोल, वनस्पतियां, ज्ञान–विज्ञान आदि को पूर्णतः अभिव्यक्त करती हैं, उन्हें ही द्वितीय राजभाषा बनाने का संवैधानिक व नैसर्गिक अधिकारी माना जाना चाहिए न कि उन भाषाओं को जो आजीविका व अन्य कारणों से आये लोगों द्वारा राज्य में बोली जाने लगी।

"भारत के संविधान के अनुच्छेद 29 में यह प्रावधान है कि नागरिकों के किसी भी अंशक को जिसकी अपनी विशिष्ट भाषा, लिपि अथवा संस्कृति है, उसका संरक्षण करने का अधिकार होगा।" (स्वतंत्र भारत जातीय तथा भाषाई समस्या, लेखक– बोरीस क्लूयेव, प्रगति प्रकाशन मास्को, 1968)

Article 29 Protection of Interests of Minorities :

1. Any section of the citizens residing in the trritory of India or any part there of having a distinct language, script or culture of its own shall have the right to conserve the same.

प्रश्न उठता है जो पारंपरिक तौर पर सुदृढ़ व संरक्षित हैं उन्हें झारखण्ड के अखाड़े में नाचने व उछलने का लाइसेंस क्यों? इसी को कुड़माली लोकोक्ति में कहते हैं ''खाँखड़ा उड़ुञ सामाल सांप, सांपे कहेइ मञ खाँखड़ाक बाप''। अतः असुरक्षित झारखण्डी भाषाओं को ही द्वितीय राजभाषा का दर्जा यहां मिलना चाहिए जिससे वे फल फूल सकेंगी व बलवती होंगी। आदिवासी कुड़मी समाज ने अपनी भाषा की प्राचीनता तथा इसकी मौलिकता के आलोक में ही इसे द्वितीय राजभाषा का दर्जा और इसी तर्ज पर अन्य झारखण्डी भाषाओं के द्वितीय राजभाषा का दर्जा की मांग का जोरदार समर्थन किया हैं

भाषाई मुद्दा कितना संवेदनशील है इसका एक बड़ा उदाहरण हमें स्वतंत्रोत्तर काल में तमिलनाडु में दिखाई पड़ता है। आजादी के बाद जब संविधान निर्माण की दिशा में काम चल रहा था तब हिन्दी को राजभाषा का दर्जा देना एक बड़ा विवादित विषय था। हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिए जरूरी था कि इसका देश भर में व्यापक प्रचार–प्रसार हो इसलिए तय किया गया कि संविधान लागू होने के 15 साल तक प्रचार प्रसार के बाद 26 जनवरी 1965 को हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दे दिया जाएगा।

किन्तु, दक्षिण भारत के राजनीतिक दलों, खासकर डी.एम.के ने इस फैसले का काफी विरोध किया था। विरोध को देखते हुए तत्कालीन प्रध ाानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने राजभाषा अधिनियम 1963 को लागू कर दिया। इसमें 1965 के बाद हिन्दी के साथ साथ अंग्रेजी के इस्तेमाल की छूट दी गयी थीं डीएमके नेताओं को अधिनियम पर भी आपत्ति थी लेकिन इस आपत्ति को दरकिनार करके इसे लागू कर दिया गया। इसके विराध में अन्नादुरई ने तमिलनाडू में आन्दोलन छेड़ दिया। विरोध प्रदर्शन के दौरान उन्होंने संविधान का वह हिस्सा जलाने की कोशिश की जिसमें हिन्दी को राजभाषा का दर्जा देने का जिक्र किया गया था। इस घटना के बाद उन्हें कई समर्थकों के साथ गिरतार करके जेल भेज दिया गया। इस घटना के समय लाल बहादुर शास्त्री देश के प्रधानमंत्री थे, उनके मंत्रीमंडल में मोरारजी

देसाई व गुलजारी लाल नंदा जैसे दिग्गज शामिल थे। ये नेता, हिन्दी के परम हिमायती थे और लगातार हिन्दी के पक्ष में बयान दे रहे थे। इसी दौरान राज्य के गवर्नर ने त्रिभाषा (हिन्दी, अंग्रेजी, तमिल) फार्मूला दिया। इन घटनाओं ने हिन्दी विरोध की हवा को और तेज कर दिया, आन्दोलन और हिंसक हो गया। राज्य सरकार ने हालात पर नियंत्रण के लिए अर्द्धसैनिक बल बुला लिया जिसकी कार्रवाई में तकरीबन 100 लोग मारे गये।

अर्थात् भाषाई संवेदनशीलता के मामले में लोग तमिलनाडु में शहीद हो गये। आदिवासी कुड़मी समाज का कहना है कि भाषाई चेतना की चिनगारी इतनी प्रबल वेग से यहां फूट पड़ी है जिसको बुताना नामुमकिन है, अतः भविष्य में सरकारी गलत निर्णयों के क्या गंभीर परिणाम होंगे यह सुस्पष्ट है।

औद्योगिकरण व सरकार तंत्र का विस्तार के साथ रोजगार की संभावनाओं का बढ़ना स्वभाविक है। लेकिन क्या इसमें स्थानीय मूल व आदिम निवासियों की उपेक्षा की जानी चाहिए? उत्तर नकारात्मक है। इस मुद्दे पर मेघालय व कर्नाटक की घटनाओं का जिक्र करना प्रासंगिक है। 1984 में मेघालय विधानसभा ने एक विधेयक का अनुमोदन किया, जिसमें अनुसार राज्य प्रशासन में सभी पदों और राज्य में स्थित सभी उद्योग धंधों में रिक्त स्थानों पर नियुक्तियां इस प्रकार की जानी चाहिए।

40 प्रतिशत खासी जातीय समूह
40 प्रतिशत गारो जातीय समूह
5 प्रतिशत राभा जाति
5 प्रतिशत बड़कचारी
5 प्रतिशत कोच जाति
5 प्रतिशत दूसरे राज्यों के रहने वालों के लिए (लेकिन वे आदेवन कर सकते हैं राज्य के अधिकारियों से निवास अनुज्ञा पत्र पाकर ही।)

(संदर्भ : द स्टेटमेन, 7 जुलाई 1984)

इसी तर्ज पर कर्नाटक राज्य विधान सभा की सदस्स्या डॉ. सरोजिनी महिषी की अध्यक्षता में एक आयोग की स्थापना की गयी जिसने राज्य के प्रशासन तंत्र में और सरकारी उद्यमों में 80 प्रतिशत स्थान देशज कन्नडीगा लोगों के लिए आरक्षित करने और राज्य में भविष्य में काम पाने के लिए

कन्नड़ के ज्ञान को वांछनीय नहीं बल्कि "अनिवार्य" बनाने का सुझाव दिया। (संदर्भ: टेलीग्राफ, कलकत्ता, 21 जुन 1994)

इसी तर्ज पर और भी घटनाएं घटित हुई होंगी लेकिन और अधिक विस्तार में न जाकर आदिवासी कुड़मी समाज का कहना है कि यहां प्रशासन तंत्र (सरकारी नौकरियों) व उद्योग धंधों में स्थानीय भाषा –भाषियों (झारखण्डी भाषा भाषियों) के लिए सुरक्षित हो और अन्य 20 प्रतिशत में अन्य भाषा भाषियों का नियोजन हो निवास अनुज्ञा पत्र के आधार पर साथ में उनके लिए कम से कम एक झारखंडी भाषा जानना अनिवार्य हो। सरकार को चाहिए कि इस संबंध में नीति निर्धारण करे। मूलबात है झारखण्डी भाषा भाषियों का हकमारी न हो।

कुड़माली विभिन्न क्षेत्रों में किंचित रूप परिवर्तन के साथ बोली जाती है जो कि मूलतः कुड़माली ही है। इस संदर्भ में माननीय शैलेन्द्र महतो जी का बयान उल्लेखनीय है जो 100 प्रतिशत एक व्यापक क्षेत्र में बोली जानेवाली भाषा का मानक रूप एक ही होता है लेकिन क्षेत्रीय रूप किंचित भिन्न। यह तथ्य, बंगला, उड़ीया, असमिया एवं अन्य भाषाओं में लक्षणीय है। यदि यह सत्य है तो बंगला प्रभावित या उड़ीया प्रभावित आदि इलाके में बोली जाने वाली कुड़माली को बंगला या उड़ीया कहना कहां तक तर्क संगत है। उल्लेखनीय है कि कुड़माली अति प्राचीन भाषा है जबकि बंगला उड़ीया लगभग 10वीं शताब्दी के बाद की भाषाएं। हकीकत तो यह है कि जो भाषा उड़ीसा से सटे अंचल में बोली जाती है वह कुड़माली प्रभावित उड़ीया है एवं बंगाल से सटे इलाका में बोली जानेवाली भाषा कुड़माली प्रभावित बंगला।

उपनिवेशवाद की मानसिकता वाले, जिनकी भाषाएँ, जिनकी भाषाएं विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित हैं या गिनी जाती हैं, वे उपनिवेशवाद विस्तारण से झारखण्ड को चारागाह बनाना चाहते हैं। यह भाषाई उपनिवेदशवाद का ज्वलंत उदाहरण है, साथ में षड़यंत्र का भी। असाम के संबंध में यह उल्लेखनीय है कि उपनिवेशवादी मनोवृति व षड़यंत्र विशेष के कारण ही 1836 में वहां अदालतों और स्कूलों पर बंगला भाषा थोपा गया। जो 35 साल तक राजभाषा बनी रही और असमिया को इस अवधि में बहुत क्षति उठानी पड़ी। (संदर्भ : स्वतंत्र भारत जातीय तथा भाषाइ समस्या, पेज – 136, प्रगति प्रकाशन)

वर्तमान में असमिया जातीय एवं भाषा आन्दोलन के कारण बंगला को मात्र तीन जिलों में ही मान्यता दी गई। अर्थात् वहां बंगला का डी रिकगनिशन हुआ। लेकिन विरोध में कोई आवाज नहीं उठी।

गौरतलब है कि आज आसाम में बंगला भाषियों की संख्या 7343338 है। आश्चर्य का विषय है कि आज ये भाषाई उपनिवेशवादी वहां बंगला द्वितीय राजभाषा की मांग नहीं उठा रहे हैं –'' झारखण्ड में ये जो आंकड़ा दर्शाते हैं वह प्रमाणिक तो है ही नहीं बल्कि जनमानस को भ्रमित करने वाले। असम में आज यह भी सच्चाई है कि जो बंगवासी वहां पुस्तों से बसे हैं आज अपना परिचय आसामिया के तौर पर देने में गर्व अनुभव करते हैं– यही बात यदि ये झारखण्ड में दोहराते तो झारखण्ड की संस्कृति और मजबूत होती और मानवता के दृष्टिकोण से उचित भी होता।

थोड़ी चर्चा उड़ीसा में बंगला उपनिवेशवाद की भी की जा रही है। बंगाल प्रेसीडेंसी के ही एक और भाग ओड़िसा से भी 19वीं सदी के अंत में भाषाई स्थिति बहुत सी बातों में असम की स्थिति जैसी ही थीं नई शिक्षा प्रणाली पर बंगालियों का प्रभुत्व था। प्रशासन और शिक्षा में ओड़िया की बंगला से प्रतिस्थापना करने के लिए कदम उठाये जा रहे थे। ओड़िया साहित्य के बारे में एक निबंध में कहा गया है –'' उन मनहुस दिनों में, जब ओड़िसा बंगाल प्रेसीडेंसी का प्रशासनिक अंग था, कुछ बंगाली अधिकारियों ने ओड़िसा में ओड़िया की बंगला से प्रतिस्थापना करने का यत्न किया।'' इतना ही नहीं ''बंगालियों का दावा है कि ओड़िया महज बंगला की ही एक बोली है और उसे स्वतंत्र भाषा माने जाने का कोई आधार नहीं है।''

(संदर्भ : स्वतंत्र भारतःजातीय तथा भाषाई समस्या–पेज 136, प्रगति प्रकाशन)

तो भाषाई उपनिवेशवादी प्रवृति का नया प्रयोग झारखण्ड में भी हो रहा है यह कहना युक्तिसंगत तो है ही दुर्भाग्यपूर्ण भी, क्योंकि आज भाषाई चेतना झारखण्ड में इतनी प्रखर हुई है कि षडयंत्रकारी उपनिवेशवादी प्रवृति को यहां सहन नहीं किया जायेगा। इस क्रम में आदिवासी कुड़मी समाज की सलाह है कि दबंग भाषाएं अपनी जगह रहें और झारखण्ड की पनपती मूल भाषाओं (कुड़माली, मुंड़ारी, कुडुख, संथाली, हो, खड़िया, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनिया) को फूलने फलने का मौका दें।

झारखण्ड के मूलवासी व आदिवासियों का सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है जब वे याद करते हैं कि अंग्रेजों के विरोध में उन्होंने जो आवाज उठाई, हुंकार भरा वह यहां की स्थानीय भाषाओं में था। यथा– बाबा तिलका मांझी ने नेतृत्व किया मलतो (द्रविड़ परिवार की भाषा) में, सिद्धो–कान्हू ने उलगुलान किया, संथाली में, वीर बुधु जतरा भगत ने आवाज दी, कुडुख में, पोटो सरदार हुंकारे हो में, वीर तेलंगा खड़िया ने जोड़ी पंचेत बनाया खड़िया में, विश्वनाथ शाही, शेख भिखारी दहाड़े नागपुरी में, क्रान्तिवीर रघुनाथ महतो ने पुकारा कुड़माली में, खोरठा में ललकारा रामनारायण सिंह ने और बीर बिरसा ने उलगुलान किया मुंडारी में। शायद यहां की भाषाओं का जादू था कि उलगुलान की आग यहां के लोगों के जेहन में जलती रही तथा आज भी जल रही है और भाषाई चेतना और अधिक जीवंत हो उठी है।

भाषाई मुद्दे पर विभिन्न गैर झारखण्डी भाषाओं की हिमायत करने वाले विद्वानों ने जो बयान यहां की भाषाओं, यहां की क्रातिकारियों की भाषाओं के बारे में दिया है वह समयानुकूल नहीं है, झारखण्ड प्रेम के प्रतिकूल है। झारखण्ड में बंगला के हिमायती रंजीत मल्लिक ने तो यहां तक कह डाला कि झारखण्ड राज्य गठन के शुरूआती दिनों में बंगला को ही सिर्फ द्वितीय राजभाषा के रूप में शामिल करने की मांग की जाती रही थी। उनका लेख 7 सितम्बर 2011 को प्रभात खबर में, झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा विवाद के संदर्भ में प्रकाशित हुआ जिसका शीर्षक था– मूलवासी कौन और उनकी भाषाएं क्या?

इस संदर्भ में माननीय मल्लिक जी को स्मरण कराना जरूरी है कि 19 नवम्बर 1981 को राँची विश्वविद्यालय में जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग की स्थापना हुई थी। इसी समय से ही झारखण्ड की नौ भाषाएं अपनी पहचान बनाने के लिए तत्पर हुईं तो झारखण्ड बनने के 20 साल पहले से ही स्थानीय भाषाएं मुख हुई एवं झारखण्ड बनने का आधार भी स्थानीय भाषा संस्कृति थी तो क्या यहां की भाषाओं की अपनी मांग गौण थी?

यहाँ प्रश्न है कि सिर्फ बंगला को द्वितीय राजभाषा का दर्जा बनाने की मांग झारखण्ड भाषा–भाषियों को थी या ख्वाब में जीने वाले और अखबारों के कॉलम में लिखने वाले रंजीत जी जैसे मानसिकता वाले और दो चार लोगों की थी?

उसी लेख में रंजीत मल्लिक जी का यह कथन कि सूर्य सिंह बेसरा, पूर्व सांसद शैलेन्द्र महतो के बयान में आकर दिगभ्रमित हो गये हैं तथा बेसराजी अपने क्षेत्र के लोगों से बंगला में बात करते हैं, के संबंध में यही कहना है कि शैलेन्द्र महतोजी ने जो बात कही है वह सौ फीसदी सही है तथा बेसरा जी दिगभ्रमित नहीं हुए हैं। हकीकत यह है कि रंजीत जी मातृभाषा व बाजार की भाषा में अंतर नहीं कर पा रहे हैं। एक राजनीतिज्ञ बाजार की भाषा में ही बात करेगा क्योंकि बाजार में यह जरूरी है तो क्या बाजार की भाषा बेसराजी की मातृभाषा हुई? यहां बेसरा जी को मातृभाषा के मर्यादा व सम्मान का प्रश्न है।

आगे की कड़ी में रंजीतजी ने शहीदों की भाषा के बारे में जो कमेंट किया है वह काफी ऑब्जेक्सनेबल है। उनका कहना है कि सिद्धू कान्हू, सिंगराई–विंदराई मानकी की द्वितीय भाषा बंगला थी तथा क्रान्तिवीर रघुनाथ महतो की अपनी भाषा बंगला थी। इस संबंध में यही कहना है कि इन शहीदों ने जो विद्रोह को जनम दिया था वह जाति आधारित थी तथा अंग्रेजों के खिलाफ। उल्लेखनीय है कि तत्कालीन बंगाली चकलादार, तहसीलदार आदि अंग्रेजों के सहायक थे। ये उस समय अंग्रेजों के खिलाफ हो रहे विद्रोह को सपोर्ट करने वाले नहीं बल्कि कुंद करनेवाले थे। जो स्थानीय जातियां थी उनका अधिकार हरण हो रहा था। अतः उनका विद्रोही होना लाजिमी था, तो अपने समुदाय के लोगों को उन्होंने अपनी भाषा में न ललकार कर गैर भाषा में ललकारना यह समर्थन योग्य नहीं है। उस समय जंगल महल एवं झारखण्ड के काफी हिस्से में बंगालियों का निवास स्थान स्थापित नहीं था। हरेक शहीदों की प्रयुक्त भाषा के संबंध में संबंधित भाषा भाषी अपना मंतव्य पेश करेंगे। यह अपेक्षित है लेकिन उल्लेखनीय है कि इस संबंध में दिनांक 29 अगस्त 2011 को बिरसा चौक पर महाजुटान के मौके पर आखड़ा की ओर से महासचिव वंदना टेटे द्वारा प्रकाशित पम्पलेट में शहीदों के द्वारा प्रयुक्त जिन भाषाओं का जिक्र है, वह रंजीत मल्लिक जी के लिए दर्शनीय पठनीय है। इसी कड़ी में मल्लिक जी ने एक नया विवाद को जनम दिया है कि अंग्रेजों के खिलाफ रघुनथ महतो ने जंग छेड़ी थी न कि झारखण्ड राज्य के लिए। तो रंजीतजी यह बताएं वीर बिरसा मुंडा, तिलका मांझी, शेख भिखारी, ठाकुर विश्वनाथ शाहदेव, सिद्धो–कान्हू, आदि शहीदों ने– अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया था या झारखण्ड राज्य निर्माण के लिए?

इन विद्रोह का मूल कारण जल जंगल जमीन के हक की लड़ाई थी। मात्र माटि मानुष की लड़ाई थी साथ में अपनी भाषा संस्कृति संरक्षण की लड़ाई थी। यही बाद में झारखण्ड राज्य गठन का आधार बना। माननीय मल्लिक जी से निवेदन है विरोधाभास तैयार करने व अनर्थक तक को जन्म देने की कोशिश न करें।

कुड़माली आज एक प्रतिष्ठित व स्वीकृत भाषा है। आज इसे डायलेक्ट के तौर पर देखना गलत होगा। इसका साहित्य समृद्ध है, इसका गेय साहित्य इतना समृद्ध है कि इसकी मौलिकता व प्राचीनता पर प्रश्न खड़ा करना कठिन है। कुड़माली पुरोधाओं व साहित्यकारों का मानना है जो कुड़माली पूर्वी सिंहभूम व मानभूम में बोली जाती है उसे लोग इतर नाम देते हैं लेकिन मूलतः वह कुड़माली है क्योंकि वहां के रस्म रिवाज गीत–बांदना गीत, करम गीत, उधवा गीत, एढ़ेइया गीत आदि में इनका मूलरूप देखने को मिलता है। भाषा संबंधी उदाहरण में मल्लिक जी ने उदाहरण दिया है।

मर ठिन चाइ गअ पांठा आछे (कुड़माली)

आमार ठिने चारटा पांठा आछे (बंगला)

यह न कुड़माली में सही जंचता है न बंगला में ही। हकीकत में यह निम्नांकित होना चाहिए।

मर ठिन चाइरटा बदा आहात (कुड़माली)

आमर काछे चारटा पांठा आछे (बंगला)

इसका इन्होंने हिन्दी रूपान्तरण किया है

मेरे पास चार बकरा हैं

लेकिन व्याकरण गत विचार से होना चाहिए

मेरे पास चार बकरे हैं

लगता है, मल्लिकजी भाषाई उदाहरण में सही शब्दों का प्रयोग व सही व्याकरण के नियमों को मानना जरूरी नहीं समझते हैं। अपने लेख की अगली कड़ी में ये माननीय केशरी जी को बताना चाहते हैं। झारखण्ड में बाउरी, भुइंया, चौधरी, प्रमाणिक, नायक, महथा, सिंह, मिश्रा, दुबे, डे, घोष, मोदक आदि बहुसंख्यक हैं। लेकिन यह तथ्य से परे है, कहा जाय तो ये अति लघुसंख्यक हैं। यहाँ उल्लेखनीय है कि इनमें कुछ जातियां जैसे प्रामाणिक, कामार, नायक आदि फंक्शनल जातियां हैं ये जहां जाती हैं वहां की भाषाएं बोलती हैं। झारखण्ड में देखा जाता है इनका वासस्थान कुड़मियों के

इर्द–गिर्द ही है। इनका कुड़माली बोलना अपनी आजीविका के लिए आवश्यक है। इस संदर्भ में व्यापारी वर्ग का जिक्र करना जरूरी है। व्यापार के सिलसिले में यहां आकार बसनेवाले ये लोग यहां की स्थानीय भाषा में ही बात करते हैं। ये यहां के भाषा संस्कृति के खिलाफ नहीं हैं। झारखण्ड के लिए सौभाग्य की बात होती यदि ये समुदाय जो भाषाई विवाद को जन्म दे रहे हैं तथा अतार्किंत ढंग से द्वितीय राजभाषा दर्जा की मांग उठा रहे हैं यहां भी भाषा–संस्कृति की बात करके इनके संरक्षण, संवर्द्धन की बात करते और झारखंडियों से मिलजुलकर, वृहत्तर झारखण्ड निर्माण की बात करतें प्रसंगक्रम में आदिवासी कुड़मी समाज झारखण्ड की भाषा, संस्कृति और इतिहास के विद्वान डॉ बी.पी. केसरी जी का बयान जो गैर झारखण्डी भाषाओं का औचित्य क्या, शीर्षक से प्रभात खबर 5–9–11 में छपा है उसका पूर्ण समर्थन करता है। इस कड़ी में ''जोहार सहिया'' के संपादक श्री अश्वीनी पंकजजी को तर्कपूर्ण लेख जो प्रभात खबर दिनांक 28–4–11, 20–4–11 तथा 9–9–11 में प्रकाशित हुए हैं तथा माननीया वंदना टेटे जी के विचार जो उनके भाषणों व लीफलेट्स के माध्यम से आये हैं उनका स्वागत करता है।

नोटः डॉ. वी. वी. केसरी, अश्वनी पंकज, वंदना टेटे के विचार परिशिष्ट में देखें। (रंजित मल्लिक जी का मूल लेख परिशिष्ट में संलग्न है)

भाषाई उन्माद ज्वार में बहकर रंजीत जी ने कह डाला कि कुड़मी अंगद महतो ने, बंगला क्षेत्रीय भाषा होने के कारण ''आमरा बंगाली'' नामक पार्टी बनाई। हकीकत में ''आमरा बंगाली'' एक सामाजिक अर्थनैतिक संगठन है जो प्राउटिस्ट सर्व समाज समिति की 44 ईकाइयों में एक ईकाई है। पूरे देश में अलग अलग (रीजन) की संभावनाओं व संपदाओं के आधार पर वहां के अर्थनैतिक विकास हो, ही इसका लक्ष्य है। प्राउटिष्ट सर्व समाज समिति 20वीं शताब्दी के महान दार्शनिक श्री प्रभात रंजन सरकार के युगोपयोगी सामाजिक अर्थनैतिक दर्शन प्रगतिशील उपयोग तत्व पर आधारित है जो शोषण मुक्त समाज का हिमायती हैं। ''आमरा बंगाली'' के गठन में कई तत्व हैं जिनमें भाषा एक हैं लेकिन एक भाषा द्वारा दूसरे भाषा की हकमारी नहीं होगी तथा हरेक की मातृभाषाओं को पनपने का मौका देगी यह भी इसमें है। गौरतलब है कि प्राउटिष्ट सर्व समाज समिति की एक इकाई प्रगतिशील नागपुरी समाज भी है। यह कहना कि ''आमरा बंगाली'' कुड़मी अंगद महतो

की पार्टी है यही सही नहीं है।

इधर हाल में झारखण्ड को भाषाई चारागाह बनाने के लिए बहुत गैर झारखण्डी भाषा भाषियों के विचार आए हैं। यहां गैर झारखण्डी भाषा–भाषियों को द्वितीय राजभाषा बनाने की फेहरिस्त लम्बी होती जा रही है। अभी तक जिन गैर झारखण्ड भाषाओं ने द्वितीय राजभाषा का दर्जा मांग की है वे हैं : भोजपुरी, मैथिली, अंगिका, मगही, नेपाली (बंगला, उड़िया को तो दर्जा दे दिया गया है) आदि। झारखण्ड के भाषा–संस्कृति से संबंधित सभी कबिलाई संगठनों के साथ आदिवासी कुड़मी समाज भी ऐसे गैर झारखण्डी के दावे को पूर्णरूपेण विरोध करता है। झारखण्ड धरती पर अन्य भाषाओं के दावे के सम्बन्ध में आदिवासी कुड़मी समाज कहना चाहता है " मेरे अंगने में तेरा क्या काम है?

2. "बिहारी, उड़िया, बंगाली भाई नि झारखण्डी आखड़ाञ केथिक तेहें तहर एतेक हुलुक बुलुक आर नाचन कुदन"?

अभी तक झारखण्ड में इतर भाषाओं के आगमन से यहां की भाषा–संस्कृति की जो दुर्गति हुई है उस दर्द को कुड़माली पुरोधा, साहित्यकार कवि एवं समाजसेवी स्व. केशव चन्द्र तिडुआर ने निम्न कविता में व्यक्त किया है।

अलग पुइ  
कँदे ले आइके अलग पुइ  
टापि देलेइक बन भुञ  
सारेइ, पिआर, पियर मरि गेला  
अलग पुइएं बन टापि देला !!2!!  
जेतेक बनेक झुड़–झाड़  
सेउ हेलेइक साबाड़  
अलग पुइएक चुसअने, डुटु बनि गेला  
अलग पुइएं बन टापि देला ।।2।।  
बनेक जेतना फुल फर  
रहेन बनुआक बांचेंक अर  
अर लरूआइ बनुआ मरि गेला  
अलग पुइएं बन टापि देला ।।3।।

बाघा बन आर बिजु बन
डँड़ बन आर रन बन
अरून बन्अ उभड़ि गेला
अलग पुइएँ बन टापि देला।।4।।
अगल पुइएक चुसन
जेसन अकट्अ फांसेक बांधन
उ बांधने बनुआक मरन भेला
अलग पुइएं बन टापि देला।।5।।
हेरिहर सुघड़ सुंदर
बने कर चहर–बहर
पाइख–पाखुड़ेक नाचन कुदन भुलि गेला
अलग पुइएं बन टापि देला।।6।।
बनें कुइलि कुहु कुहु
सुने नि पाउबे काहुँ
मेजुर तितिर नाच भुलि गेला
अलग पुइएं बन टापि देला।।7।।
बने कर बसकतिआ
देखि सुनि फाटेइन हिआ
डरें अरा दबकि आइज गेला
अलग पुइएं बन टापि देला।।8।।

इसी तरह का दर्द माननीय ज्योतिलाल जी के कविता पलास फुल में व्यक्त हुआ है जो इस प्रकारः

सुन्दरी लो पलाश फूल, तोर रूपेक नाइ समतुल
तर लागि भंउर बेआकुल।
सनाक तर देही सारा, रस तर मधुक पारा
तर रसे मधु माछि पागल।।
आधा देही लाल सना, आधा देही केरिया सना
दुइअ सनाइ रूप झबरइअ।।
जेसन देखाई गरी बेटी, माथाक उपर केरिया झुटी
पानिक उपर लाल सालुक रहइ।।
कतेक भंवर अइल गेले कतेक भंवर रहिगेल

ताकर कनअ लेखा जोखा नाई।।
हेअत सबाइ आपन तर, केउ नाहि हेअत पर
कहत सबाई रहब एहे ठाई।।
काथा सुनि एहे सबे, कहतउ पलाश फुले तबे
हामर छिया पुताई किना खाता
जा आपन आपन घार, तरा रइहा ना आर
हामि तहराक नइहे अनदाता।
माइएं बापे देलउ जनम, खा आपन करि करम
परेक मांइएक भुल आशा करा।
ना सुनले हामर काथा, आखिरे पवबेहे धखा
दिनेक माझे देखइबे तखन तारा ।
पश्चीमेक अनेक भंवर, पुरबेक बनाअला घार
उतर दखिनेउ नाइ बाकि
चारो बाटेक मधु भंवर पलाश बने बनावला घार
पलाश फुलेक मधु देतउ खुशी
कुड़ुख में डॉ फ्रांसिस्का कुजूर ने पूर्वजों की भाषा संस्कृति की अस्मिता की रक्षा की जरूरत को यों व्यक्ति किया है
नमागे ननना मानो
पुरखार ही भाखा अरा नेत नेगन अखना मानो
अरा राजिन अंगिय आना मानो
आर ही कीरतिन बेलखन
ओंदरना मानो
उगता पसगी, नाड़ी जोत--तान गोलहान
उइया गे धरना मानो
धन खुर्जी लेखआ इज्जतान बछाबअना मानो
हिन्दी – अपने पूर्वजों की भाषा संस्कृति एवं देश को समझना होगा
उनकी कीर्ति एवं गौरवपूर्ण अतीत को वापस लाना होगा।
हल जुआट बैलों के संग खेतिहर बनना होगा
धन दौलत की तरह अस्मिता की रक्षा करनी होगी।

झारखण्ड में अपनी भाषा की उपेक्षा का दर्द राज्य गठन के पहले से था, यह दर्द अन्य गैर झारखण्डी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने

के साथ और बढ़ गया। इसी के मद्देनजर 29–08–2011 को बिरसा चौक पर आखड़ा के बैनर तले महाजुटान का आयोजन था जो काफी सफल व कारगर रहा। इसकी चर्चा हो चुकी है लेकिन दो चार बातों का जिक्र करना अप्रासंगिक नहीं होगा। इसी दरम्यान विधान सभा सत्र में चर्चा के दौरान विधायक बंधु तिर्की व श्रीमती गीता कोड़ा द्वारा नौ झारखण्डी भाषाओं के द्वितीय राजभाषा दर्जा का मांग उठाया गया। इसके साथ और भी विधायकों ने जिन्होंने समर्थन किया वे धन्यवाद के पात्र हैं। ये दोनों भाषा प्रेमियों की मांग को सही ठहराने व हौसला हाफजाई के लिए महाजुटान में शामिल हुए। भावी पीढ़ी को यह जानकर खुशी होगी कि वयोवृद्ध लाल रणविजय नाथ सहदेव, डॉ विशेश्वर प्रसाद केसरी, मधु मंसुरी, डॉ करम चंद अहीर, हीरालाल सांखवार, श्याम सुंदर महतो आदि आज के दिन नेतृत्व प्रदान करते हुए बुढ़े हड्डियों में आई नई जवानी का परिचय दे रहे थे। संयोजिका श्रीमती वंदना टेटे के प्रयासों की जितनी सराहना की जाय वह कम है। एक महिला होकर इस भाषाई आन्दोलन में जो अहम भूमिका इन्होंने अदा की वह काबिले तारीफ है साथ में नेतृत्वकांक्षी महिलाओं के लिए प्रेरणा स्रोत भी।

भाषा आन्दोलन सफल रहा। इसका प्रभाव 30–09–11 को मिला। झारखण्ड विधान सभा में झारखण्डी भाषाओं (कुड़माली, कुडुख, मुंडारी, संथाली, हो, खड़िया, नागपुरी, पंचपरगनिया) को द्वितीय राजभाषा संबंधी बिल पारित हुआ। इसके मद्देनजर अन्य संगठनों के साथ आदिवासी कुड़मी समाज माननीय मुख्यमंत्री श्री अर्जून मुंडा एवं माननीय उपमुख्यमंत्री श्री सुदेश कुमार महतो जी को तहे दिल से धन्यवाद ज्ञापन करता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का जिक्र करते हुए यह कहना उचित है कि झारखण्डी भाषा प्रेमियों ने पहली पायदान पर दिनांक 19 नवम्बर 1981 को कदम रखा था। वर्षों की कोशिश और संघर्ष के बाद इन्हें यह मंजिल मिली थी। इस सार्थक प्रयास में तब स्व. एन. ई. होरो, डॉ कुमार सुरेश सिंह, डॉ अनुज कुमार धान, डॉ प्रेम चंद होरो, रेभेरेन्ड बिशप हंस, डॉ निर्मल मिंज, स्व सुलेमान वाडिंग, आहलाद तिर्की, प्रफुल्ल कुमार राय, डॉ वी पी केसरी, डॉ राम दयाल मुंडा, जुलियस बाः, लक्ष्मी कान्त मुतरूआर, केशब चन्द्र तिडुआर, वसंत कुमार मेहता, डॉ नन्द किशोर सिंह, डॉ शशि भूषण महतो (काड़वार), डॉ आर. पी साहू, डोमन साहू 'समीर', अंगद महतो, विष्णु चरण महतो, विनोद

बिहारी महतो, श्री शैलेन्द्र महतो, डॉ वीर भरत तलवार, प्रो. बलराम पाट पिंगुआ, श्री अनन्त केसरिआर, राधागोविन्द महतो, बलराम पाट पिंगुवा, प्रो एच. एन सिंह, आदित्य मित्र, संथाली, अंगद सिंह, ज्योति लाल महादानी, डॉ फ्रांसिस एक्का, पूर्व कुलपति आर एस मंडल, श्री निवास पानुरि, ए के झा आदि अग्रणी थे।

ये पुरोधागण युग युग तक झारखण्डी भाषा प्रेमियों के लिए स्मरणीय व नमनीय रहेंगे।

झारखंडी भाषा संस्कृति चेतना को आगे बढ़ाने में जिन पुरोधाओं, कवि, लेखक, साहित्यकार, गीतकार, रंगकर्मियों ने योगदान दिया है, दे रहे हैं वे सभी नमनीय, वरणीय तथा श्रद्धा के पात्र हैं। अन्य संगठनों के साथ आदिवासी कुड़मी समाज इनके प्रति अपना श्रद्धा ज्ञापन करता है। साथ में नवपीढ़ी के उर्जावान संवेदनशील भाषा प्रेमियों नौजवानों का आहवान करता है कि अपने पूर्वजों की धरोहर को संभाल कर रखते हुए आगे इसे संबर्द्धित और बलिष्ठ बनाने में अग्रणी हों, जरूरत पड़ने पर एक नहीं कई महाजुटानों का आयोजन करें। ''हे! भावी पीढ़ी के नौजवानों अपनी मातृभाषा के रहते अन्य भाषा की गुलामी न करें। अन्य भाषा सीखना गुनाह नहीं है लेकिन गुलामी करना गुनाह है। आपको मातृभाषा संबंधी स्व. कवि केशव चन्द्र तिडुआर की महत्वपूर्ण उक्ति का स्मरण कराना चाहेंगे।

कुड़मालि माञ भाखि

सिखलं मञ दुध्अ ढकि

सेह्अ भाखि, तरा सिखा आर सिखाउहान।।

अपनी मातृभाषा से मधुर व आत्मीय दूसरी भाषा कितनी भी उन्नत क्यों न हो, नहीं हो सकती है। अतः हम अपनी मातृभाषा पर गर्व करें। जय मातृभाषा! जय झारखण्ड

जय झारखण्ड

# उपसंहार

प्रस्तुत पुस्तक में मातृभाषा की महत्ता पर यथा संभव चर्चा की गई है। विश्वस्तर की सभी मातृभाषाओं को अपना महत्व है। लेकिन अपनी मातृभाषा को सुरक्षित और मर्यादित करना मातृभाषा संबंधी कबिलाओं और गोष्ठियों का दायित्व है, इस विषय पर भी ध्यान केन्द्रित करना, कराना इस पुस्तक का अभीष्ट है। हमारे झारखण्ड में मातृभाषा चेतना जागृत तो हुई है लेकिन इसको और गति प्रदान करने की आवश्यकता है साथ में व्यापक रूप देने की भी। जन जन को हमारे यहां मातृभाषा पर गर्व हो और अपने स्तर पर हर कोई इसका प्रयोग करे। हमारा विचार है माँ के समान ही मातृभाषा है। अतः यह कर्कश हो, श्रुतिकटु हो या कुछ भी हो यह हमारी अपनी माँ की दी हुई भाषा है। अतः हमारा कर्त्तव्य है हम इसे स्थापित कर इसे मधुर बनायें। हम इस आशा में बैठें कि कोई हमारी मातृभाषा का सम्मान करेगा तब ही हम मातृभाषा उत्थान की बात करेंगे। हमारी जमीन पर हमारी मातृभाषा को रानी महारानी का दर्जा प्राप्त हो इसी दिशा की ओर हमारे कदम बढ़े। यही हमारी मंशा है।

पुस्तक के प्रथम अध्याय में भाषा की उत्पति तथा आध्यात्मिक व्याख्या की बात हुई है। आत्मिक स्तर मानसिक स्तर से सूक्ष्म है। अतः भावना या भाव की उत्पति आत्मिक स्तर से मानी ही जा सकती है। आँख मूंद कर आत्मिक पक्ष को नकारना सिर्फ तर्क का विषय हो सकता है यथार्थ का नहीं।

द्वितीय अध्याय में मातृभाषा की चर्चा है तथा कबिलाई मातृभाषा के स्वतंत्र धारा की बात कही गई है साथ में स्पष्ट किया गया है कि भाषाओं के निर्माण में कबिलाई मातृभाषाओं का विशिष्ट योगदान है। यह स्मरणीय है कि शिष्ट भाषाओं के मूल में यही कबिलाई भाषायें हैं साथ में यह भी सच्चाई है कि शिष्टों ने कबिलाओं से लिया है और उन्हीं की बुनियाद पर ये आज खड़ी हैं। अपनी मातृभाषा कुड़माली के स्वतंत्र धारा पर भी हमने अपने विचार रखे हैं साथ में कुड़माली साहित्य के काल विभाजन पर भी अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

तृतीय अध्याय में राजभाषा की चर्चा में तर्क प्रस्तुत किया गया है कि देश के लिए राजभाषा का होना जरूरी है तथा प्रदेश के लिए भी लेकिन

प्रदेश में एकाधिक भाषा को राजाभाषा बनाया जा सकता है क्योंकि हमारे झारखण्ड में क्षेत्र विशेष में अलग अलग कबिलाई भाषाओं का वर्चस्व है।

चतुर्थ अध्याय में नवनिर्मित झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा के लिए संघर्ष का जो दौर चला और महाजुटान का जो आयोजन हुआ उस पर विहंगम दृष्टि डाली गई है और महाजुटान का यथा संभव वर्णन अंकित किया गया है गौर तलब है कि इस दरम्यान बहुत से लेखकों ने झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा के मुद्दे पर अपने विचार प्रकट किए, कुछ ने झारखण्डी भाषाओं के पक्ष में तो कुछ ने गैर झारखण्डी भाषाओं के पक्ष में। हमने सुधि पाठकों के लिए उनके विचारों को, लेखों को परिशिष्ट में समायोजित किया है। ये विचार स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए थे, ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हमने इनका संकलन जरूरी समझा।

समय काफी आगे बढ़ गया है, समय के साथ पूरे विश्व में मातृभाषा चेतना प्रखर हुई है। आज महसूस किया जाने लगा है कि मातृभाषा का संबंध ा सृजन से है, लोकमंगल से है और सामग्रिक विकास से है। हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार गोविन्द मिश्र जिनको उनके उपन्यास ''धूल पौधों पर'' के लिए 23वें सरस्वती सम्मान के लिए चयनित किया गया उन्होंने एक साक्षात्कार में कहा–

''मैं हमेशा से यह बात मानता रहा हूँ कि सृजनात्मक साहित्य अपनी मातृभाषा में ही संभव है। आप भाषा के स्तर पर उसमें प्रयोग कर सकते हैं, नये शब्द गढ़ सकते हैं।''

गौरतलब है कि माननीय मिश्राजी स्व. हरिवंश राय बच्चन के बाद यह सम्मान पानेवाले हिन्दीभाषा के दूसरे रचनाकार हैं। दोनों में समानता यह है कि दोनों ने अंग्रेजी साहित्य में एम. ए. किया (बच्चन साहब ने पी.एच.डी. भी की) लेकिन साहित्य सृजन हिन्दी में किया। यह दृष्टांत स्पष्ट करता है कि रोजी रोटी के लिए जिस भाषा या विषय का चयन किया जाता है उसका संबंध मानसिक स्तर से है जबकि मातृभाषा का संबंध आत्मिक स्तर से। इन्होंने हिन्दी में जिस सृजन क्षमता का मिसाल पेश किया वह प्रमाणित करता है कि मातृभाषा में सृजन प्रक्रिया स्वतः स्फूर्त है। स्थानीय परिदृश्य पर गौर करते हुए हम नागपुरी के महान स्तंभ स्वनामधन्य डॉ. विसेश्वर प्रसार

केशरी साहब के जीवन में घटित घटना का भी उल्लेख करना प्रासंगिक समझते हैं। वे ''मैंने क्यों, क्या कैसे लिखा।'' विषय पर अपने निम्नलिखित उद्गार व्यक्त करते हैं :–

''मुझे न पढ़ने में रूचि थी, न लिखने की इच्छा। माँ की ममता से पढ़ने की जिद पैदा हुई। डॉक्टर बनने की तमन्ना ने गति दी लेकिन आई. एस. सी. में मेरा नामांकन न हो सका तब मेरे क्षुब्ध मन को प्रो. राम संजीवन सिंह (राँची कॉलेज) ने हिन्दी की ओर प्रेरित किया। बी.एस.सी. (ऑनर्स) में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान हासिल करने के बावजूद उन्होंने हिन्दी से एम. ए. किया था। उसमें भी वे प्रथम श्रेणी में प्रथम आए थे। उनकी कविताओं का एक संग्रह प्रकाशित था। उनका कथन था – विज्ञान पढ़कर क्या करोगे? हिन्दी पढ़ो। जिन्दगी का अर्थ समझोगे, कुछ नया कर पाओगे। यह सन 1949–50 की बात है।''

(पुरखा झारखण्डी साहित्कार और नये साक्षात्कार–संपादन वंदना टेटे से साभार)

कहने का तात्पर्य है साइंस का पठन ये दोनो जारी रखते तो साइंस के विद्वान बनते लेकिन साहित्य की ओर गति धारा के मुड़ने से इन्होंने जो मंजिल हासिल की वह शायद नहीं हो पाता। प्रो. सिंह की साहित्य साधना की विस्तृत जानकारी तो नहीं है लेकिन झारखण्डी साहित्कार अच्छी तरह जानते हैं कि माननीय केशरी साहब ने नागपुरी साहित्य भंडार को सहेजने, समेटने व संवर्द्धन में जो काम किया है वह चिर स्मरणीय रहेगा।

जहाँ तक लोक मंगल व मातृभाषा का संबंध है प्रशासनिक भाषा के तौर पर मातृभाषा के इस्तेमाल से आमजन सरकारी पॉलिसी व योजनाओं को अच्छी तरह समझेंगे और अपनी समस्याओं को भी सरकार तक अच्छी तरह पहुंचा सकेंगे।

विद्वान लोग यह भी महसूस करने लगे हैं कि प्रशासन के साथ साथ न्याय व्यवस्था में ही मातृभाषा का प्रयोग होना चाहिए। मई 2014 में हजारीबाग (झारखण्ड) में शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास एवं विश्वविद्यालय लॉ कॉलेज के संयुक्त तत्वाधान में '''विधि शिक्षा एवं न्याय व्यवस्था में भारतीय भाषा'' विषय पर प्रदेश स्तरीय सेमिनार का आयोजन किया गया। सेमिनार

का उद्घाटन बतौर मुख्य अतिथि लोकायुक्त न्यायमुर्ति अमरेश्वर प्रसाद सहाय, नेशनल लॉ युनिवर्सिटी राँची के कुलपति प्रो. वी. सी. निर्मल और विशिष्ट अतिथि, शिक्षा–संस्कृति उत्थान न्यास के राष्ट्रीय सचिव अतुल भाई कोठारी ने संयुक्त रूप से दीप जलाकर किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री सहाय ने कहा –

"पद्धति मे सुधार करते हुए भारतीय भाषा एवं मातृभाषा का प्रयोग न्याय व्यवस्था में होना चाहिए।"

यहाँ भारतीय भाषा एवं मातृभाषा दोनों की बात कही गई है जिसे व्यापक अर्थ में लिंक भाषाओं एवं क्षेत्र विशेष में प्रचलित, स्वीकृत मातृभाषाओं से समझा जा सकता है। हकीकत में यदि ऐसा हो पाएगा ये आमलोगों को खुशी होगी और प्रचलित भाषाओं में दिए गए निर्णय को दूसरों से पढ़वाने की आवश्यकता नहीं रह जायेगी।

पुस्तक में राजनीति और मातृभाषा पर भी सामान्य चर्चा हुई है जिसका निष्कर्ष है कि राजनीतिज्ञों के भरोसे मातृभाषा को स्थापित नहीं किया जा सकता है दूसरी और मातृभाषा और विकास की बात में यह कहा जा सकता है कि भाषा और संस्कृति के साथ लेने से विकास की गति में तेजी आयेगी। झारखण्ड बनने के बाद भाषा–संस्कृति के मुद्दे पर सरकार का रवैया जग जाहिर है। हमारी मंशा है, कोशिश जारी रहनी चाहिए ताकि रवैया सकारात्मक हो और आम जन भी पूर्ण सचेत हों क्योंकि भाषा संस्कृति हमारे अस्तित्व के परिचायक हैं इस संदर्भ में हमे याद रखना होगा कि हम तो मर जायेंगे लेकिन भाषा संस्कृति नहीं मरेगी। हमारे पुरखों ने कुछ किया था जिसका नतीजा है यह जो आज हमारे सामने है इसको जीवंत व सबल बनाने में हम अपने योगदान दें– यह हमारा प्रणीत कर्त्तव्य है।

आज स्थानीयता का मुद्दा प्रमुख मुद्दा बना हुआ है, लोग अपने अपने तर्क प्रस्तुत कर रहे हैं, लेकिन झारखण्डी पहचान बगैर भाषा व संस्कृति के नहीं हो सकती है। सर्वे व जमीनी दस्तावेज को आधार मानना ही उपयुक्त नहीं होगा। कट ऑफ डेट निर्धारित कर सबों को झारखण्डी करार देना अनुचित होगा। झारखण्ड में मूल झारखंडियों को ही स्थानीयता के आधार पर नौकरी में प्राथमिकता मिलनी चाहिए। शोषण और हकमारी हर जगह विरोध के

विषय रहे हैं। झारखण्ड में सामान्य आन्दोलन और भाषा आन्दोलन में भी यह विषय छाया रहा– लेकिन मुद्दा समाप्त नहीं हुआ है। हमारी एकजुटता बनी रही। द्वितीय राजभाषा आन्दोलन के दौरान जो एकजुटता प्रदर्शित की गई उसको बनाये रखना है और अंतिम मंजिल हासिल करने तक दृढ़ता के साथ खड़ा रहना होगा।

आरक्षण के मुद्दे पर मंदिरों में पुजारियों के आरक्षण पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। यहाँ जितने भी मंदिर हैं या बन रहे हैं उनमें बाहर के पंडितों के लिए जगह बना है या बन रहा है। पुस्तक में, जैन युग में यहाँ चर्चा की गई कि के पारंपरिक पुजारियों का भी कद्र था, दिगंबर जैन मंदिरों के पुजारी इन्हें ही बनवाया गया लेकिन आज उनमें ब्राम्हणों का प्रवेश हो गया है या हो रहा है मिसाल के तौर पर देवड़ी, देलबेड़ा का उदाहरण दिया जा सकता है। जैनियों/बौद्धों ने कुड़मियों को भी पुजारी बनाया यह उनकी स्थानीयता प्रेम को ही झलकाता है। हाल में प्रकाशित समाचारों में यह सुखद समाचार आया है कि मधुवन पारसनाथ मंदिर में श्वेतांबर जैनियों ने स्थानीय पाँच कुड़मी युवकों (कंचन महतो, नारायण महतो, शंकर महतो, नागेश्वर महतो, लक्ष्मी महतो) को मधुवन मंदिर में पुजारी बनाया है। स्थानीय लोगों ने इसे काफी सराहा है जबकि आदिवासी कुड़मी समाज ने जैनियों के इस कदम को युगांतकारी कदम बताया है।

पुस्तक में भाषा चेतना को प्रखर करने की भी बात कही गई है लेकिन "संघे शक्ति कलियुगे" का भी स्मरण रखना जरूरी है साथ में यह भी कि अपने अंदर फूट न पनपे इसका भी ध्यान रखना है महाजुटान का महाजुट बनाये रखने का संदेश बना रहे और नई पीढ़ी को प्रेरित करता रहे।

जय मातृभाषा! जय मातृ संस्कृति!! जय मातृभूमि!!!

लेखकद्वय

परिशिष्ट 1

# भाषा का महत्व

1. तोलस्तोय ने अपनी उपन्यास ''युद्ध और शान्ति'' में एक कल्ब की चर्चा की है। क्लब की स्थापना इस उद्देश्य से की गई थी कि उसके सदस्य रूसी बोलें, जो रूसी न बोले वह जुर्माना दे। यह संस्था राष्ट्रीयता के आवेश में तब की गई थी तब नेपोलियन मास्को के निकट पहुंच गया था। एक महिला सदस्य बीच में फ्रांसीसी बोलने लगती हैं फिर भूल सुधार कर कहती है आखिर इस बात को रूसी में केसे व्यक्त करें! रूस के अभिजात वर्ग की यह फ्रांसीसी भक्ति भारत के बहुत से नौकरी पेशा भद्रजनों की अंग्रेजी भक्ति से तुलनीय है। समाजवादी क्रान्ति ने यह विदेशी भाषा भक्ति खत्म कर दीं।

2. भाषा समस्या गरीब वर्ग, तमाम श्रमिक वर्ग और प्रगतिशील बुद्धिजीवियों के लिए महत्वपूर्ण है। लेनिन के शब्दों में ''भाषा मानवीय सम्पर्क का सबसे महत्वपूर्ण साधन है।

3. जातीय समस्या और भाषा–समस्या में गहरा संबंध है, किसी जाति के सामाजिक विकास तथा उस विकास के सांस्कृतिक प्रतिबिम्ब में गहरा संबंध है। यह सांस्कृतिक विकास को भी प्रभावित करता हैं।

4. भाषा जनता के लिए है जनता भाषा के लिए नहीं है। भारत में जनता की आवश्यकताओं को देखकर भाषा समस्या हल नहीं की जाती।

5. यदि समृद्धि के बल पर कोई भाषा अंग्रेजी की तरह 'विश्व–भाषा' बनती तो पाणिनी और कालिदास की भाषा मृत भाषा न कहलाती।

6. भारत प्रेमी ऐनी बेसेंट का अंग्रेजी के विरूद्ध कथन (इंडिया : बाउण्ड और फ्री में) ' जब मैकाले ने अंग्रेजी शिक्षा पर जोर दिया था, तब भारत के महान साहित्य को घृणा की दृष्टि से देख रहा था, उसने यह अनुभव किया था कि अंग्रेजी शिक्षा पर जोर देकर वह विशाल जनता को अज्ञान के हवाले कर रहा था। रोटी के बदले वह पत्थर दे रहा था। लड़के शिक्षा पाते थे और अपने देश के श्रेष्ट कृतियों से अपरिचित रहते थे।

वे अंग्रेजी में वक्तृता झाड़ सकते थे, अपनी मातृभाषा में नहीं।

*भारत के संदर्भ में ऐनी बेसेंट का कथन जितना युक्तिपूर्ण तब था, उतना आज भी है।*

7. 1909 में गाँधीजी ने लिखा था – 'क्या वे लोग जो अपनी मातृभाषा का अपमान करते हैं, कभी देश का भला कर सकते हैं?

8. 'अपनी भाषा और साहित्य को ही श्रेष्ट समझना और दूसरों की भाषा और साहित्य को हीन समझना मूर्खता है।

9. राष्ट्रभाषा केवल रइसों और अमीरों की भाषा नहीं हो सकती। उसे किसानों और मजदूरों की भाषा बनना पड़ेगा।

10. राष्ट्रों की तरह भाषा का विकास भी जन–तांत्रिक आधार पर होता है, जनता की उपेक्षा करके फासिज्म को आधार बनाने पर राष्ट्र की तरह भाषा का भी सत्यानाश होना अनिवार्य है।

11. संविधान सभा की बहस में श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने कहा था – 'भारतीय संविधान में एक धारा बना देने से आप सब लोगों को बाध्य नहीं कर सकते कि वे एक ही भाषा को स्वीकार कर ले।

12. पंडित जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में 'क्षेत्रीय भाषाओं के अधिकार क्षेत्र की सीमाओं का जरा भी उल्लंघन किये बिना हमारे लिए आवश्यक है कि अखिल भारतीय व्यवहार की एक सामान्य भाषा हो। हम करोड़ों लोगों को एक विदेशी भाषा द्वारा शिक्षित नहीं सकते।

13. राज्य सत्ता जनता के लिए है, जनता राज्यसत्ता के लिए नहीं है। यह युग जनतंत्र का है, शासनतंत्र जनता के उत्पीड़न का तंत्र न होकर उनकी सेवा का माध्यम बनेगा। शासनतंत्र में जनता अपनी भाषाओं द्वारा राज्य एवं केन्द्रीय राजकाज में भाग ले सकती है। हिन्दी, क्षेत्रीय एवं जनजातीय भाषाओं का भविष्य उज्जवल होगा।

14. हमारी भाषा राष्ट्रीय चेतना की प्रतीक है। गुलाम देशों की यह मनोवृति रही है कि वे विदेशी संस्कृति और भाषा को जल्दी अपना लेते हैं क्योंकि उनका अपना सामाजिक जीवन नहीं के बराबर होता है।

15. जिस भाषा को देश की जनता का एक प्रतिशत भाग समझता है, उससे विशाल जनता की सेवा कैसे हो सकती है?

16. राष्ट्रीय गौरव की भावना के बिना भावात्मक एकता की कल्पना नहीं की जा सकती। जिस राष्ट्र की अपनी भाषा न हो, जो राष्ट्र भाषा के पद पर एक विदेशी भाषा को बिठाये हो, उसके नागरिकों को राष्ट्रीय गौरव की भावना कैसे मजबूत हो सकती है?

17. अंग्रेजी की वास्तविक साम्राज्यवादी स्थिति को जो लोग कल्पित हिन्दी साम्राज्यवाद से जनता को आतंकित करते हैं, वे राष्ट्रीय एकता दृष्ट करने के बदले राष्ट्रीय विघटन को जबरदस्त प्रोत्साहन देते हैं।

18. जो लोग अपनी मातृभाषा से प्रेम करते हैं, उनकी मातृभाषा चाहे हिन्दी हो, चाहे कोई अहिन्दी भाषा, उनका कर्त्तव्य है कि प्रदेशों में अंग्रेजी की जगह वहां की प्रादेशिक भाषाओं को प्रतिष्ठित करें और केन्द्रीय भाषा के रूप में अंग्रेजी की जगह हिन्दी का व्यवहार करें।

19. रूस में क्रान्ति के पूर्व वहाँ के शिक्षित और धनी वर्गों में फ्रेंच भाषा का बोलबाला था। रूसी भाषा को लोग गँवारू और अर्थगाम्भीर्य से हीन समझते थे। (जैसा आज झारखण्डी भाषाओं के प्रति झारखण्ड के शिक्षित वर्ग का भावना है) रूस के साहित्यिक इस कुत्सित मनोवृति के सामने सिर झुका देते तो आज रूसी साहित्य कहाँ होता?

20. क्या वर्त्तमान–काल में कोई ऐसा देश है जो स्वाधीन होते हुए भी अपनी भाषा छोड़कर विदेशी भाषा का व्यवहार करता हो? स्वाधीन देशों में इस बात को लेकर पंचायत नहीं जुड़ती कि विश्व की सबसे समृद्ध भाषा कौन सी है, देश की भाषा को हटाकर उसके बदले विश्व भाषा का व्यवहार कब तक किया जाय?

*(साभार : भारत की भाषा समस्याएँ, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, न्यू दिल्ली)*

" इसी तरह, जो झारखण्ड की जलवायु में पला है, उसे झारखण्ड की भाषा और संस्कृति अपनानी होगी, झारखण्डी भाषाओं को गैर झारखण्डी और अभारतीय ढाँचे में ढालने की चेष्ट पुरानी साम्राज्यवादी

मनोवृति का एक अवशिष्ट चिन्ह है, हम उससे समझौता नहीं कर सकते। हम झारखण्ड भूमि से अन्न जल हवा ग्रहण करते हैं, उसी तरह झारखण्डी भाषा से भी। जब हम झारखण्ड से प्रेम करना सीखेंगे, तब यहां की भाषा से भी प्रेम करेंगे। झारखण्ड से प्रेम और भाषा–संस्कृति से प्रेम दो अलग वस्तुएं नहीं, एक हैं

झारखण्ड में, हमारे शिक्षित वर्ग एवं राजनीतिज्ञ झारखण्डी भाषा साहित्य से बेखबर से हैं, थोड़ी सी अंग्रेजी बोलने एवं लिखने की सामर्थ्य होते ही झारखण्डी भाषाओं को तुच्छ और ग्रामीणों की भाषा समझने लगते हैं। तब यह कैसे आशा की जा सकती है कि झारखण्डी भाषाओं में ऊँचे दर्जे के साहित्य का निर्माण हो?''

लेखकद्वय

परिशिष्ट –2

# अध्याय 5

1. प्राथमिक विद्यालयों में मातृभाषा से पढ़ाई की जोरदार वकालत क्यों? सुनील मिंज, प्रभात खबर 7 अप्रैल 1999
2. गैर झारखण्डी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देना उचित नहीं (अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद की बैठक) दैनिक भास्कर– 12 सितम्बर 2011)
3. मूलवासी कौन और उनकी भाषाएं क्या? रंजीत मल्लिक – 7 सितम्बर 2011, प्रभात खबर
4. प्रमुख नौ भाषा बने द्वितीय राजभाषा– प्रभात खबर 29–4–11, अश्विनी कुमार पंकज
5. ग्रेटर झारखण्ड और हमारी शहादतों से जुड़ा है– भाषा का सवाल, प्रभात खबर, अश्विनी कुमार पंकज, 28 अप्रैल 11
6. जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं को दो राजभाषा का दर्जा, प्रभात खबर 28–4–11
7. जोरशोर से उठने लगी, झारखण्डी भाषाओं को राजभाषा बनाने की मांग, दैनिक भाास्कर 28–4–11
8. द्वितीय राजभाषा के मुद्दे पर बंटा पक्ष– प्रभात खबर 4–9–11
9. द्वितीय राजभाषा को लेकर एस. टी. छात्र नाराज – प्रभात खबर 4–9–11
10. बंगला उड़िया रानी, फिर क्यों बनें सौत? प्रभात खबर, 16–9–2011
11. गैर झारखण्डी भाषाओं का औचित्य क्या? डॉ वी पी केशरी, प्रभात खबर 5–9–11
12. सभी 9 झारखण्डी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा घोषित करो
13. झारखण्ड आन्दोलन का प्राण रही है– हमारी मातृभाषाएं– प्रभात खबर 18–2–12
14. गौरवपूर्ण है अपनी मातृभाषा– प्रभात खबर 18–2–12

अन्तर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस – प्रभात खबर, 21.2.12

15. 9 जनजातीय भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा– दैनिक भास्कर– 31–8–11
16. 11 और भाषाएं बनी द्वितीय राजभाषा– प्रभात खबर 31 अगस्त 2011
17. आदिवासी कुड़मी समाज का स्मार पत्र 25.8.11

## 1. प्राथमिक विद्यालयों में मातृभाषा के माध्यम से पढ़ाई की जोरदार वकालत क्यों? – सुनील मिंज

आपको लग रहा होगा कि प्राथमिक विद्यालयों में मातृभाषा के माध्यम से पढ़ाई की इतनी जोरदार वकालत क्यों की जा रही है? प्राथमिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होता है, मातृभाषा के माध्यम से मौखिक और लिखित रूप से अपने विचारों एवं मनोभावनाओं का दूसरे तक प्रेषण करना तथा दूसरों के अभिव्यक्त विचारों और मानोभावनाओं को समझने की क्षमता का विकास करना। दैनिक जीवन में आनेवाली व्यवहारिक समस्याओं के समाधान हेतु आवश्यक गणित की मौखिक क्रियाओं का अभ्यास, स्वच्छ जीवन एवं सफाई के आदर्शों का अभ्यास, प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति जागरूकता, सामुदायिक हित के लिए सहयोग की भावनाओं का विकास, सहिष्णुता, ईमानदारी, दयालुता जैसे मानवीय गुणों का विकास, यह शिक्षा मातृभाषा में ही दी जा सकती है, दूसरी भाषा में पढ़ाई होने से शिक्षकों और बच्चों में आत्मीय संवाद नहीं हो पाते हैं।

यह वैज्ञानिक तथ्य है कि कि कम से कम समय से साक्षर होने के लिए, ज्ञानार्जन का प्रारंभिक द्वार खोलने के लिए मातृभाषा माध्यम का उपयोग सबसे कारगर साबित होता है। सभी लोग अपने घरो के सारे क्रियाकलाप अपनी मातृभाषा में बोलते हैं, लेकिन जब वे स्कूल जाते हैं, तो उन्हें हिंन्दी माध्यम में पढ़ना पड़ता है, जिस कारण शिक्षक की बात नहीं समझ पाते हैं, हिंदी में वे शिक्षक से बात भी नहीं कर सकते। धीरे धीरे ये बच्चे शिक्षक और स्कूल से दूर होते जाते हैं। नतीजतन 65 फीसदी बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं सरकार भी जानती है कि आदिवासी भाषाएं सृष्टि की प्रारंभिक मूल भाषाएं हैं, जिनका प्रयोग अगर बचपन में नहीं किया जाये,तो बाद में उन्हें सीख पाना असंभव हो जाता है। इस तरह जो बच्चे बचपन में ही मातृभाषा नहीं सीख पाते हैं, उनके लिए भाषा की मृत्यु हो जाती है, किसी

विद्वान ने ठीक ही कहा है कि अगर किसी जाति को समाप्त करना है, तो उसकी भाषा को खत्म कर दो और यही यहां की सरकारें कर रही हैं। मातृभाषा का प्रयोग करनेवालों में हीनता की भावनाएं भरी जा रही हैं। झारखंडवासियों को अपनी मातृभाषा को भूला कर या इससे दूर रख कर उन पर प्रभुत्व जमाने का प्रयास हुआ है, अतः आदिवासी भाषाएं लुप्त होती जा रही हैं, और जनसाधारण भी इनका प्रयोग करने में हिचक रहे हैं, जनमानस के मन में यह बात भर दी गयी है कि उनकी भाषा बेकार है, क्योंकि इसके माध्यम से नौकरी नहीं मिलती। गैर झारखण्डी लोग यहां की मातृभाषा को हेय दृष्टि से देखते हैं वे मातृभाषाएं संचार माध्यमों द्वारा भी अपेक्षित हैं।

आजादी के बाद 14 भाषाओं को मान्यता मिली। इन भाषाओं को बोलनेवाले लोग भी नहीं चाहते हैं कि स्कूलों में आदिवासी भाषा के माध्यम से पढ़ाई हो, क्योंकि झारखण्ड बनने से विश्वविद्यालयों में पढ़ायी जानेवाली भाषाओं को मान्यता देनी पड़ेगी। ये भाषा–भाषी लोग बंगाल, ओड़िशा और मध्यप्रदेश के कुछ जिलों में है। ये लोग वहां भी अपनी भाषा को राजकीय भाषा के रूप में मान्यता दिलाने का संघर्ष कर सकते हैं। भाषा की मान्यता होने के बाद ये लोग वहां एक छोटे राष्ट्र की मांग भी कर सकते हैं। यह डर हमेशा उन 14 मान्यताप्राप्त भाषावाले राज्यों को होता है। जैसे हाल ही में संघर्ष के बाद गोरखाली को पश्चिम बंगाल में द्वितीय राजभाषा के रूप में मान्यता मिली। संथाली आदिवासी भी वहां बहुत बड़ी संख्या में रहते हैं। झारखण्ड में यदि इनकी भाषा को मान्यता मिलती है तो ये लोग पश्चिम बंगाल में भी इसे मान्यता दिलाने की आवाज उठा सकते हैं। इसलिए राजभाषा हमेशा ही मातृभाषा को दबाती है, क्योंकि राजा को मालूम है कि यदि उसे राज करना है तो समुदाय की भाषा और क्षेत्र की मान्यता की मांग को येन केन प्रकारेण कुचलना है, क्योंकि किसी राष्ट्र के निर्माण के ये ही दो मुख्य कारक हैं।

मसलन, बीरू महाराज (नागवंशी राजा) ने उरांवों पर अपनी भाषा बोलने पर रोक लगा दिया था। वहां राजा की भाषा नागपुरी बोलना अनिवार्य था, इसलिए बीरू क्षेत्र के लोग आज भी अपनी भाषा कुड़ुख नहीं जानते हैं। सुतियांबे (आज का पिठौरिया) की भी यही कहानी है, क्योंकि वहां भी नागवंशी राजाओं का राज था, वहां के मुंडा आज भी मुंडारी भाषा नहीं जानते हैं।

## विकास कम और दोहन अधिक हुआ है आदिवासी क्षेत्रों का

झारखण्ड की औपनिवेशिक दोहन की कहानी बहुत पुरानी है। आदिवासी क्षेत्रों का विकास कम और दोहन अधिक हुआ है। इसकी औपनिवेशिकता की जड़ को मजबूत रखने के लिए पुरस्कार के रूप में भ्रष्टाचार की खुली छुट दी गयी है। शिक्षा विभाग भी इससे अक्षुता नहीं है।

पिछले 50 वर्षों में झारखण्ड का शिक्षा विभाग गैर आदिवासियों के लिए जीवन यापन का साधन बन गया है। शिक्षा जगत में व्याप्त इस औपनिवेशिक चरित्र को समझने के लिए एक उदाहरण काफी होगा। यह ज्वलंत उदाहरण है। मातृभाषा में पढ़ाई का। हरेक आदमी को अपनी मातृभाषा का संरक्षण करने, अपनी लिपि और संस्कृति का संरक्षण करने का मौलिक अधिकार है। (भारतीय संविधान की धारा 29) प्राथमिक स्तर पर बच्चों की शिक्षा–दीक्षा अपनी मातृभाषा में हो। इन संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद झारखण्ड क्षेत्र के प्राथमिक स्कूलों में मातृभाषा के माध्यम से पढ़ाई की शुरूआत नहीं की गयी। आंकड़ों के आधार पर 11,472 गांवों में 50 फीसदी से भी ज्यादा आदिवासी बहुल गांव हैं। सरकारी आदेश 53/56 में कहा गया था कि विद्यालय में 10 से अधिक मातृभाषा पढ़ने वाले छात्र रहेंगे तो एक शिक्षक व्यवस्था की जायेगी। उसी प्रकार जिस गांव में 25 फीसदी से अधिक आबादी आदिवासियों की हो, तो आदिवासी भाषा की पढ़ाई होनी चाहिए, लेकिन ऐसा नहीं हुआ, बिहार में अल्प फीसदी में रहनेवालों के लिए हिंदी, बांग्ला, उड़िया, उर्दू और मैथिली मातृभाषा के रूप में पढ़ाई जाती है। लेकिन झारखण्ड में एक ही सरकारी संकल्प संख्या 645 इ आर, दिनांक 10 मार्च 1965 में स्वीकृत होने पर भी कुड़ुख, संथाली, हो और मुंडारी को मातृभाषा के रूप में पढ़ाने से रोकी गयी है। यह संविधान प्रदत्त समानता का अधिकार का खुला उल्लंघन है। झारखण्ड में मातृभाषा के माध्यम से पढ़ाई का संवैधानिक अधिकार होने के बावजूद इस पर कार्रवाई क्यों नहीं हो पा रही है? यह एक अहम बात है, पीएनएस सुरीन ने इसे एक राजनीतिक षडयंत्र कहा। उन्होंने कहा कि बिहार सरकार तथा उसी शिक्षा विभाग ने संविधान के प्रावधानों को ताख पर रख कर उत्तर एवं मध्य बिहार के हिंदी भाषा भाषी शिक्षक शिक्षिकाओं तथा शिक्षा विभाग के पदाधिकारियों के लिए झारखण्ड क्षेत्र में हिन्दी को रोजी रोटी का साधन बना रखा है। रांची

विश्वविद्यालय, राँची के जनजातीय भाषा विभाग के अध्यक्ष, डॉ रामदयाल मुंडा, शिक्षा विभाग में गैर झारखण्डी सत्ता का औपनिवेशिक स्वार्थ पर प्रकाश डालते हैं। डॉ मुंडा बिहार सरकार के शिक्षा विभाग के आंकड़े का हवाला देते हुए बताते हैं कि झारखण्ड क्षेत्र में 16,136 प्राथमिक विद्यालय, 4031 मध्य विद्यालय हैं। अगर इन सभी विद्यालयों में मातृभाषा की पढ़ाई होती तो केवल प्राथमिक विद्यालय में ही कम से कम 40,000 झारखण्डी मातृभाषा के शिक्षक होते, उनकी राजनीतिक हैसियत भी होती, लेकिन दुर्भाग्यवश अपनी भाषा में एम ए पढ़ा हुआ व्यक्ति रिक्श चला रहा है। ग्रेजुएट लड़कियां दाई का काम कर रही हैं। साभार– प्रभात खबर 7 अप्रेल 1999

## 2. गैर झारखण्डी भाषाओं को द्वितीय भाषा का दर्जा देना उचित नहीं

### अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद की बैठक

अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद की बैठक में गैर झारखण्डी भाषा को राज्य का द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने का विरोध किया गया। सदस्यों ने कहा कि बांग्ला और ओड़िया पड़ोसी राज्य की राज्यभाषा है, फिर यहां उन्हें द्वितीय राजभाषा का दर्जा देना क्यों जरूरी है। सरकार अपने निर्णय से पीछे नहीं हटी, तो आन्दोलन चलाया जाएगा। मौके पर सिदो हेम्ब्रम, वंदना टेटे, राम विलास करमाली, राजनील तिग्गा, विनय हेम्ब्रम, महेश्वर कोरवा, जोसेफ टोपनो, सुशीला लकड़ा, शंकर हेम्ब्रम, विनय परहिया, जादू पाहन, गंगाधर लाल भगत, योगो पूर्ति, विजय हांसदा समेत अन्य जिलों के प्रतिनिधि शामिल थे।

ये मांगें उठीं

जनजातीय भाषा के शिक्षकों को नियुक्ति की तिथि से पेंशन दें।

आदिवासियों की हड़पी गई जमीन के वापसी की व्यवस्था करें।

आदिवासी राज्य में जमीन खरीदने के लिए विशेष नियम बनायें।

मेडिकल कॉलेजों में आदिवासी छात्रों का नामांकन हो।

एस ए आर कोर्ट में कंपनसेशन की व्यवस्था हटाई जाय।

सरकार दूसरे राज्य की भाषा को मान्यता देने की निर्णय से नहीं हटी तो आन्दोलन चलाया जाएगा।

साभार– दैनिक भास्कर, 12 सितम्बर 2011

## 3. मूलवासी कौन और उनकी भाषाएं क्या?

रंजीत मल्लिक

बीपी केसरी जी की तरह मुझे भी मूलवासी की चिंता है। मगर ये मूलवासी कौन हैं? 99 प्रतिशत झारखण्डी 1932 को आधार मानेंगे। मैं भी मानता हूं कि जिनका खतियान नहीं है, उसके बारे में, उस जगह के पांच लोगों से पूछताछ की जा सकती है, आदिवासी होने से ही कोई झारखण्डी नहीं हो जाता है। आदिवासी भी विभिन्न प्रदेशों के मूलवासी हैं।

अब ये मूलवासी अपने घर–परिवार समाज और बाजार में जो भाषाएं बोलते हैं। ये उनकी मूलभाषा है। बांग्ला और ओड़िया भी झारखण्ड के मूलवासियों की भाषा है। बांग्ला और ओड़िया उन लोगों की भाषा है, जिनका मूल निवास पश्चिम बंगाल और उड़ीसा है। मैं इन लोगों की बात नहीं कर रहा हूं। केसरी जी कहते हैं कि इन भाषाओं को शामिल करने पर विवाद पैदा हो सकता है। बांग्ला को द्वितीय राजभाषा नहीं बनाने पर विवाद पैदा हो सकता है। याद करें, राज्य गठन के शुरूआती दिनों में बांग्ला को ही सिर्फ द्वितीय राजभाषा के रूप में शामिल करने की मांग की जाती रही थी, क्योंकि हिंदी के बाद सबसे अधिक बंग्ला बोलने वालों की ही जनसंख्या है। बांग्ला के समकक्ष सिर्फ संताली है। नियमतः बांग्ला और संताली ही द्वितीय राजभाषा होनी चाहिए। दिल्ली की तरह, जैसे वहां पंजाबी और उर्दू हैं।

केसरी जी के अनुसार, बांग्ला व ओड़िया को शामिल करने से अन्य प्रवासी भाषा वाले भी मांग करने लगेंगे कि उनकी भाषा को भी शामिल किया जाये। वस्तुतः यह मांग इसलिए है कि झारखण्ड में द्वितीय भाषा के रूप में एक दो नहीं 12 भाषाओं को शामिल किया गया है। बांग्ला तो नियमतः झारखण्ड की राजभाषा में शामिल होनी चाहिए।

सूर्य सिंह बेसरा, शैलेन्द्र महतो के बयान में आकर दिग्भ्रमित हो गये हैं। खुद बेसरा जी अपने क्षेत्र के लोगों से बांग्ला में बात करते हैं। शैलेन्द्र

जी का बयान था कि सिंहभूम और विभिन्न बांग्ला भाषी क्षेत्र में बांग्ला नहीं, कुरमाली बोली जाती है। तब से ही विवाद पैदा हुआ है।

दरअसल, मानभूमि वह बंग्ला सिंहभूमि बांग्ला है। एक उदाहरण से इसे समझा जा सकता है।

मर ठिन चाइर गअ पांठा आहे (कुरमाली)

आमार ठिने चाइर टा पांठा आछे (बंगला)

मेरे पास चार बकरा है (हिन्दी)

अब मैं सिंहभूम में बांग्ला बोलने वाले मूलवासी कुड़मी सहित अन्य से पूछना चाहता हूं कि वे कौन सी भाषा बोलते हैं? बांग्ला क्षेत्रीय भाषा होने के कारण कुड़मी के अंगद महतो ने आमरा बंगाली नामक पार्टी बनायी है। केसरी जी को स्पष्ट करने के लिए मैं बांग्ला भाषी बहुसंख्यक जातिमंडल का कुछ उदाहरण दे सकता हूं, जैसे बाउरी, भुइयां, चौधरी, परमाणिक, सिंह, मिश्रा, दुबे (बोकारो) दत्ता, डे, घोष, मोदक, महतो (जो बंग्लाभाषी हैं) नायक, महथा, राय, मल्लिक, ठाकुर और सरनेम जिसका लिस्ट मैं उल्लेख नहीं कर रहा हूं। वह लिस्ट काफी लंबा है, महतो, जाति में सुनील महतो का उदाहरण लिया जा सकता है। जिन्होने सांसद बनने पर बंग्ला में शपथ ली थी। बांग्ला भाषियों का झारखण्ड आन्दोलन में जनसमर्थन मिलने की बात को ठीक से समझने की जरूरत है। राँची प्रमंडल में मूलवासी (नागपुरी भाषा) का समर्थन मिला था। जब तक यह नहीं मिला, तब तक यह आदिवासी आन्दोलन था।

जिन स्वतंत्रता सेनानी का केसरी जी ने उल्लेख किया है, उनमें सिद्धू कानू, सिंग राय–बिंद मानकी की द्वितीय भाषा बांग्ला ही थी, भले घर पर दूसरी भाषा बोलते हों, पर बाहर बांगला बोलते थे। वे हिंदी अच्छी तरह से बोल नहीं पाते थे। रघुनाथ महतो की भाषा तो बांगला ही थी, इन्होंने अंगरेजों से लड़ाई की थी, न कि झारखण्ड राज्य के लिए लड़ा था।

अलग राज्य के लिए लड़नेवाले बांग्लाभाषियों की लंबी लिस्ट है। समरेश सिंह, सूरज मंडल, सूनील महतो, संजय बसु मल्लिक, एके राय, गुरूदास चटर्जी, निर्मल महतो, दुलाल भुइयां, समी महंती, मनीन्द्र नाथ मंडल, काजल दत्ता, चंदन बागची, शैलेन्द्र महतो (जो अभी नहीं मान रहे हैं) शिबू

सोरेन, अर्जुन मुंडा, सूर्य सिंह बेसरा आदि। औरों का उल्लेख संभव नहीं है। कुछ लोगों के अनुसार संताल विद्रोह, बंगाली महाजन के विरूद्ध था। बाद में अंग्रेजों के खिलाफ हुआ। बंगाली महाजन से आम बंगलाभाषियों का क्या मेल है? वे महाजन गिनती भर थे। मगर आम बंगलाभाषी बहुतायत में हैं, किसी जुल्म का दोष सारे समुदाय को देना कहां तक उचित है?

उर्दू के सवाल पर केसरी जी ने यह बोल कर पल्ला झाड़ लिया कि वह हिंदी की बहन है। केसरी जी बांगला तो संस्कृत के बहुत करीब है। ग्रेटर झारखण्ड में तो तीन चार वर्ग की नौकरी तो वहां के मूल वासियों का होना चाहिए। बंगला के विरूद्ध बयान देकर यशवंत सिन्हा चुनाव हार चुके थे। उमाकांत रजक को बंगला के विरोध में जबाब मिलेगा। सरकार को झारखण्डी हित में कुछ फैसला लेना चाहिए। जब तक आम बांगलाभाषी, बांग्ला लिपि नहीं सीख लेते हैं, तब तक देवनागरी लिपि में ही इसे परोसा जा सकता है। बिहार के समय से बांग्ला लिपि में रोजगार नहीं रहने के कारण अधिसंख्य बांग्लाभाषियों ने लिपि सीखना छोड़ दिया था।

अभी भी प्राथमिक शिक्षक नियुक्ति में बोकारो, धनबाद, गिरिडीह में बांगला नहीं है। कारण वहां के राजनेताओं ने राजभाषा विभाग में पत्राचार करना जरूरी नहीं समझा। शैलेन्द्र महतो की तरह।

साभार : प्रभात खबर, 7 सितम्बर 2011

## 4. प्रमुख नौ भाषा बने द्वितीय राजभाषा

### अश्विनी कुमार पंकज

जहाँ तक बात संख्या की है, तो यह समझना चाहिए कि सांस्कृतिक अर्थों में इसका विशेष महत्व नहीं है किसी भी जनसंख्या को उसके नैसर्गिक, प्राकृतिक और ऐतिहासिक रहन – सहन के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। आजीवका एंव अन्य कारणों से इंसानी समुदाय इधर–उधर जाते रहते है लाखों की संख्या में हिंदुस्तानी लंदन, न्यूयार्क,कनाडा में बसे है। संख्या बल के आधार पर क्या वे वहां भी बंगाली, पंजाबी, गुजराती, हिंदी को शासकीय भाषा बनाने की मांग कर रहे हैं? विचारणीय है कि देश के दिल्ली (208414,) छत्तीसगढ. (208669) बिहार (443426,) ओड़िसा ( 490857) और महाराष्ट

(310137) में बंगभाषियों की संख्या दो लाख से पर है। क्या इन सभी राज्यों में बांग्ला को द्वितीय राजभाषा बना दिया गया है? इसी तरह ओड़िया भाषियों की पर्याप्त संख्या असम (231474 )छत्तीसगढ़ 819098, पश्चिम बंगाल 186391 और आंध्रप्रदेश (336022) में है। परंतु इन राज्यों मे उड़िया को द्वितीय राजभाषा का दर्जा नहीं प्राप्त हैं। यही नहीं, असम में बंगभाषियों की संख्या 7343338 है, फिर भी वहां मात्र तीन जिलों में ही बांग्ला को मान्यता दी गयी है, संपूर्ण राज्य में नहीं, इसी तरह से पश्चिम बंगाल में हिंदी की भाषायी जनसंख्या 5747099, नेपाली की 1022775, संताली की 2247113, तेलुगु की 208769 और उर्दू की 1653739 है, लेकिन यहां भी इन भाषाओं को राजकीय मान्यता नहीं है। औपनिवेशिक गुलामी की भाषा अंगरेजी को लेकर जरूर यहां राजभाषा का दर्जा मिला हुआ है। इसके बाद सिर्फ नेपाली ही दार्जिलिंग जिले में राजकाज की भाषा घोषित की गयी है। अगर बांग्ला और ओड़िया अपने गृह राज्यों में अन्य किसी भाषा को तो छोड़ दीजिए, राजभाषा हिंदी को भी राजकीय भाषा के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है, फिर किस मुंह से वे सिर्फ और सिर्फ झारखंड में राजभाषा बनने के लिए तत्पर है। इनका जोर दिल्ली, बिहार और महाराष्ट में क्यों नहीं चलता? सदियों से लूट और दोहन –शोषण का शिकार रहे और सह अस्तित्व में विश्वास करनेवाला झारखंड ही क्यों सभी के निशाने पर है? यही नहीं, बंगाल और असम दोनों ही राज्यों चाय बागान क्षेत्रों मे पीढ़ियों से रहनेवाले झारखंडी आदिवासियों को आदिवासी का संवैधानिक दर्जा देने को राजी नहीं हैं। पश्चिम बंगाल के तराई और डूवार्स के इलाकों में अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद हिंदी और आदिवासी भाषाओं में पढ़ाई तथा संवैध ाानिक स्टेट्स के लिए लगातार आंदोलनरत है, पर पश्चिम बंगाल सरकार बहरी बनी हुई है। वैसे, आकंडों का खेल बड़ा दिलचस्प है अभी 20 अप्रैल को अर्जुन मुंडा सरकार द्वारा द्वितीय राजभाषा के मुद्दे पर बुलायी गयी सर्वदलीय बैठक में राज्य में बोली जाने वाली जिन 87 भाषाओं की सूची वितरित की गयी है, उनमें असुर (16596),बिरहोर (10000), खोरठा (472597), नागपुरी व सादरी (1242586,2044776), पंचपरगनिया (1937699) कुरमाली (368853) आदि भाषाओं का जिक्र ही नहीं है, इस भाषायी सूची में घासी (118947), तूरी (155130), बेदिया (83771), करमाली (56865), खरवार (192024), महली (121174), माल पहाड़िया (115093)आदि दलित एवं

आदिवासी आबादी कौन सी भाषाएं बोलते हैं का भी कोई अता– पता नहीं है। परंतु 27 ऐसी भाषाओं का जिक्र है, जिनके बोलनेवालों की संख्या राज्य में 10 से कम है। इनमें भी आठ भाषाओं को बोलने वाले मात्र एक हैं। जबकि 47लाख खोरठा, 32 लाख नागपुरी व करीब 37 लाख नागपुरी व सादरी, 19 लाख पंचपरगनिया और करीब 37 लाख कुरमाली बोलनेवाले सूची से 'गायब' हैं। जिन दो आदिवासी समुदायों से राज्य में मुख्यमंत्री हुए, उनके बोलने वालों की संख्या उनकी आबादी से ज्यादा है।राज्य मे 2001 की जनगणना के मुताबिक संतालियों आबादी 2410509 और हो लोगों की जनसंख्या 744850 है। मगर इनके भाषियों की संख्या आबादी की तुलना में 2879576 और 782078 है। वहीं मुंडा (1049767), खड़िया (164022) और उरांव (1390459) आबादी की तुलना में उनके भाषियों की संख्या कम (मुंड़ारी –860275, खड़िया –123483, कुडुख–860275)दर्शायी गयी है। लिहाजा, झारखंड को अपने साथ ही जन्मे पड़ोसी राज्य छत्तीसगढ़ से सबक लेना चाहिए जिसने नैसर्गिक रूप से छत्तीसगढ़ी को राजभाषा का दर्जा दे दिया। झारखंड सरकार और राजनीतिक पार्टियों को जानना चाहिए कि छत्तीसगढ़ में बंगभाषियों की 208669 और ओड़िया भाषियों की संख्या 819098 है इसी तर्ज पर झारखंड मे भी सभी प्रमुख नौ झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा बना देना चाहिए। साभार : प्रभात खबर 29–4–11

## 5. ग्रेटर झारखण्ड और हमारी शहादतों से जुड़ा है – भाषा का सवाल– अश्विनी कुमार पंकज

झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा के सवाल पर सरकार व राज्य के राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय दलों के बीच लगभग एकता हो गयी है। बांग्ला और संताली पर भी सहमति है। इसी के साथ नीतिगत रूप से सरकार उन भाषाओं को भी द्वितीय राजभाषा बनाने की मंशा रखती है, जिसे बोलनेवालों की संख्या एक प्रतिशत है। दिलचस्प तथ्य यह है कि राज्य सरकार ने 2001 की जनगणना का हवाला देते हुए जिन 87 भाषाओं का जिक्र किया हे, उनमें खोरठा, नागपुरी, पं परगनिया, कुड़माली आदि व्यापक रूप से प्रचलित झारखण्डी भाषाओं का उल्लेख नहीं हैं स्पष्ट है कि जिस तरह आदिवासियों मूलवासियों के राजनीतिक आर्थिक अधिकार के सवाल पर जेसे उनकी आबादी को कम कर के बताया जाता रहा है, वही खेल द्वितीय राजभाषा के

सवाल पर भी खेला जा रहा है। वही खोल द्वितीय राजभाषा के सवाल पर भी खेला जा रहा है। इस खेल का दूसरा और सबसे खतरनाक पहलू यह है कि यदि राज्य में बांग्ला और ओड़िया जेसी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा बनाया जाता है, तो न सिर्फ इससे ग्रेटर झारखण्ड की चिर आकांक्षित मांग को धक्का लगेगा, बल्कि झारखण्डी इलाकों पर बंगाल और ओड़िसा के दावे को ही हम और मजबूत करेंगे। इस अर्थ में बांग्ला ओड़िया को द्वितीय राजभाषा बनाने का फैसला झारखण्डी शहीदों और झारखण्ड आन्दोलन के साथ विश्वासघात है।

किसी भी भाषा को राज्य की द्वितीय राजभाषा बनाये जाने के लिए भारतीय संविधान में स्पष्ट दिशा निर्देश है। मुश्किल यह है कि सरकारें व राजनीतिक पार्टियां इन दिशा निर्देशों को वोट बैंक के लिए सिफ्र तकनीकि रूप में देखती हैं। जबकि यह मामला सीधे सीधे राज्य की सांस्कृतिक पहचान का है। इस अर्थ में वे भाषाएं जो राज्य की संस्कृति, साहित्य, इतिहास, परंपरा, रहन–सहन, रीति रिवाज, कला–कौशल, संगीत–नृत्य, भूगोल, वस्पतियां, ज्ञान विज्ञान आदि को पूर्णतः अभिव्यक्त करती हैं, उन्हें ही द्वितीय राजभाषा बनने का संवैधानिक और नैसर्गिक अधिकारी माना जाना चाहिए न कि उन भाषाआं को जो आजीविका व अन्य कारणों से आये लोगों के कारण राज्य में बोली जाने लगी हैं। यदि बांग्ला और ओड़िया जैसी भाषाएं झारखण्डी जनता और उसकी संस्कृति को प्रतिबिंबित करती हों, तो निश्चय ही उन्हें द्वितीय राजभाषा बना देना चाहिए। लेकिन ऐतिहासिक, मानव शास्त्रीय और सामाजिक अध्ययनों से यह तथ्य अकाट्य है कि झारखण्ड एक विशिष्ट भौगोलिक एवं सांस्कृतिक इकाई का नाम हे, यह भौगोलिक सांस्कृतिक इकाई यहां के आदिवासी व सदान समुदायों के सामूहिक संघर्ष और सृजन से निर्मित हुआ है। इस दृष्टि से राज्य के मुंडारी, संताली, हो, खड़िया, कुड़ुख, नागपुरी, पंचपरगनिया, कुड़माली, खोरठा और आदिम जनजातियों की भाषाएं ही झारखण्डी संस्कृति की वाहक हैं।

यहां हमें यह याद रखने की जरूरत है कि औपनिवेशिक शासन से पहले संपूर्ण झारखण्ड ऐतिहासिक रूप से एक अविभाज्य भौगोलिक क्षेत्र था। 1912 में इसे बिहार व बंगाल के बीच विभाजित किया गया। इसके कई हिस्सों को जबरन ओड़िसा में विलय कर दिया गया। जब 1936 में झारखण्ड

के हिस्सों को ओड़िसा में शामिल किया जा रहा था, तब सोनाराम सोरेन जैसे आदिवासी नेता के नेतृत्व में विरोध हुआ था। उसी प्रबल जन प्रतिरोध के फलस्वरूप सिंहभूम ओड़िसा में जाने से बच गया, परंतु मयूरभंज, क्योंझर और सुंदरगढ़ जिले झारखण्ड से अलग हो गय।इसी तरह से पुरूलिया, मेदिनीपुर और बांकुड़ा आज भी पश्चिम बंगाल में ही हैं ग्रेटर झारखण्ड के ये सभी जिले बंगाल के सरकारी भेदभाव और अमानवीय शोषण से जुझ रहे हैं और जब लोगों ने इसका तीव्र प्रतिकार किया, आर्थिक राजनीतिक व भाषायी सांस्कृतिक भेदभाव पर जनांदोलन खड़े किये तो लालगढ़ बनाकर मारा गये। आश्चर्य है कि झारखण्ड आंदोलन से लेकर लालगढ़ तक झारखण्ड के किसी भी बंगभाषी ने इसका विरोध नहीं किया। पश्चिम बंगाल में रहने वाले झारखंडियों, जिनमें ज्यादा संख्या संतालियों की है, के पक्ष में बंगभाषी खड़े नहीं हुए, पश्चिम बंगाल और ओड़िसा की राज्य सरकारें ग्रेटर झारखण्ड की मांग को एक सिरे से खारिज करती हैं।

इतिहास गवाह है कि शहादतों से भरे झारखण्ड आन्दोलन के ढ़ाई सौ वर्षों के इतिहास में बंगालियों और ओड़िया समुदाय की भागीदारी नहीं रही है, चाहे वह राजनीतिक संघर्ष का मैदान हो या सांस्कृतिक साहित्यिक सृजन का क्षेत्र। फिर वे झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा बनने की मांग किस नैतिकता के आधार पर कर रहे हैं? और झारखण्ड की जो राजनीतिक पार्टियां बांग्ला व ओड़िया को द्वितीय राजभाषा बनाये जाने की वकालत कर रही हैं, कया वे वोट बैंक के दबाव में यह भी नहीं समझ पा रही हैं कि बांग्ला और ओड़िया यदि झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा बनी, तो ग्रेटर झारखण्ड की मांग कमजोर होगी।

झारखण्ड के सभी राजनीतिक दलों को विशेष रूप से झारखण्डी दलों को यह गंभीरता से विचार करना होगा कि कहीं हम इन भाषाओं को स्वीकार कर धनबाद, देवघर, दुमका, पाकुड़, साहेबगंज, पूर्वी व पश्चिमी सिंहभूम, सिमडेगा आदि जिलों को भी बंगाल और ओड़िशा को देने की जमीन तो नहीं तैयार कर रहे हैं। ओड़िया और बांग्ला को झारखण्ड में मान्यता मिलने से यह सबसे बड़ा खतरा है, इस खतरे को नजरअंदाज करना झारखण्ड के राजनीतिक दलों को बहुत महंगा पड़ेगा।

साभार : प्रभात खबर 28 अप्रैल 2011

## 6. जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं को दो राजभाषा का दरजा

### बुद्धिजीवी उतरे सड़क पर

राज्य की सभी नौ जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं को द्वितीय राजभाषा बनाने की मांग को लेकर झारखण्डी कलाकार, लेखक, साहित्यकार व भाषाविदों ने अल्बर्ट एक्का चौक पर मांदर व नगाड़ा बजाया।

मौके पर अखड़ा के वृंदावन महतो व वंदना टेटे ने कहा कि हो, मुंडारी, संताली, कुडुख, खड़िया, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनिया व कुड़माली भाषाओं को द्वितीय राजभाषा बनाने की मांग लंबे समय से की जा रही है, लेकिन सरकार को इनके संरक्षण संवर्द्धन की चिंता नहीं। मांदर व नगाड़े बजा कर सरकार तक अपनी बात पहुंचाने का प्रयास किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि तमाम संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद सरकार इनके लिए कुछ भी नहीं कर रही है। यहां की भाषाओं के साथ दोयम दरजे का व्यवहार हो रहा है। इस अवसर पर डॉ शांति खलखो, रमणिका गुप्ता, ग्लैडसन डुंगडुंग, जेरोम जेराल्ड कुजूर, पुष्कर महतो, डॉ वीरेन्द्र सोय, अनिल अंशुमन, प्रो महामनी उरांव, सच्ची कुमारी, शांति सवैया, अशर्फी नंद प्रसार, सलोमी एक्का, मॉरेस किड़ो, जीतू उरांव, मानसिंह मुंडा प्रदीप बोदरा व डॉ एस. बी महतो समेत कई लोग मौजूद थे।

यह हैं मांगे

केन्द्रीय झारखण्डी भाषा साहित्य अकादमी व आदिम जनजातियों के भाषायी संरक्षण के किये निकाय गठिन लिये जायें। झारखण्डियों का सांस्कृतिक, आर्थिक विस्थापन बंद हो। त्रिभाषा फार्मूला पर शिक्षण, प्राथमिक स्तर से स्कूलों में झारखण्डी भाषाओं की पढ़ाई के लिए भाषायी शिक्षकों की नियुक्ति हो व झारखण्डी मूल्यों पर आधारित एकरूप पाठ्यक्रम लागू हो।

साभार : प्रभात खबर 28 अप्रैल 2011

## 7. झारखण्ड की भाषाओं को दूसरी राजभाषा घोषित करो

नौ आदिवासी भाषाओं के लिए विभिन्न संगठनों ने विधानसभा घेरा

इन भाषाओं का सवाल

(संथाली, हो, कुड़ुख, मुंडारी, खड़िया, पंचपरगनिया, कुड़माली, खोरठा और नागपुरी)

नगाड़ों की गूंज एवं आक्रोशपूर्ण नारों के साथ सोमवार को झारखण्डी संगठनों ने विधानसभा का घेराव किया। सांस्कृतिक संस्था अखड़ा के आह्वान पर जुटे प्रदेश के कोने कोने से आए लेखकों, कलाकारों और छात्र–युवाओं ने कहा कि किसी भी कीमत पर राजभाषा के रूप में वे बाहरी भाषा को स्वीकार नहीं करेंगे। बिरसा चौक पर हुए इस महाजुटान में विध ाायक बंधु तिर्की और गीता कोड़ा ने कहा कि क्षेत्रीय भाषा संस्कृति की उपेक्षा दुर्भाग्यजनक है। भाषा से ही झारखण्डी संस्कृति की पहचान है। द्वितीय राजभाषा बनने का हक सिर्फ झारखण्डी भाषाओं को है।

लोयला कॉलेज छात्रावास से शुरू विरोध मार्च बिरसा चौक पहुंच कर घेराव और सभा में बदल गया। इस अवसर पर वक्ताओं ने कहा कि सरकार का निर्णय राजनीतिक षड़यंत्र है। वे इस साजिश के खिलाफ लगातार लड़ेंगे। किसी दूसरे प्रदेश में बाहरी भाषा को राजभाषा का दर्जा प्राप्त नहीं हैं, फिर झारखण्ड में ऐसा क्यों? घेराव में यह ऐलान किया गया कि अगर मुंडा सरकार ने झारखण्डी भाषाओं को राजभाषा का दर्जा नहीं दिया तो उग्र आंदोलन होगा। प्रदर्शन को बी पी केशरी, दयामनी बारला, ईश्वरी प्रसाद, मुकुंद नायक, मनपूरन नायक, मधु मंसूरी हंसमुख, लाल रणविजय नाथ शाहदेव, आरती कुजूर, त्रिवेणीनाथ साहू, ग्लैडसन डुंगडुंग, गिरिधारी राम गौंझू, जेरोम जेराल्ड कुजूर, डॉ. एस. बी. महतो, सिकरादास तिर्की, श्यामसुंदर महतो, आकाश टूंटी आदि ने संबोधित किया।

साभार : दैनिक भास्कर, 28 अप्रैल 2011

## 8. द्वितीय राजभाषा के मुद्दे पर सत्ता पक्ष बंटा

## राजभाषा संशोधन विधेयक सदन में पारित

रघुवर दास ने कहा – कथनी करनी में अंतर न हो, दूसरी भाषाओं को भी मिले दर्जा

बांग्ला–ओड़िया को हटायें, तुष्टिकरण की राजनीति न हो– उमाकान्त रजक

भाषा के मुद्दे पर शनिवार को अंतिम दिन सत्ता पक्ष में सर्वसम्मत राय नहीं

बन पायी। भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा दिये जाने के मामले में सत्ता पक्ष में विवाद था। मॉनसून सत्र के अंतिम दिन सदन में अंगीकृत बिहार राजभाषा संशोधन विधेयक पेश किया गया। विपक्ष मौन था और सत्ता पक्ष के ही टकराव सामने आये।

रघुवर दास ने कहा कि झारखण्ड की भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने के लिए सरकार धन्यवाद का पात्र है। लेकिन सरकार की कथनी करनी में अंतर नहीं होना चाहिए। भोजपुरी, मैथिली, मगही और अंगिका को भी द्वितीय राजभाषा का दर्जा मिलना चाहिए। मुख्यमंत्री भी इससे सहमत होंगे। स्टीयरिंग कमेटी के अध्यक्ष शिबू सोरेन ने भी बोकारो में कहा था कि भोजपूरी मैथिली को द्वितीय राजभाषा का दर्जा दिया जाना चाहिए। आजसू के विधायक उमाकांत रजक इससे सहमत नहीं थे। उन्होंने कहा कि झारखण्ड की लड़ाई में भाषा का सवाल अहम था। यह हमारी पहचान है। अलग राज्य बनने के कुछ बुनियादी कारण हैं। बिहार से हम इन्हीं सवालों पर अलग हुए हैं। ऐसे में दूसरी भाषाओं का द्वितीय राजभाषा का दर्जा दिया जाना सही नहीं है। तुष्टिकरण की राजनीति नहीं होनी चाहिए। ओड़िया और बांग्ला को भी द्वितीय राजभाषा के दर्जा से हटायें। दूसरे राज्य अगर हमारी भाषा का सम्मान करते हैं, तो हम भी करेंगे। विष्णु भैया ने कहा कि मैथिली, अंगिका और भोजपूरी को शामिल किया जा सकता है। वहीं लोबिन हेम्ब्रोम का कहना था कि ऐसा नहीं किया जाये। जगन्नाथ महतो का कहना था कि दूसरी भाषाओं को दर्जा मिलेगा, तो फिर हमारे लोग क्या करेंगे। चर्चा में रामदास सोरेन, शशांक शेखर भोक्ता, विदेश सिंह और उमाशंकर अकेला भी शामिल हुए। साभारः प्रभात खबर 4.9.11

## 9. द्वितीय राजभाषा को लेकर एस टी छात्र नाराज

झारखण्ड मं बांग्ला और उड़िया को द्वितीय राजभाषा बनाने के सवाल पर जनजातीय छात्रों में नाराजगी है। शनिवार को मुंडा छात्र संघ, खड़िया छात्र संघ, हीरा–बरवे छात्र संघ व संताल छात्र संघ की संयुक्त बैठक संत जेवियर्स कॉलेज में हुई। इसमें झारखण्ड मे दूसरे राज्य की भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दरजा देने पर कड़ी आपत्ति जतायी गयी। बैठक फादर एफ्रेम बाअः की अध्यक्षता में हुई।

बंगाल, ओड़िया ने क्या कियाः छात्रों ने कहा कि पं. बंगाल व ओड़िशा में उरांव, मुंडा, हो, संताल व खड़िया आदिवासियों की काफी आबादी है, वहां उनकी भाषा को द्वितीय राजभाषा का दरजा देना तो दूर, उन्हें आदिवासी तक नहीं माना जाता।

बंगाली महाजनों के खिलाफ था संताल विद्रोह : 1855–56 का संताल विद्रोह बंगाली महाजनों के खिलाफ था। जब आन्दोलन तेज हुआ, तब सुरक्षा के लिए अंगरेजों से मदद मांगी गयी। इसके बाद ही संताल व अंगरेजी सेना के बीच लड़ाई हुई। बांग्ला को द्वितीय राजभाषा का दरजा देना सिदो–कान्हू, चांद–भैरव की शहादत का अपमान है।

राज्यपाल की जिम्मेवारीः वक्ताओं ने कहा कि कई दूसरे राज्य के लोग यहां रहते हैं, क्या सबकी भाषा को द्वितीय राजभाषा का दरजा मिलना चाहिए? अनुसूचित क्षेत्र में आदिवासियों की आबादी संस्कृति की सुरक्षा की जिम्मेवारी राज्यपाल की है। यदि उन्होंने संज्ञान नहीं लिया, तो आदिवासी भाषा–संस्कृति पर संकट खड़ा हो जायेगा।

साभार : प्रभात खबर 4.9.11

## 10. बांग्ला–ओड़िया रानी, फिर क्यों बनें सौत? – गिरिधारी राम गौंझू 'गिरिराज'

मातृभाषा रानी, राष्ट्रभाषा हिंदी महारानी और अंगरेजी नौकरानी है यहीं कहा था बाब ाबुल्के ने शिक्षा का अधिकार अप्रैल 2010 से लागू हो गया है प्राथमिक स्तर पर हर 30 बच्चे पर मातृभाषा हिंदी और अंतरराष्ट्रीय भाषा अंगरेजी का एक शिक्षक अनिवार्य है। देश का त्रिभाषा सूत्र भी यही कहता है। जिस बच्चे की जो भी मातृभाषा है, उसी माध्यम से उसकी आरंभिक शिक्षा अनिवार्य है। यदि तुर्की की तरह अपने देश में आजादी के साथ त्रिभाषा सूत्र लागू हो गया रहता, तो आज यहां भाषा की समस्या होती ही नहीं।

स्वतंत्रता के बाद इस देश ने 15 वर्षों तक अंगरेजी में कामकाज चलाते रहने और उसके बाद हिंदी अपनाने का संकल्प लिया था, लेकिन ऐसा नहीं हो सका, हमारी गुलामी की भाषा अंगरेजी ब्रिटीश साम्राज्य से भी अधिक वेग और उत्साह से जड़ जमाती जा रही है अंगरेजों के पिछलग्गू,

इंगलैड की मानस संतानों ने अंगरेजी को बनाये रखा है मैकाले की सोची–समझी चाल कामयाब रही कि अगरेजों से भारत मुक्त भले हो जाये, अंगरेजी और अंगरेजियत से स्वतंत्र नहीं हो सकता यही विडंबना है भारत की और यही है सौभाग्य है इंडिया क सभी राज्यों में राजभाषा के विवाद का कारण यही है कि भारतीयों का 'भारत' और 'इंडिया' में बांट दिया गया, अंगरेजों के बाद देश में काले अंगरेज राज करते रहे इसी से आज तक पूरे देश में त्रिभाषा सूत्र लागू नहीं है अपने देश के अनेक नागरिक राष्ट्रभाषा नहीं जानते कई बार राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राज्यपाल, न्यायाधीश आदि को भी राष्ट्र भाषा का ज्ञान नहीं होता यह भारत का सबसे बड़ा दुर्भाग्य रहा है देश में अधिकतर राज्यों का विभाजन भाषाओं के आधार पर हुआ है कुछ राज्य बहुभाषी है और वे एक से अधिक राजभाषा होने का संवैधानिक अधिकार अनुच्छेद 350 के तहत रखते है ऐसा ही राज्य झारखंड है, जहां नागपूरी पंचपरगनिया, खोरठा, कुड़माली, मुंडारी, संताली, हो, खड़िया, कुडुख, नौ प्रमुख भाषाएं हैं। नागवंशी शासन में नागपुरी लगभग 2000 वर्षों तक राजभाषा रही। अब प्रश्न है कि बांग्ला–ओड़िया को झारखण्ड में द्वितीय राजभाषा बनाने का औचित्य क्या है?

बांग्ला–ओड़िया रानी है, पर बंगाल और ओड़िशा की। क्या एक रानी एक साथ दो–दो राज्यों की रानी बन सकती है? दूसरी तरफ झारखण्डी भाषाओं को अब तक रानी बनने का अवसर मिला ही नहीं। अब मिलने जा रहा है, तो उसमें बांग्ला–ओड़िया उनकी सौत बनने के लिए क्यों बेताब हैं? उन्हें खुश होना चाहिए कि हमारी बहनें झारखंडी भाषाएं रानी नहीं, उपरानी बनने जा रही हैं। फिर भी उनके हक में हिस्सा मांग रही हैं, कैसी दीदियां हैं ये? बांग्ला–ओड़िया या अन्य कोई भाषा भाषी हों, उनके बच्चों को प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा मिलनी चाहिए, क्योंकि वह संवैधानिक प्रावधान है। हर राज्य की अपनी राजभाषा है। फिर कोई भाषा दूसरे राज्य में अधिकार लेने के लिए व्याकुल क्यों है? शासक, हमेशा गुलामी से आजाद हुए देश में गुलामी की भाषा, प्रशासन, कानून, विधि–विधान व संस्कृति को बनाये रखना चाहता है, ताकि आम देशज लोग अधिकार न जमा लें, इस देश में दो प्रतिशत अंगरेजी जाननेवाले हैं और यही शासक वर्ग के लोग हैं। ये लोग 98 प्रतिशत देशज जनता पर 64 वर्षों से शासन कर रहे हैं और आगे अनंत काल तक सत्ता में बने रहना चाहते हैं। इसी से ये अंगरेजी को आज भी सर्वोच्च

महत्व दे रह `हैं, जो बुल्के की भाषा में नौकरानी हैं। जिस घर में रानी–महारानी के स्थान पर नौकरानी को महत्व दिया जायेगा, उस घर–गृहस्थी की स्थिति क्या होगी? देश की भाषा नीति स्पष्ट नहीं है, शिक्षा तरह–तरह की है। सरकारी, बेसिक, संस्कृत आदि, पर नौकरी के लिए जो परीक्षाएं ली जाती हैं, उसमें सभी को एक समान माना जाता है, यह तो वैसा ही है, जैसे कछुआ, खरगोश, लोमड़ी, भालू, बाघ, चीता, शेर, हाथी सब को एक कतार में रख दौड़ प्रतियोगिता करा दी जाये। सभी को पता है कि ऐसी दौड़ में कौन जीतेगा? इसका मकसद है कि हमेशा अभिजात्य वर्ग शासन–प्रशसन में कायम रहे।

शासक वर्ग इस खेल में माहिर हैं, वह देशज लोगों को दो मछली दे देता है, पर तालाब नहीं बतलाता। दो पैसा दे देता है, पर बुद्धि नहीं बतलाता। आरक्षण का खेल भी यही है, जिन देशज लोगों को यह लाभ मिलता है, वे भी देशजों के न होकर उन्हीं शासकों की श्रेणी के हो जाते हैं और जैसा शासक कहते हैं, वैसा ही करते हैं, शासक वर्ग परदे के पीछे से सत्ता का समस्त सुख लूटता है और सामान्य देशज लोगों को मूर्ख बनाता है। हमें कहताहै कि मातृभाषा पढ़ो, अपनी संस्कृति बचाओ और खुद अंग्रेजी पढ़ता–लिखता है। हम झारखण्ड के राजभाषा विवाद में उलझे फंसे रहें और सत्ता का खेल खेलनेवाले इसका तमाशा देखता रहें। यह तमाशा बंद होना चाहिए। साभारः प्रभात खबर, 16.9.11

## 11. गैर झारखंडी भाषाओं का औचित्य क्या?– डॉ बी. पी. केसरी

राज्यपाल के अनुमोदन के बाद राज्य में 12 भाषाएं दूसरी राजभाषा बन जायेंगी राज्य गठन के 11साल बाद हुए इस फैसले से एक तरफ खुशी है, तो विवादों का दौर भी शुरू हो गया है। एक पक्ष बांग्ला और ओड़िया का विरोध कर रहा है, तो सभी नौ झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा बनाने का विधेयक पारित हुआ है इस पर आपकी प्रतिक्रिया क्या है?

इस निर्णय पर ता झारंखड़ी भाषा–संस्कृति से जुड़े संगठन ही अधि ाकारिक रूप से कुछ कहेंगे। मैं अपनी निजी राय बता सकता हूँ।

**निजी राय ही बतायें**

मुझे झारखंड के मूल निवासियों की चिंता है। सभी नौ मान्यता प्राप्त झारखंडी भाषाओं का निर्णय स्वागत योग्य है। इसके लिए सरकार बधाई की पात्र है। लेकिन बंग्ला और ओडिया को इसमें शामिल करने से झारखंड में विवाद पैदा हो सकता है। मैथिली, भोजपुरी, मगही, अंगिका भाषा –भाषी ऐसी मांग करते रहें हैं वे अपना दबाव बढायेंगे, संभव है कि राजस्थानी, पंजाबी, तमिल, तेलुगु मलयालम भी ऐसी मांग करें उनकी भी कुछ आबादी ता इधर है ही। तब झारखंडी भाषा के लोग क्या करेंगे? सरकार किस आध ाार पर उन्हें स्वीकार या इनकार करेगी? असली चिंता इसी बात की है? झारखंडी सरकार इन सभी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दरजा दे, तो आपको क्या आपत्ति है? आपकी मांग तो पूरी हो गयी न? पूरी कहां हुई? हमने कहा था कि सभी झारखंडी भाषाओं को राजभाषा का दरजा दिया जाये। बांग्ला को उसमें शामिल नहीं किया जाय, लेकिन ऐसा नहीं किया गया। ऊपर से ओड़िया भी लाद दी गयी। दरअसल झारखंड सरकार की कोई नीति स्पष्ट नहीं है। झारखंड के भविष्य का कोई सुचिंतित नक्शा भी उनके पास नहीं है। वे सिर्फ लोकलुभावन निर्णय ले रहे है। उन्हें अपनी कुरसी की अधिक चिंता है ऐसे में कोई स्थायी समाधान कैसे निकलेगा।

**उर्दू के बारे आपका क्या ख्याल है?**

उर्दू की बात दूसरी है। वह हिंदी की जुड़वा बहन है। हमने दिल्ली वार्ता के समय ही हिंदी को अपनी संपर्क भाषा मान लिया है, क्योंकि राज्य के लिए एक जरूरी शर्त मानी जाती है इसी वजह से राज्य पुर्नगठन आयोग ने झारंखड को राज्य का दर्जा देने में अपनी असमर्थता जाहिर की थी

तब भोजपुरी, मगही, मैथिली आदि के लिए झारखंड सरकार को क्या करना चाहिए?

इसका निर्णय तो सरकार का दायित्व है। वैसे अन्य राज्यों का उदाहरण सामने है। सफल सरकारें जो करती हैं, इनको भी करना चाहिए। झारखंड सरकार के रहनुमाओं को इतना तो अवश्य मालूम है कि झारखंड राज्य का गठन जिन शहीदों के सपनों को पूरा करने के लिए किया गया है, वे सपने क्या थे?

यह कोई छिपी बात नहीं है, बस आपको झारखंड आंदोलन को गौर से देखना है वह सपना था झारखंड को औपनिवेशिक शोषण –दमन से मुक्त करना। झारखंड के सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर शोषण–विहीन समरस समाज की पुनर्रचना करना। स्वायत्तता और पहचान को स्थापित करना झारखंडी जातीयता को गौरव के शिखर पर पहुंचाना, यहां की भाषा, साहित्य, संस्कृति, कला और इतिहास की रक्षा और विकास करना। और उन सब स्थितियों को दूर करना जिससे 'अखंड झारखंड' का वजूद मिटने के कगार पर पहुचा दिया गया है। सच यह है कि झारखंडी की पहचान को मिटाने के लिए ही औपनिवेशिक सत्ताओं ने इसे चार राज्यों मे विभाजित किया। यहां की अर्थ व्यवस्था, शासन प्रणााली, जीवन शैली , भाषा, साहित्य–संस्कृति पर चौतरफा हमले किये गये। हमारा पूरा आधुनिक इतिहास इसलिए विद्रोहों का आधुनिक इतिहास है। झारखंड राज्य इसी संघर्ष का प्रतिफल है। लेकिन हमारा दुर्भाग्य, अपना राज्य बनने के बाद भी हम अपने हक से वंचित होते जा रहे हैं। हम आज भी अपने घर में परदेसी है हमारी हालत रेड इंडियनों सी हो रही हैदेसी पूंजीपतियों के साथ अब विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियां भी हमें लूट रही है हम कोरपोरेट राजनीति के शिकार हो रहे हैं। विकसित जातीयता के लोग हम पर हावी होते जा रहे है। हमारा नेतृत्व बौना साबित हो रहा है। विस्थापन, पलायन दमन जारी है हमारी सरकार मायं माटी के अरमानों की उपेक्षा कर रही है।

**भाषा का इससे क्या संबंध है?**

इन दबावों मे हमारी भाषा –संस्कृतिक लुप्त होती जा रही है। पिछली कई सदियों से हम अपने अस्तित्व, अस्मिता और आबरू की रक्षा के लिए लड़ते आ रहे है। उस लड़ाई में किन भाषओं ने हमारा साथ दिया। बिरसा, सिद्धू– कानू, विश्वनाथ, गणपत राय, शेख भिखारी, गंगनारायण, रघुनाथ महतो, सिंगराय– बिदंराय मानकी, जतरा, तेलंगा खड़िया की भाषा क्या थी? क्या उस समय बांग्ला, ओड़िया, मैथिली, भोजपुरी भाषियों ने इसमें साथ दिया था? क्या झारखंडी भाषाओं के अलावा और किसी भाषा में यहां का दुख–दर्द, यहां की जद्दोजहद अभिव्यक्त हुई है? तब उन्हें किस आधार पर झारखंड की द्वितीय राजभाषा का दर्जा मिलना चाहिए? असली मुदा यह है।

**आप भावनाओं में वह रहे हैं**

नहीं यह भावना नहीं, ठोस हकीकत है, अभी लोग अपनी भाषाओं को इसलिए यहां द्वितीय राजभाषा बनाने का तिकड़म कर रहे हैं कि वे यहां की नियुक्तियों में अपनी जगह बना सकें। तब क्या किसी गैर झारखण्डी भाषा को झारखण्ड में किसी तरह की जगह मिलनी चाहिए? ऐसी बात नहीं है हम मातृभाषा के रूप में सभी भाषाओं को अधिक से अधिक मान–सम्मान देना चाहते हैं हमें किसी भाषा से परहेज नहीं है मातृभाषा में शिक्षा सबका संवैधानिक अधिकार है उसकी व्यवस्था सरकार को करनी चाहिए लेकिन राजभाषा का दरजा उसी या उन्हीं भाषाओं को मिलना, जो वहां की मिट्टी से जुड़ी रही हों, मैथिली, भोजपुरी, मगही, अंगिका को झारखंड के बजाय बिहार में दूसरी राजभाषा का दाजा मांगना चाहिए वहीं बांग्ला, ओड़िया को द्वितीय राजभाषा का दरजा तभी मिलना चाहिए जब इन्हें बोलनेवाले वृहत् (ग्रेटर) झांरखंड की मांग में हमारा साथ देने का वादा करे अगर वह ऐसा नहीं करते और सरकार उन्हें द्वितीय राजभाषा का दर्जा दे देती है, तब आप क्या करेगे? सरकार सच्चाई और जन सरोकारों से मुह चुरा कर ज्यादा दिन नहीं चल सकती यह जनतंत्र है इसमें हर नागरिक, समुदाय को मौलिक अधिकारों व न्यायसंगत मांगों के लिए संघर्ष करने का हक हैं।

साभार – प्रभात खबर, 5.9.11

**12. सभी 9 झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा घोषित करो।**

29 अगस्त को 11 बजे मातृभाषा के लिए झारखंड विधानसभा, बिरसा चौक पर महाजुटान एवं प्रदर्शन हुआ एवं कहा गया :–

बाबा तिलका ने नेतृत्व किया मलतो में
सिदो–कान्हू ने युद्ध किया संताली में
वीर बुधु–जतरा भगत ने आवाज दी कुडुख मे
पोटो सरदार हुंकारे 'हो' में
जोड़ी पंचैत बनाया तेलंगा ने खड़िया में
विश्वनाथ शाही, शेख भिखारी दहाड़े नागपुरी में
रघुनाथ महतो ने पुकारा कुड़माली–पंचपरगनिया में
खोरठा में ललकारा रामनाराण सिंह ने

और बिरसा ने उलगुलान किया मुंडारी में

जोहार! अर्जुन मुंडा सरकार ने बांग्ला भाषा को द्वितीय राजभाषा बनाने की मंजूरी दे दी है और विधान सभा के इस मानसून सत्र में उसे पारित करने जा रही है आजादी के पहले और बाद भी जल, जंगल, जमीन, भाषा–संस्कृति और अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही जनता की मांग को दरकिनार कर मुंडा सरकार ने झारखण्ड को तो शर्मसार किया ही है हमारे पुरखा शहीदों को भी बेइज्जत किया है, वोट बैंक और दिकू राजनीति के दबाव में सभी 9 झारखण्डी भाषाओं (हो, संताली, कुडुख, मुंडारी, खड़िया, पंचपरगनिया, कुड़माली, खोरठा व नागपुरी) को द्वितीय राजभाषा बनाने की बजाय पड़ोसी राज्य की राजभाषा बांग्ला को सम्मान देने जा रही है, यह फैसला झारखण्ड जनता को मंजूर नहीं है क्योंकि संविधान की भावना के अनुरूप राजभाषा बनने का हक सिर्फ झारखण्डी भाषाओं को है।

इसलिए झारखण्डी भाषाओं में प्राथमिक कक्षा से पढ़ाई शुरू करने, भाषाई शिक्षकों की अविलंब नियुक्ति करने, झारखण्डी भाषा–साहित्य अकादमी का गठन करने और राज्य की सभी नौकरियों में भाषा योग्यता को अनिवार्य बनाने के लिए, हमारी मातृभाषाओं को राजभाषा का दर्जा मिलना जरूरी है, भाषा से ही हमारी संस्कृति है, पहचान है, आजीविका, रोजगार और नौकरी है।

अपनी मातृभाषाओं के पक्ष में 29 अगस्त को 11 बजे झारखण्ड विध ानसभा, बिरसा चौक पर झारखण्ड लेखक, साहितयकार, कलाकार, बुद्धिजीवी, छात्र, नौजवान, विभिन्न सामाजिक व सांस्कृतिक संगठन के लोग महाजुटान एवं प्रदर्शन में शामिल हो रहे हैं, आप भी आइए, आदिवासी सदान सब मिलजुल कर पहुंचिए, अपने साथियों के साथ हुंकारते फुफकारते, मुट्ठियां लहराते और ढोल–नगाड़ा पीटते हुए, क्योंकि अभी नहीं तो कभी नहीं।

निवेदकः केन्द्रीय समिति, झारखण्डी भाषा साहित्य संस्कृति अखड़ा

## 13. झारखंड आंदोलन का प्राण रही हैं हमारी मातृभाषाएं–वंदना टेटे

भारत के पूर्वी इलाके के दो राज्यों, पश्चिम बंगाल और झारखंड में गत वर्ष मई और अगस्त में दो बड़े बदलाव हुए पश्चिम बंगाल में जहां 34 वर्ष बाद ममता की आंधी ने वाम मोरचा की सरकार को उखाड़ फेंका, वहीं झारखंडी संस्कृतिकर्मियों के संगठन 'अखड़ा' आठ सालों के अथक संघर्ष के

बाद राज्य में नौ आदिवासी एवं क्षेत्रीय भाषाओं की द्वितीय राजभाषा का हक लेने में सफल हुआ. झारखंड विधानसभा के मानसून सत्र के आखिरी दिन यानी तीन सितंबर को सरकार को उस संबंध में विधेयक पारित करते हुए 67 सालों से उपेक्षित झारखंडी भाषाओं को राज्य की द्वितीय राजभाषा के रूप में स्वीकार करना पड़ा. पश्चिम बंगाल के राजनीतिक बदलाव को मीडिया जगत में व्यापक जगह मिली, लेकिन झारखंड में देशज–आदिवासी भाषाओं के ऐतिहासिक भाषाई संघर्ष और सांस्कृतिक जीत की चर्चा नहीं हुइ. आजादी के सातवें दशक के अंत में घटित इन दोनों घटनाओं में से एक की प्रकृति तात्कालिक है और उसकी संभावनाएं मौजूदा राजनीतिक व्यवस्था की सीमाओं के पार जाने में अक्षम हैं, जबकि दूसरी परिघटना में इस सीमा के अतिक्रमण की पूरी संभावना निहित है. हम जानते हैं कि भाषाई अस्मिता का सवाल भारतीय गणराज्य को अहम सवाल रहा हैं भारत के संघीय ढांचे की नींव भाषाई पहचान पर ही रखी गयी और इस सवाल की चपेट में 1947 से ही कई भारतीय राज्य जूझते रहे हैं. विशेषकर वे राज्य जहां देशज–आदिवासी समुदायों की बहुलता है. झारखंड आंदोलन देश के बसे पुराने अस्मिता आंदोलनों में से एक है, जिसके दबाव के कारण ही संविधान में पांचवीं एवं छठी अनुसूची की परिकल्पना की गयी और भारतीय गणराज्य ने देश के आदिवासी हितों की सुरक्षा का संकल्प किया। परंतु व्यावहारिक अर्थों में प्राकृतिक संसाधनों के अबाध दोहन के लिए सभाी राज्यों ने मनमाने ढंग से इसकी व्याख्या की और आदिवासी समुदायों की अशिक्षा व संवैधानिक अज्ञानता का लाभ उठाते हुए 1949 में भारत द्वारा लिये गये संकल्प को बिलंबित रखा। यदा कदा संविधान के कुछ प्रावधानों को लागू किया भी तो उसके मूल में उनके राजनीतिक लाभ का हिस्सा ही प्रमुख था न कि आदिवासी राष्ट्रीयताओं की अस्मिता और उनके नैसर्गिक अधिकार का मानवीय मसला. बहरहाल, 2000 में गठित झारखंड में यह झारखंड आंदोलन का एक महत्वपूर्ण पड़ाव है. यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि संभावतः भारत के 28 में से यह पहला राज्य है, जहां इतनी संख्या में आदिवासी एवं देशज जनभाषाओं को द्वितीय राजभाषा दर्जा मिला है और वह भी तब, जब देश की 198 आदिवासी भाषाएं विलुप्ति के जबरदस्त संकट का सामना कर रही हों एक अन्य पहलु यह भी है कि वह सरकार अथवा राजनीतिक दलों के 'विवेक' नहीं वरन् आदिवासी–देशज जनता ने इसे संघर्ष के जरिये

हासिल किया है. जब हमने 2003 के नवंबर में अखड़ा की परिकल्पना रखी थी, तब बहुत उत्साहजनक समर्थन नहीं मिला था. आदिवासी–सदान के बीच का मतभेद एवं आदिवासी धर्मावलंबी और ईसाई आदिवासी में व्याप्त अंतरविरोधों के कारण एकबारगी तो ऐसा महसूस होने लगा था कि हम भाषायी और सांस्कृतिक आंदोलन का संगठित नहीं कर पायेंगे. संगठित कर भी लिया तो उसे बचा नहीं पायेंगें. फिर पढ़े–लिखे और नौकरीपेशा आदिवासी भी हमें बहुत समर्थन नहीं कर रहे थे. अंगरेजी, हिंदी, बांग्ला, ओड़िया, असमी भाषा माध्यम में शिक्षित और ऊँची– नौकरियों में पहुंचे झारखंडियों के लिए उनकी मातृभाषाओं का कोई मोल नहीं था। झारखण्ड में विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर कार्यरत एनजीओ के एजेंडे में तो खैर झारखण्डी भाषाओं के लिए कोई जगह ही नहीं थी। हमें अक्सर यह सुनना पड़ता था कि "आपलोग क्या भाषा वासा कर रहे हैं पर हम डटे रहे, क्योंकि हमें विश्वास था कि भाषा ही हमारी पहचान, अस्मिता, संस्कृति और इतिहास को बचाने वाली प्रमुख कड़ी है, यह हमारी सांस्कृतिक एकता का भी सबसे प्रमुख और केन्दगीय तत्व है। कोई भी भाषा सिर्फ गीत–संगीत और वाचिक अभिव्यक्ति भर नहीं होती, बल्कि उसमें एक पूरी परंपरा, संस्कृति और जीवनमूल्य समाहित होते हैं झारखण्ड आन्दोलन का प्राण रही है। हमारी मातृभाषाएं। इतिहास बताता है कि जेसे जेसे हमारी मातृभाषाओं के प्रति समाज का रूझान कम हुआ है, आन्दोलन कमजोर हुआ है, दलाल प्रवृतियां बढ़ी हैं और समूचा संघर्ष बिखराव का शिकार हुआ है।

सरकार द्वारा झारखण्डी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा का दर्जा दे देने के बाद अब नयी चुनौतियां सामने है। इन चुनौतियों के लिए भी हमें संघर्ष में जाना होगा। भाषा की भूमिका जल, जंगल और जमीन पर पूर्ण स्वामित्व अधिकार बहाली के बाद भी संघर्षशील बनी रहेगी। हम राजभाषा का अधि ाकार प्राप्त करने के लिए और उसे जमीन पर उतारने के लिए अभी बहुत कुछ रचना गढ़ना शेष है।

## मातृभाषा के संरक्षण के लिए क्या करे सरकार

1. झारखण्ड में केन्द्रीय झारखण्ड भाषा–साहित्य अकादमी का गठन अविलंब किया जाये, जिससे कि आदिवासी एवं क्षेत्रीय भाषा–साहित्य का संरक्षण व विकास हो सके। झारखण्डी लेखकों को समुचित सम्मान एवं आर्थिक

मदद मिल सके, पुरानी और नयी पांडुलिपियों व अप्राप्य पुस्तकों का प्रकाशन हो सके, सरकार से आग्रह है कि इस बजट सत्र के दौरान सदन में अकादमी गठन के संबंध में प्रस्ताव लाया जाये और अकादमी के लिए विशेष बजट का प्रावधान किया जाये।

2. विलुप्ति के कगार पर खड़े आदिम आदिवासियों (विरोहर, असुर, मालतो आदि) के भाषायी संरक्षण एवं विकास के लिए अलग से निकाय गठित हो, ताकि उनके संरक्षण के विशेष प्रयास शुरू किया जा सके।
3. आदिवासी एवं क्षेत्रीय भाषाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहन एवं वित्तीय समर्थन प्रदान करने के लिए विज्ञापन नीति बनायी जाये तथा नीति बनने तक सूचना एवं जनसंपर्क विभाग को अनिवार्यतः विज्ञापन उपलब्ध कराने हेतु विभागीय स्तर पर तत्काल दिशा–निर्देश जारी किया जाय।
4. आदिवासी एवं होड़ संवाद पत्रिकाओं का नियमित मासिक प्रकाशन अविलंब शुरू किया जाये।

साभारः प्रभात खबर, 18.2.12

(लेखिका झारखंडी भाषा–साहित्य संस्कृति अखड़ा की महासचिव हैं)

## 14. गौरवपूर्ण है अपनी मातृभाषा

मातृभाषा किसी भी इंसान के लिए संवाद का जरिया भर नहीं, बल्कि वह माध्यम भी है जिसके साथ उसकी समृद्ध विरासत जुड़ी होती है। इसलिए इसका संरक्षण भी जरूरी है। विश्व में विलुप्त होती भाषाओं के संरक्षण के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए यूनेस्को ने 21 फरवरी को अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस घोषित किया।

मातृभाषा को सीखने के लिए किसी कक्षा की जरूरत नहीं पड़ती, बल्कि यह उसे स्वंय ही अपने परिजनों द्वारा उपहार स्वरूप मिलती है जन्म लेने के बाद मानव जो प्रथम भाषा सीखता है, उसे उसकी मातृभाषा कहते है यह किसी भी व्यक्ति की सामाजिक एवं भाषाई पहचान भी होती है इसको बचाकर रखना बेहद आवश्यक है अगर हम भारत की बात करें तो हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा जरूर है, लेकिन इसके साथ ही हर क्षेत्र की अपनी कुछ भाषा भी है जिसे बचाकर रखना बेहद जरूरी है। फिर चाहे वह हिंदी हो, भोजपुरी या बांग्ला, हमें अपनी मातृभाषा पर गर्व होना चाहिए।

## यूनेस्को ने की शुरुआत

भाषा विशेषज्ञों का कहना है कि भाषाएं किसी भी संस्कृति का आईना होती हैं और एक भाषा की समाप्ति का अर्थ है कि एक पूरी सभ्यता और संस्कृति का नष्ट होना। आज विश्व में ऐसी कई भाषाएं और बोलियां है, जिनका संरक्षण आवश्यक है लोकभाषाओं का संरक्षण इसलिए जरूरी है कि ये हमारी विरासत का वह हिस्सा है, जिसमें जो कुछ सुंदर और श्रेष्ठ रचा जा रहा है, उसे सहेजकर रख जाना चाहिए। इसलिए यूनेस्को महासभा ने नंवबर 1999 में दुनिया की उन भाषाओं के संरक्षण और संवर्धन की ओर दुनिया का ध्यान आकर्षित करने के लिए साल 2000 से प्रति वर्ष 21 फरवरी को अंतर्राष्ट्रीय मातृभाष दिवस मानने का निश्चय किया जो कहीं न कहीं संकट में है।

## बांग्ला देश ने दिखायी राह

बांग्ला में 1952 में भाषा को लेकर एक आंदोलन चला था। इसमें हजारों लोगों ने अपनी जान दी थी। इस आंदोलन के बारे मे कहा जाता है कि इसी से बांग्लादेश की आजादी के आंदोलन की नींव पड़ी थी और भारत के सहयोग से नौ महीने तक चले मुक्ति संग्राम की परिणति पाकिस्तान से अलग होकर बांग्लादेश बनने के रूप में हुई थी। इस आंदोलन की शुरूआत तत्कालीन पाकिस्तान सरकार द्वारा देश के पूर्वी हिस्से पर भी राष्ट्रभाषा के रूप में उर्दू को थोपे जाने के विरोध से हुई थी, जहां बांग्ला और बंगाली बोलने वालों की अधिकता थी। अपनी भाषा के हक में 1952 में ढाका विश्वविद्यालय के छात्रों ने आंदोलन छेड़ दिया था। इसमें शहीद हुए प्रदर्शनकारियों की याद में 21 फरवरी के दिन को स्मृति दिवस के रुप में भी मनाया जाता है।

## फैक्ट फाइल

भारत मे मे 196 भाषाएं लुप्त होने को है संयुक्त राष्ट्र के आंकड़ों के अनुसार दुनियाभर मे ऐसी सैकड़ों भाषाएं है तो विलुप्त होने के कगार पर है।

जो भारत के बाद दूसरे नंबर पर अमेरिका में स्थिति काफी चिंताजनक

है, जहां ऐसी 192 भाषाएं दम तोड़ती नजर आ रही है। एक अनुमान के अनुसार दुनियाभर में 6900 भाषाएं बोली जाती हैं, लेकिन इनमें से 2500 भाषाओं को चिंताजनक स्थिति वाली भाषाओं की सूची मे रखा गया है।

## विलुप्त होती भाषाओं को बचाने की कोशिश– विवेक शुक्ला

दुनियाभर में 199 भाषाओं ऐसी है, जिन्हें बोलने वालों की संख्या एक दर्जन लोगों से भी कम है इनमें कैरम भी एक ऐसी ही भाषा है जिसे उक्रेन में मात्र छह लोग ही बोलते हैं ओकलाहामा में विचिता भी एक ऐसी भाषा है जिसे देश में मात्र दस लोग ही बोलते है इंडोनेशिया में इसी प्रकार लेंगिलू बोलने वाले केवल चार लोग बचे हैं।

बाल प्रभात 18–2–2912 से साभार

## अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस

दुर्भाग्यवश पिछले साल भारतीय प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह की बांग्लादेश की यात्रा के दौरान उनके कार्यक्रम  में शहीद मीनर के लिए जगह नहीं रखी गयी. काश! वे शहीद मीनार जाते तो अच्छा होता. यह मीनार याद दिलाती है, उन मातृभाषा के चाहने वालों की जिन पर 21 फरवरी, 1952 को पाकिस्तान की पुलिस ने अंधाधुंध गोलियां चलायी थीं उस गोलाबारी में ढाका विश्वविद्यालय के दर्जनों छात्र शहीद हो गये थे. उसी मातृभाषा के प्रति श्रद्धा, प्रेम और प्राणों की आहुति देने के जज्बे को 21 फरवरी को साठ साल पूरे हो रहे हैं. इस दिन को 'अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस' के रूप में सारी दुनिया मनाती है. दरअसल, 21 फरवरी, 1952 को तत्कालीन पाकिस्तान के शहर ढाका मे बांग्ला भाषियों पर उर्दू थोपने के पाकिस्तान सरकार के फैसले के विरोध में छात्रों का शांतिपूर्ण प्रदर्शन चल रहा था। सरकार के फैसले के विरोध में ढाका विश्वविद्यालय के छात्र नारेबाजी कर रहे थे।

दरअसल, बांग्ला बनाम उर्दू के बीच के संघर्ष का चरम था। 21 फरवरी 1952 का मनहूस दिन. ढाका विश्वविद्यालय परिसर के ठीक बाहर बड़ी संख्या में छात्र प्रदर्शन करने के लिए एकत्र हुए थे. उसी दौरान न जाने क्यों, हथियारों से लैस सुरक्षाकर्मियों ने उन निहत्थे छात्रों पर गोलियां बरसानी चालू कर दीं, जिसमें दर्जनों छात्रों की मौत हो गयी. इस नृशंस

सामूहिक हत्याकांड से दुनिया सन्न रह गयी. लेकिन, पाकिस्तान सरकार ने किसी तरह का अपराधबोध को प्रर्दशन नहीं किया. अपनी मातृभाषा को लेकर इस तरह के प्रेम और जज्बे की दूसरी मिसाल मिलना मुश्किल है. बांग्लाभाषा के चाहने वालें ने मारे गये छात्रों की याद में घटनास्थल पर स्मारक बनाया तो उसे ध्वस्त कर दिया गया. इस घटना के बाद पाकिस्तान के शासक पूर्वी पाकिस्तान से हर स्तर पर भेदभाव करने लगे. उसकी जब प्रतिक्रिया हुई, तो जिन्ना और मुस्लिम लीग की टू नेशन थ्योरी धूल में मिल गयी. हालांकि ,पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) और देश के शेष भागों की आबादी लगभग समान थी, पर पाकिस्तान के शासकों ने पूर्वी पाकिस्तान के साथ हर स्तर पर भेदभाव करना शुरू कर दिया था. इस भेदभाव का चरम तब सामने आया जब मोहम्मद अली जिन्ना ने अपने ढाका दौरे के दौरान बार–बार घोषणा की कि नये देश की राष्ट्रभाषा उर्दू होगी।

जिन्ना 19 मार्च, 1948 को ढाका पहुंचे. उनका वहां पर गर्मजोशी के साथ स्वागत हुआ. पूर्वी पाकिस्तान के आवाम को उम्मीद थी कि कि वे उनके और उनके क्षेत्र के हक में कुछ अहम घोषणाएं करेंगे. जिन्ना ने 21 मार्च को ढाका के खचाखच भरे रेसकोर्स मैदान में लिए एक सार्वजनिक सभा को संबोधित किया. वहां पर पाकिस्तान के गवर्नर जनरल जिन्ना ने घोषणा कर दी कि पाकिस्तान की राष्ट्रभाषा उर्दू ही रहेगी. उन्होंने अपने चिर–परिचित आदेशात्मक स्वर में कहा कि सिर्फ उर्दू ही पाकिस्तान की राष्ट्रभाषा रहेगी. जो इससे अलग तरीके से सोचते है, वे मुसलमानों के लिए बने मुल्क के शत्रु हैं, घातक परिणाम आ सकते हैं। पाकिस्तान के पूर्वी हिस्से में उर्दू को थोपे जाने का विरोध हो ही रहा था। इस घटना के कारण जनता में निराशा और गुस्से की लहर दौड़ गई।

प्रभात खबर से साभार 21 फरवरी 2012

## 15. झारखण्ड की भाषाओं को दूसरी राजभाषा घोषित करो

नौ आदिवासी भाषाओं के लिए विभिन्न संगठनों ने विधानसभा घेरा

**इन भाषाओं का सवाल**

**संथाली, हो, कुडुख, मुंडारी, खड़िया, पंचपरगनिया, कुड़माली,**

## खोरठा और नागपुरी

नगाड़ों की गूंज एवं आक्रोशपूर्ण नारों के साथ सोमवार को झारखण्डी संगठनों ने विधानसभा का घेराव किया। सांस्कृतिक संस्था अखड़ा के आह्वान पर जुटे प्रदेश के कोने कोने से आए लेखकों, कलाकारों और छात्र–युवाओं ने कहा कि किसी भी कीमत पर राजभाषा के रूप में वे बाहरी भाषा को स्वीकार नहीं करेंगे। बिरसा चौक पर हुए इस महाजुटान में विधायक द्वय बंधु तिर्की और गीता कोड़ा ने कहा कि क्षेत्रीय भाषा संस्कृति की उपेक्षा दुर्भाग्यजनक है। भाषा से ही झारखण्डी संस्कृति की पहचान है। द्वितीय राजभाषा बनने का हक सिर्फ झारखण्डी भाषाओं को है।

लोयला कॉलेज छात्रावास से शुरू विरोध मार्च बिरसा चौक पहुंच कर घेराव और सभा में बदल गया। इस अवसर पर वक्ताओं ने कहा कि सरकार का निर्णय राजनीतिक षड़यंत्र है। वे इस साजिश के खिलाफ लगातार लड़ेंगे। किसी दूसरे प्रदेश में बाहरी भाषा को राजभाषा का दर्जा प्राप्त नहीं हैं, फिर झारखण्ड में ऐसा क्यों? घेराव में यह ऐलान किया गया कि अगर मुंडा सरकार ने झारखण्डी भाषाओं को राजभाषा का दर्जा नहीं दिया तो उग्र आंदोलन होगा। प्रदर्शन को बी पी केशरी, दयामनी बारला, ईश्वरी प्रसाद, मुकुंद नायक, मनपूरन नायक, मधु मंसूरी हंसमुख, लाल रणविजय नाथ शाहदेव, आरती कुजूर, त्रिवेणीनाथ साहू, ग्लैडसन डुंगडुंग, गिरिधारी राम गौंझू, जेरोम जेराल्ड कुजूर, सिकरादास तिर्की, श्यामसुंदर महतो, आकाश खूंटी आदि ने संबोधित किया। दैनिक भास्कर, 30–8–11

## 16. 11 और भाषाएं बनीं द्वितीय राजभाषा

राज्य मंत्रिपरिषद ने मंगलवार को बांग्ला, ओड़िया और नौ क्षेत्रीय जनजातीय भाषाओं संताली, मुंडारी, हो, खड़िया, कुडुख, कुरमाली, खोरठा, नागपुरी, पंचपरगनिया को द्वितीय राजभाषा का दरजा देने का फैसला किया। इससे संबंधित विधेयक दो सितंबर को विधानसभा में पेश किया जायेगा। उर्दू पहले से ही राज्य का द्वितीय राजभाषा है। अब कुल 12 भाषाओं को यह दरजा प्राप्त है।

प्रभात खबर 31–8–2011 से साभार

**बंगला को द्वितीय राज भाषा बनाने का प्रस्ताव वापस लो**

**बंगला भाषा को द्वितीय राजभाषा बनाना आत्मघाती होगा। जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं का राजभाषा का दर्जा दो।**

**साथियो,**

झारखंड सरकार के मंत्रिमंडल ने बंगला को द्वितीय राजभाषा बनाने का प्रस्ताव झारखंड विधान –सभा में पेश करने का निर्णय लिया है। इस प्रस्ताव से यह संकेत मिलता है कि मंत्रिमंडल के सदस्यों को झारखंड के इतिहास –भूगोल और भाषा –सहित्य–संस्कृति से कोई सरोकार नहीं है। तभी तो ऐसा निर्णय लेने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता। लेकिन उन्हें इतना तो मालूम होगा कि बंगला भाषा के दबाव में झारखंड को पुरूलिया, बांकुड़ा और मिदनापुर जिला से बंचित होना पड़ा। हालांकि आज भी वहां झारखंडियों की संख्या अधिक है। संभव है बंगला का द्वितीय राजभाषा बनाने से धनबाद और पूर्वी सिंहभूम भी पध बंगाल को दान करना पड़े। कुछ वोटों के लोभ में इस खतरे को नजरअंदाज करना आत्मघाती नहीं तो क्या है।

झारखंड सरकार के इस बात का एहसास होना चाहिए कि भाषा का मामला बहुत संव्रदनशील होता है इसके अर्न्तसूत्र क्षेत्र के अस्तित्व ,अस्मिता और आबरू से जुड़े होते है झारखंड के कवि, लेखक, कलाकरों ने इसके लिए बहुत कुछ अर्पित किया है। पिछले 112 वर्षो से झारखंड के मूल निवासी (आदिवासी और सदान) अपनी भाषा, साहित्य, संस्कृति की रक्षा और विकास की मांग करते आ रहे हैं। 1899 ईध में बर्थलोमी ने संत कोलंबस कॉलेज की स्थापना के समय इसकी मांग की थी। इस समय बिरसा आंदोलन अपने चरम पर था। झारखंड आंदोलन के बल पर आज जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं की पढ़ाई स्नातकोत्तर स्तर तक हो रही है। सुखद है कि हमारे पूर्व शिक्षा मंत्री बंधु तिर्की ने इन भाषाओं को आगे बढ़ाने में अच्छी भूमिका निभायी। उन्होने बंगला को द्वितीय राजभाषा बनाने के प्रस्ताव को विरोध किया है। हम उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं। हमारा अनुरोध है कि झारखंड के राजनेता, कार्यकर्ता, संस्कृतिकर्मी हमें इसी तरह का सहयोग करें। बंगला भाषा का झारखंड के दुख–दर्दों में, झारखंड आंदोलन में क्या योगदान हैं? इसका भी मूल्यांकन होना चाहिए। क्या उसमें दो–चार रचनाएं भी ऐसी हैं जो झारखंडी भाषाओं को द्वितीय राजभाषा के विशेषाधिकार से क्यों बंचित करना चाहिए? इन बिन्दुओं पर भी हमारे रहनुमाओं को ध्यान

देना चाहिए। वैसे हम सभी भाषाओं का आदर करते हैं। मतृभाषा का सम्मान होना ही चाहिए। उन्हें पठन–पाठन की सुविधा मिलनी ही चाहिए। यह उनका संवैधानिक अधिकार है हमें भी सुविधाएं मिलनी चाहिए। इसलिए हमारी मांगे हैं कि:

1. **बंगला भाषा को द्वितीय राजभाषा बनाने का प्रस्ताव वापस लिया जाय ।**

2. **इसके बदले झारखंड की मान्यता प्राप्त जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओ– संथाली, मुंडारी, हो, खड़िया, कुडूख, नागपुरी, कुड़माली, खोरठा और, पंचपरगनिया को झारखंड में राजभाषा का दर्जा दिया जाय। हमारे संविधान में इसका प्रावधान है।**

झारखंड के सभी शुभचितकों से हमारा निवेदन है कि वे इन मांगो के समर्थन में पुरजे कार्यक्रम बनायें और संघर्ष करें। यह हमारे लिए जीवन–मरण का प्रश्न है।

## 17. झारखण्ड आदिवासी कुड़मी समाज का स्मार पत्र

माननीय मुख्य मंत्री,
अर्जुन मुण्डा जी झारखंड रांची
एवं माननीय उप–मंत्री श्री सुदेश कुमार महतो जी
झारखंड रांची।

**विषय: झारखंडी भाषाओं (संथाली, मुण्डारी, कुडुख, कुडुमाली, खड़िया हो नागपुरी, खोरठी एवं पंचपरगनिया) को द्वितीय राज भाषा का दर्जा मिले न कि बंगला भाषा को, के संबंध में।**

महाशय,

प्रभात खबंर 17 अगस्त 2011 के मध्यम से ज्ञात हुआ है कि माननीय मुख्य मंत्री अर्जुन मुण्डा ने बंगला व संथाली को द्वितीय राज भाषा का दर्जा देने संबंधित बिल के प्रारूप पर अपनी मंजूरी दी है। इस संबंध में कहना है कि –

1. संथाली को द्वितीय राज भाषा का दर्जा मिले, यह हर्ष की बात हैं। लेकिन झारखण्ड के अन्य भाषाओं को भी द्वितीय राज भाषा का दर्जा

मिलना चाहिए न कि बंगला भाषा को।

2. झारखण्डी भाषाएं ही झारखण्ड की संस्कृति की धारक एवं वाहक रही है, न कि बंगला भाषा।

3. झारखण्डी संस्कृति की झारखण्ड राज्य के निर्माण का आधार रहा है भाषा और संस्कृति एक दूसरे के अभिन्न अंग है।

4. बंगला भाषियों का झारखण्ड राज्य के गठन में हमेशा से ही विद्वेष की भावना रही है। यदि नहीं रहता तो बंगला भाषा भाषी के पांच–पांच सांसदों ने राज्य गठन का विरोध नहीं करते ।

5. बंगला भाषा को द्वितीय राज भाषा को दर्जा देकर सरकार जनसाधारण को कौन सा संदेश देना चाहती है। यह तो साफ जाहिर हो रहा है, कि झारखण्डी भाषा संस्कृति के कुर्बानी पर भोट की राजनीति हो रही है।

6. 1956 में बंगला भाषियों ने वर्तमान पुरूलिया जिला को बंगला भाषी क्षेत्र कह कर हमसे छिन लिया। एक ओर झाखण्ड नामधारी पाटियां बृहत झारखण्ड का मांग करते है, निश्चित तौर पर यह मांग जायज है, किन्तु दूसरी ओर सरकार बंगला भाषा को द्वितीय राज्य भाषा का दर्जा देने को एड़ी –चोटी एक की हुई है। यह कैसा विडम्बाना है। बृहद झारखण्ड का कल्पना तो पूरा होगा नहीं कहीं सीमावर्ती इलाका पूर्वी सिंहभूम, सराईकेला खरसॉवा एवं पांचपरगना का क्षेत्र भविष्य में बंगाल में न चला जया।

अतः सरकार से हमारी मांग है कि झारखण्ड की नौ भाषाओं को ही द्वितीय राज भाषा का दर्जा दिया जाय। झारखण्डी भाषा सांस्कृति के रक्षा एवं विकास से ही झारखण्डियों का मान–सम्मान बढ़ेगा, झारखण्ड बचेगा।

तिथिः– 25.8.2011

भवदीय<br>
डॉ शशि भूषण महतो (काड़वार)<br>
महासचिव<br>
झारखण्ड आदिवासी कुडमी समाज

# संदर्भ ग्रंथ


1. भारत की भाषा समस्याएँ: राम विलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली– 1978

   भाषा और समाज : राम विलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली / पटना, 1977
2. भारत के प्राचीन भाषा परिवार और हिन्दी– राम विलास शर्मा, खंड 3 राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली / पटना, 1987
3. प्राचीन विश्व इतिहास का परिचय – फ्योदोर कोरोविकन– पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड 1982
4. मध्य कालीन भारत– विद्याधर महाजन – एस चन्द एण्ड कम्पनी लि, नई दिल्ली, 1997
5. भारतीय संविधान के मूल सिद्धान्त – गांधीजी राय, भारती भवन, पटना 2009
6. स्वतंत्र भारत : जातीय तथा भाषाई समस्या– बोरीस क्लूयेव, प्रगति प्रकाशन, मास्को, 1986
7. मुण्डारी शब्दकोष : डॉ. मन मसीह मुण्डू, कैथोलिक प्रेस, राँची 1995
8. योग मनोविज्ञान – श्री श्री आनन्दमूर्ति, आनन्द नगर, जिला पुरुलिया (प बंगाल) 2009
9. वर्ण विज्ञान – श्री प्रभात रंजन सरकार, आनन्दमार्ग प्रकाशन, कलकत्ता–39, 1984
10. राजभाषा भारती – जनवरी–मार्च, 2010, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली–3
11. भक्त समाज : फरवरी–2013, संपादक, आचार्य संतोषानन्द अवधूत, मयुर विहार, नई दिल्ली – 96
12. भाषाधार राज्यों के लिए संघर्ष में कम्युनिस्टों की भूमिका – अवतार सिंह मल्होत्रा – भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी, प्रकाशन, दिसम्बर 1985

# फोटो गैलरी

## झारखंडी भाषा को लेकर विधानसभा का घेराव 29 अगस्त को

रांची | झारखंड के बुद्धिजीवियों, लेखकों, साहित्यकारों, कलाकारों और विभिन्न छात्र व सामाजिक संगठनों ने बांग्ला को द्वितीय राजभाषा बनाने का पुरजोर विरोध करते हुए सभी 9 झारखंडी भाषाओं को अविलंब द्वितीय राजभाषा का दर्जा देने की मांग की है। इस सिलसिले में सोमवार को जोहार सहिया कार्यालय में हुई झारखंडी भाषा साहित्य संस्कृति अखड़ा द्वारा आयोजित बैठक में शामिल संगठनों ने भाषा के अधिकार [illegible]

## झारखंड की भाषाओं को दूसरी राजभाषा घोषित करो

नौ आदिवासी भाषाओं के लिए विभिन्न संगठनों ने विधानसभा घेरा

**इन भाषाओं का सवाल**

संताली, हो, कुड़ुख, मुंडारी, खड़िया, पंचपरगनिया, कुरमाली, खोरठा और नागपुरी

भास्कर न्यूज | रांची

नगाड़े की गूंज एवं आक्रोश पूर्ण नारों के साथ सोमवार को झारखंडी संगठनों ने विधानसभा का घेराव किया। सांस्कृतिक संस्था अखड़ा के आह्वान पर जुटे प्रदेश के कोने-कोने से आए लेखकों, कलाकारों और [illegible]



विधानसभा के सामने प्रदर्शन करते विधायक बंधु तिर्की और [illegible]

नौ झारखंडी भाषाओं को राजभाषा बनाने की मांग

## कल है महाजुटान

भास्कर न्यूज, रांची

[illegible]

## जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं को दो राजभाषा का दरजा

## बुद्धिजीवी उतरे सड़क पर

**झारखंडी कलाकार लेखक, साहित्यकार व भाषाविदों ने अलबर्ट एक्का चौक पर नगाड़ा बजाया**

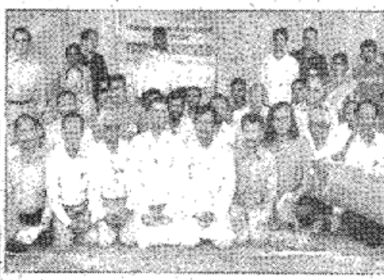
संवाददाता ● रांची

[illegible]



[illegible]

## ...भाषाओं को दें राजभाषा का दरजा



[illegible] फोटो: [illegible]

**झारखंडी भाषा संस्कृति परिषद के बैनर तले कई संगठनों के लोग धरना पर बैठे**

...क्षेत्रीय भाषाओं को राजभाषा का दर्जा देने की मांग कर रहे थे. धरना में शामिल लोग बांग्ला को द्वितीय राजभाषा बनाने के प्रस्ताव को वापस लेने की मांग कर रहे थे. आज इन मांगों से संबंधित ज्ञापन मुख्यमंत्री एवं राज्यपाल को सौंपा गया.

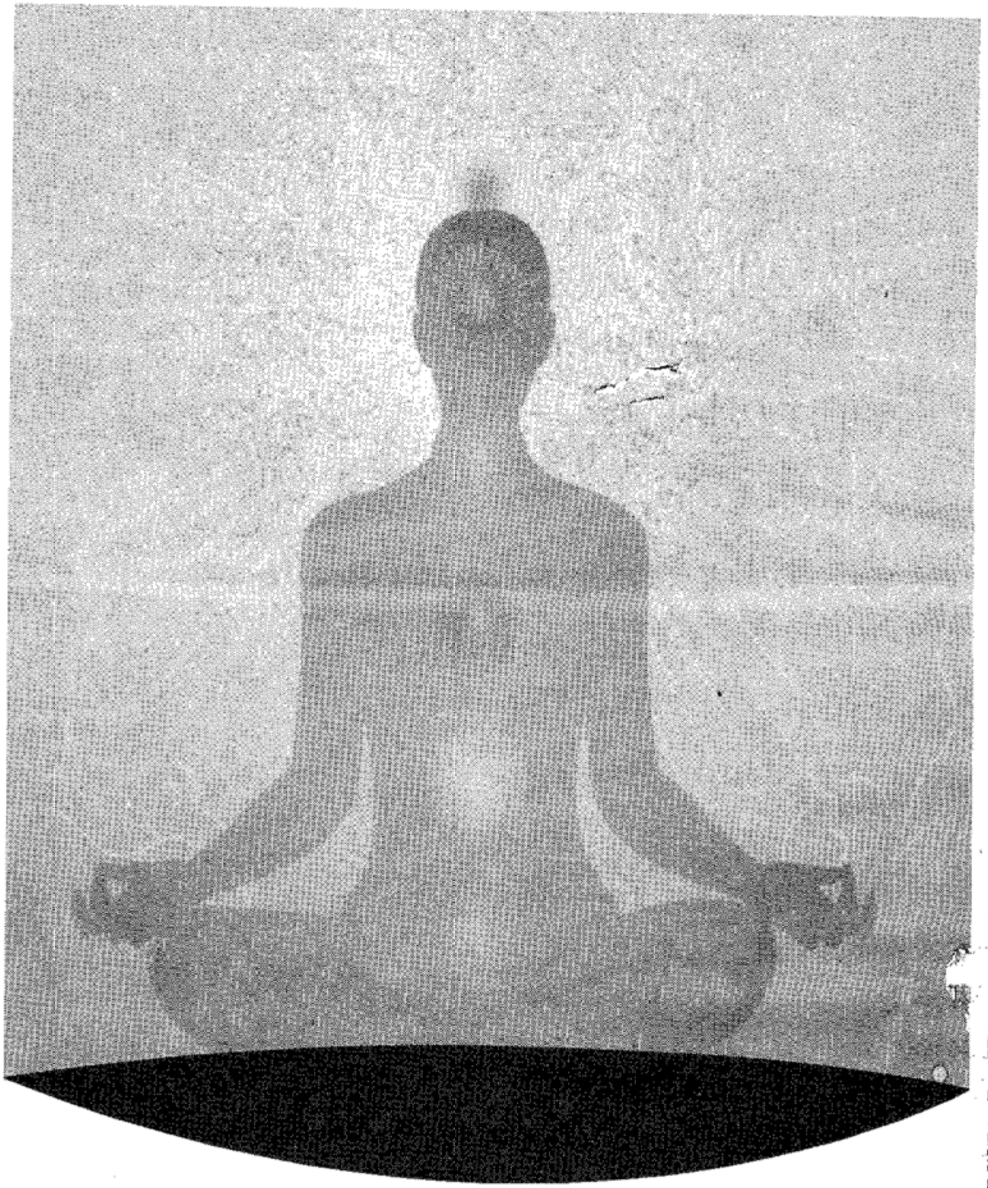
## जोरशोर से उठने लगी है झारखंडी भाषाओं को राजभाषा बनाने की मांग

अखड़ा के सदस्यों ने नगाड़ा पीट कर किया आंदोलन का शंखनाद



अलबर्ट एक्का चौक पर नगाड़ा पीटते अखड़ा के सदस्य। फोटो : भास्कर

# फोटो गैलरी



# आध्यात्मिक देह में चक्रों की स्थिति

# झारखण्डी समाज और मातृभाषा



झारखंड में अपनी मातृभाषा के प्रति लोगों में सम्मानजनक रूझान नहीं है। हिन्दी और अंग्रेजी का चलन अधिक है। लोग अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम में पढ़ा रहे हैं। भ्रमवश हिन्दी को ही अपनी मातृभाषा समझते हैं। यह स्थिति सभी जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं के बोलने वालों की रही है।

यह सही है कि मातृभाषाओं में रोजगार के अवसरों की कमी है। रोजगार परक मानसिकता के कारण जो भाषा लोगों की आजीविका अर्जन करने में सहायक नहीं है उसे झारखण्डी लोग पढ़ने में रूचि नहीं ले रहे हैं। सरकार का दायित्व है कि जनजातीय व क्षेत्रीय भाषाओं के लिए विशेष व्यवस्था करे और प्राइमरी से लेकर उच्चतर स्तर तक इसकी पढ़ाई हो, साथ में यहां की नौकरियों के लिए स्थानीय भाषाओं की अनिवार्यता सुनिश्चित की जाए।

सदियों की हीन भावना के कारण झारखण्डी लोग अपनी मातृभाषा बोलने में कतराते और लजाते रहे हैं। बोलने वाले जब तक अपनी मातृभाषा के प्रति लाजुक रहेंगे तो भाषा कैसे बचेगी? हमारा जो जनजातीय खून है लाजुक अर्थात लजाने वाला है। मातृभाषा बोलने में लाज लगती है। हम अपना प्रदर्शन करने से पीछे हटते हैं, लोगों के सामने बोलने से बचते हैं। उदाहरण के लिए कुड़मी के घर बंगाली या हिन्दी भाषी आया तो उसके साथ कुड़माली न बोलकर बंगला या हिन्दी में बात करते हैं। हकीकत है, उन्हें न सही बंगला न सही हिन्दी बोलने आता है। ऐसा ही अन्य भाषायी समुदायों के साथ भी है। जो भाषा नहीं जानते हैं उसे बोलेंगे और ऐसा करते हुए उन्हें लाज नहीं आयेगी, विचित्र स्थिति है!

अपनी मातृभाषा को बाहर के अलावा असली खतरा समाज के अन्दर से भी है। समाज का एक बड़ा हिस्सा अपनी मातृभाषा के प्रति अवमानना नहीं तो उपेक्षा की भावना जरूर रखता है। जो समझते हैं कि सरकार हमारी मातृभाषा को स्थापित करेगी, तो मैं कहूंगा - वे भ्रम में हैं। सरकार को वोट चाहिए अतः वह तुष्टिकरण की नीति पर चलेगी ही। मातृभाषा प्रेमियों को अपने बलबूते पर और अपने खून पसीने से अपनी अपनी मातृभाषाओं को स्थापित करना पड़ेगा।

स्व. बसंत कुमार मेहता<br>
अध्यक्ष, आदिवासी कुड़मी समाज,<br>
झारखण्ड, बंगाल, ओड़िसा

नोट : स्व. बसंत बाबु के प्रकाशित लेखों से संकलित